

शिक्षा और विशेष शिक्षा में विकास

Developments in Education and Special Education



विशेष शिक्षा विभाग, शिक्षा शास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

अध्यन बर्ड एवं वलशेषज सडलतल

1. डु. डीगर सलंह डुसुवलन, नलदेशक,शलकुषलशलसुतुर वलदुडलशलखल--अधुडकुष
2. डु. कुशल शरुडल, सह डुरलधुडलडक डु शकुंतलल डलशुरल डुरलषुतुरलड डुनरुवलस वलशुववलदुडललड, लखनऊ -सदसुड
3. डु वलनूद कुन, हेड ऑड सुडेशल एजुकेशन. ,डुरलषुतुरलड दृषुतल दलवुडलंगजन सशकुतलकरण संसुथलन, देहरलदून -सदसुड
- 4 . शुरी संजड कुडलर, डु शकुंतलल डलशुरल डुरलषुतुरलड डुनरुवलस वलशुववलदुडललड, लखनऊ - सदसुड
- 5 .शुरीडतुी डलवनल धूनी, सहल. डुरल., वलशेष शलकुषल वलडलग, उडुवलवल - सदसुड
6. शुरी तरुण नेगी, सहल. डुरल., वलशेष शलकुषल वलडलग, उडुवलवल - सदसुड
7. शुरीडतुी रशुड सकसेनल सहल. डुरल., वलशेष शलकुषल वलडलग, उडुवलवल - सदसुड
8. शुरीडतुी डूजल शरुडल, सहल. डुरल., वलशेष शलकुषल वलडलग, उडुवलवल - सदसुड
9. डु डुडुीतल खलती, सहल. डुरल., वलशेष शलकुषल वलडलग, उडुवलवल - सदसुड
10. डु सलदुधलरुथ कुडलर डुखरललल, सहलडक डुरलधुडलडक., वलशेष शलकुषल वलडलग -संडुऑक

करुडकुरड सडनुवडक डु -सलदुधलरुथ कुडलर डुखरललल डलथुडकुरड सडुडलदन शुरीडतुी-डलवनल धूनी

कुरड संखुडल	ईकलई लेखक	ईकलई संखुडल
1	डु डुडुीतल खलती	1,2
2	शुरीडतुी डलवनल धूनी	3
3	शुरीडतुी रशुड सकसेनल	4 ,5
4	तरुण नेगी	6 ,7
5	अंकलतल सलंह	8 ,9
6	डु सलदुधलरुथ कुडलर डुखरललल	10
7	नलशल रलणल	11 ,12
8	शुरीडतुी डूजल शरुडल	13 ,14
9	शुरीडतुी डलवनल धूनी	15

काँपीराईट : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष : सितम्बर 2025

प्रथम संस्करण :2025

प्रकाशक : निदेशालय,अध्ययन एवं प्रकाशन

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139,नैनीताल

मुद्रक : EXCEL PAPER CONVERTERS HALDWANI QTY-22 PRINT YEAR-2025

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी विवाद के लिए सम्बन्धित लेखक जिम्मेदार होगा । किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा ।

इकाई- 1

शिक्षा के लक्ष्य : शिक्षा सामाजिक उप-प्रणाली के रूप में, शिक्षा के आयाम: निवेश के रूप में शिक्षा, शिक्षा और मानव अधिकार, नैतिक विकास के लिए शिक्षा, उद्देश्यपूर्ण और सतत प्रक्रिया के रूप में शिक्षा, संस्कृति के लिए शिक्षा: सामाजिक संस्कृति में परिवर्तन

1.1.0 प्रस्तावना

1.2.0 उद्देश्य

1.3.0 शिक्षा के लक्ष्य (Aim of Education)

1.4.0 शिक्षा सामाजिक उप-प्रणाली के रूप में (Education as social sub system)

1.5.0 शिक्षा के आयाम (Dimensions of Education)

1.6.0 निवेश के रूप में शिक्षा (Education as investments)

1.7.0 शिक्षा और मानव अधिकार (education and human rights)

अपनी उन्नति जानिए

1.8.0 नैतिक विकास के लिए शिक्षा (education for ethical developments)

1.9.0 उद्देश्यपूर्ण और सतत प्रक्रिया के रूप में शिक्षा (Education as purposive and continuous process)

1.10.0 संस्कृति के लिए शिक्षा (Education for culture)

1.11.0 सामाजिक संस्कृति में परिवर्तन (socio culture changes)

अपनी उन्नति जानिए

1.12.0 सारांश

1.13.0 शब्दावली

1.15.0 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.16.0 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.17.0 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मानव प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है, जो अपने साथ कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर पैदा होता है। शिक्षा के द्वारा मानव की इन जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। यह कार्य मानव के जन्म से ही उसके परिवार द्वारा अनौपचारिक रूप से तत्पश्चात विद्यालय भेजकर

औपचारिक रूप से प्रारम्भ कर दिया जाता है। विद्यालय के साथ-साथ उसे परिवार एवं समुदाय में भी कुछ-न कुछ सिखाया जाता रहा है और सीखने - सिखाने का यह क्रम विद्यालय छोड़ने के बाद भी चलता रहता है और जीवन भर चलता है। अपने वास्तविक अर्थ में किसी समाज में सदैव चलने वाली सीखने सिखाने की यह सप्रयोजन प्रक्रिया ही शिक्षा है। इस इकाई में आप शिक्षा के विभिन्न अर्थ यथा- शाब्दिक, संकुचित, व्यापक, विश्लेषणात्मक, समग्र एवं व्यापक अर्थ से अवगत हो सकेंगे साथ ही इन अर्थ को परिभाषित करने वाले विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में जान सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप:-

- शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा के अर्थ को भारतीय दृष्टिकोण एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण के आधार पर स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा के सामान्य, मानवीय, सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन में कार्य को परिभाषित कर सकेंगे।
- शिक्षा के विषय विस्तार के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों को समझ सकेंगे।

1.3 शिक्षा के लक्ष्य/Aim of Education

शिक्षा का अर्थ- शिक्षा को आग्ल भाषा में एजुकेशन (EDUCATION) कहते हैं एजुकेशन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के निम्नलिखित शब्दों से मानी जाती है।

शब्द	अर्थ
1. एडूकेटम (Educatum)	शिक्षित करना/ To trains act of meaning or training
2. एडूसीयर (Educere)	विकसित करना अथवा निकलना/ To lead out
3. एडूकेयर (Educare)	आगे बढ़ाना , बाहर निकलना, अथवा विकसित करना/ To educate, to bring up, to raise

लैटिन भाषा के एडूकेटम (Educatum) शब्द का अर्थ होता है शिक्षित करना। एडूकेटम (Educatum) और एजुकेटम शब्द उसी भाषा के (E) तथा ड्यूको (Duco) शब्दों से मिलकर बना है। ए का अर्थ है अन्दर से और ड्यूको का अर्थ है आगे बढ़ाना। इसलिए एजुकेशन शब्द का अर्थ हुआ, बच्चे की आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करना। अब प्रश्न यह उठता है कि प्रत्येक बालक के अन्दर जन्म से ही कुछ जन्मजात प्रवृत्तियां होती हैं जैसे-जैसे बालक वातावरण के संपर्क में आता है, वैसे-वैसे उसकी जन्मजात शक्तियां बाहर की ओर प्रकट होती हैं। एडूकेटम(Educatum) के अतिरिक्त उक्त दोनों शब्दों एडूसीयर (Educere) और एडूकेयर (Educare) का अर्थ भी यही होता है एडूसीयर

(Educere) का अर्थ होता है - निकलना तथा एडूकेयर (Educare) का अर्थ होता है - आगे बढ़ना, बाहर निकलना, अथवा विकसित करना।

शिक्षा का व्यापक अर्थ- प्रत्येक प्राणी जन्म के बाद सर्वप्रथम पहला पाठ मां की गोद में पढ़ता है तत्पश्चात अपने घरेलू वातावरण तथा आस-पास के पर्यावरण जिसके भी संपर्क में आता है, उससे कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। इस सीखने व अनुभव का परिणाम यह होता है कि वह धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित करता है। इस प्रकार वस्तुतः सीखने-सिखाने की यह प्रक्रिया जीवनपर्यन्त चलती रहती है। शिक्षा के व्यापक अर्थ को प्रकट करने में कहा जा सकता है कि शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते हैं।

विद्वान जे.एस. मैकेन्जी के शब्दों में:-व्यापक दृष्टि से शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है और जीवन के प्रत्येक अनुभव के द्वारा इसका विकास होता है।

शिक्षा का संकुचित अर्थ:-शिक्षा के संकुचित या सीमित अर्थ के अनुसार शिक्षा का अभिप्राय, बालक को विद्यालय में दी जाने वाली शिक्षा से है। दूसरे शब्दों में संकुचित अर्थ में शिक्षा किसी समाज में एक निश्चित समय तथा निश्चित स्थान(विद्यालय) में सुनियोजित ढंग से चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है, और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते हैं।

विद्वान जे० एस० मैकेन्जी के अनुसार- “संकुचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय, हमारी शक्तियों के विकास एवं उन्नति के लिए चेतनापूर्वक किए गये किसी भी प्रयास से हो सकता है”।

1.3.1 शिक्षा का विश्लेषणात्मक व दार्शनिक अर्थ:-

शिक्षा का विश्लेषणात्मक अर्थ:- शिक्षा के विश्लेषणात्मक अर्थ को स्पष्ट करने के लिए मूल भूमिका दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिकों ने अदा की है और इन सबने शिक्षा का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर इनके द्वारा उद्धाटित तथ्यों के आधार पर शिक्षा के स्वरूप को समझने एवं परिभाषित करने का प्रयत्न किया है।

शिक्षा का दार्शनिक अर्थ:-दार्शनिकों की दृष्टि से शिक्षा मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन होती है। चूंकि मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य के सम्बन्ध में दार्शनिकों में मतैक्य नहीं है अतः निम्नलिखित विभिन्न परिभाषायें शिक्षा के सम्बन्ध में दी गयी हैं।

जगतगुरु शंकराचार्य की दृष्टि से -

सः विद्या या विमुक्तये (शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाये)

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार -

“मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो शरीर व आत्मा दोनों के महत्व को स्वीकार करते हैं तथा कहते हैं कि “शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करता है जिसके कि वे योग्य है”।

युगपुरुष महात्मा गाँधी ने शरीर, मन और आत्मा, तीनों के विकास पर समान रूप से बल देते हुये कहा है – “शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है”।

प्रकृतिवादी दार्शनिक हरबर्ट स्पेन्सर के अनुसार -

“शिक्षा का अर्थ अन्तःशक्तियों का बाह्य जीवन से समन्वय स्थापित करना है”।

प्रयोजनवादी मनुष्य को सामाजिक प्राणी मानते हैं और यह मानते हैं कि शिक्षा के द्वारा मनुष्य में वर्तमान में अनुकूलन करने एवं भविष्य के समाज का निर्माण करने की क्षमता का विकास करना चाहिए।

प्रयोजनवादी दार्शनिक जॉन ड्यूवी के शब्दों में— “शिक्षा व्यक्ति की उन सब योग्यताओं का विकास है, जो उसमें अपने पर्यावरण पर नियन्त्रण रखने तथा अपनी सम्भावनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य प्रदान करे”।

1.3.2 शिक्षा का समाजशास्त्रीय व राजनैतिक अर्थ –

शिक्षा का समाजशास्त्रीय अर्थ:- समाजशास्त्रियों के मतानुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया मानी जाती है क्योंकि इनके अनुसार समाज के अस्तित्व पर ही शिक्षा का अस्तित्व निर्भर करता है इस दृष्टि से शिक्षा की निम्नलिखित परिभाषायें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं यथा -

1. शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण एवं समायोजनपूर्ण प्रक्रिया है।
2. शिक्षा एक विकासात्मक प्रक्रिया है।
3. शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है।
4. शिक्षा एक द्विध्रुवीय प्रक्रिया है।
5. शिक्षा एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है।
6. शिक्षा सांस्कृतिकरण है।
7. शिक्षा एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है।

शिक्षा का राजनैतिक अर्थ - शिक्षा के राजनैतिक दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा, राष्ट्र निर्माण का साधन है। राष्ट्र का निर्माण, श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण से ही संभव है जिसके लिए शिक्षा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह व्यक्ति के अन्दर राष्ट्रप्रेम उत्पन्न करे।

1.3.3 शिक्षा का आर्थिक व मनोवैज्ञानिक अर्थ –

शिक्षा का आर्थिक अर्थ – अर्थशास्त्रियों के विचार में शिक्षा एक उत्पादक प्रक्रिया है जिसमें शिक्षा का वह आर्थिक निवेश है जिसके द्वारा व्यक्ति में उत्पादन एवं संगठन के कौशलों का विकास किया जाता है और इस प्रकार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाती है और इनका आर्थिक विकास किया जाता है।

शिक्षा का मनोवैज्ञानिक अर्थ - मनोवैज्ञानिकों के विचार में मनुष्य एक मनोशारीरिक प्राणी है जो जन्म से कुछ शक्तियां लेकर पैदा होता है। अतः शिक्षा के द्वारा सर्वप्रथम इन शक्तियों का विकास होना चाहिए। जर्मन शिक्षाशास्त्री पैस्टालॉजी के शब्दों में इसे निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है “शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, समरस एवं प्रगतिशील विकास है। फ्रोबेल के अनुसार – “शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करता है। ”

1.3.4 शिक्षा का समग्र एवं वास्तविक अर्थ-

शिक्षा के विषय में दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों और वैज्ञानिकों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हैं। उपरोक्त सभी दृष्टिकोणों से शिक्षा की प्रकृति के विषय में ये तथ्य उजागर होते हैं कि शिक्षा एक सोद्देश्य, अविरल, गतिशील, व विकास की प्रक्रिया है। उपर्युक्त दी गई सभी परिभाषाओं को यदि सार रूप में प्रस्तुत किया जाये तो इसे निम्न रूप में परिभाषित करना चाहिए - “शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान, एवं कला-कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते हैं। ”

शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारण करने की आवश्यकता-

शिक्षा के उद्देश्यों के बिना हम शिक्षा की प्रक्रिया का संचालन सुचारू रूप से नहीं कर सकते हैं। संसार में जितनी भी क्रियाएँ होती हैं वे सभी लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होती हैं जब हम किसी भी क्रिया का आरम्भ करते हैं तो उस क्रिया का अंत भी सुनिश्चित होता है। डीवी ने शिक्षा के उद्देश्यों को लिखते हुए लिखा है कि “शिक्षा का अपना कोई उद्देश्य नहीं होता है बालकों , अध्यापकों अथवा अध्यापकों का ही उद्देश्य होता है शिक्षा का कोई लक्ष्य नहीं।”

लक्ष्य शब्द, लक्षित से बना है जिसका अर्थ होता है जो लक्षित है अर्थात् जो किसी कार्य या क्रिया का मार्गदर्शन करता है। शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया शिक्षा के लक्ष्यों पर आधारित है अतः शिक्षा के लक्ष्यों का निर्धारण एक महत्वपूर्ण कार्य है लक्ष्य विहीन शिक्षा की वर्तमान समय में कल्पना भी नहीं की जा सकती है। लक्ष्य, उद्देश्यों से कहीं अधिक व्यापक दीर्घगामी व विस्तृत होते हैं। इसका स्वरूप विषयनिष्ठ होता है। इस कारण इनका मूल्यांकन भी वस्तुनिष्ठता के साथ के साथ करना संभव नहीं है। लक्ष्य दूरगामी व

व्यापक प्राप्ति है जिनकी ओर से समाज तथा उसके सदस्य अग्रसित होते हैं। लक्ष्यों के सम्बन्ध में अंत में कहा जा सकता है कि शिक्षा का कोई एक अंतिम लक्ष्य नहीं होता है और न होना चाहिए। “ There is no one final aims of education Subordinating the lesser aims”

भारतीय संदर्भ में वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षा के लक्ष्यों की चर्चा करे तो प्रतान्त्रिक समाज के लिए शिक्षा के निम्नवत लक्ष्य निर्धारित किये जा सकते हैं –

1. लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास करना- राष्ट्र की मूलभूत इकाई नागरिक होता है। जैसा स्वरूप हम राष्ट्र को प्रदान करना चाहते हैं उसी के आधार पर हमारे राष्ट्र के नागरिक तैयार होंगे। प्रजातंत्र की रक्षा के लिए शिक्षा का लक्ष्य स्वतंत्रता, समानता, भातृत्व, के जीवन मूल्यों को निर्मित करना होगा जिससे कुशल नागरिक तैयार हो सके।

2. सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, मूल्यों का विकास करना – वर्तमान समय में लक्ष्य की प्राप्ति महत्वपूर्ण है। समाज को तोड़ने वाली शक्तियाँ अधिक सक्रीय रहती हैं। अतः शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। सामाजिक संवेदनशीलता का विकास करना। व्यक्ति का व्यक्ति से जुड़ाव तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास तभी संभव होगा जब व्यक्ति के ज्ञान एवं भावना का सामंजस्य होगा।

डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार- “ शिक्षा यदि हृदय और आत्मा की अवहेलना करती है तो उसे पूर्ण नहीं माना जा सकता।”

3. राष्ट्रीय एकीकरण का लक्ष्य- वर्तमान समय में स्वकेंद्रित चिंतन का विकास हुआ है। जिसके कारण राष्ट्र की एकता को खतरा उत्पन्न हो गया है। अपने निहित स्वार्थों से ऊपर उठकर राष्ट्र कल्याण के लिए चिंतन करना तथा सम्पूर्ण राष्ट्र को एक इकाई समझना, इस समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है जिसकी प्राप्ति शिक्षा द्वारा ही संभव है।

4. नेतृत्व क्षमता का विकास – माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा कि “वर्तमान लोकतान्त्रिक भारत में शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यक्तियों में नेतृत्व के गुणों का विकास करना है।” दूरदर्शी, सुविचारी, सज्जन, निःस्वार्थी एवं मानव कल्याण को सर्वोपरि स्थान देने वाले कुशल नेतृत्व को विकसित करना शिक्षा का लक्ष्य वर्तमान समय में महत्वपूर्ण है।

5. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना- अंधविश्वासों को त्यागकर वैज्ञानिक आधार पर विश्वास निर्मित करना राष्ट्र के विकास के लिए आवश्यक है डॉ० दौलत सिंह कोठारी के अनुसार “आज उच्च विज्ञान और घोर निर्धनता तथा दुःख साथ-साथ दिखाई देते हैं ऐसा इसलिए होता है क्योंकि ज्ञान के प्रति अनुराग, जनहित के प्रति अनुराग से भिन्न हो गया है। ये दोनों ही अपने स्थान से गिर गए हैं अब हमारी आवश्यकता और वस्तुतः प्रत्येक देश की आवश्यकता यह है कि हम, शिक्षा और उत्पादकता को विवेक के साथ अपनाएं और जन-कल्याण को ध्यान में रखें। ”

6. आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को सही दिशा प्रदान करना- “तीव्रता से परिवर्तित हो रहे समाज में राष्ट्र के प्राचीन मूल्यों एवं संस्कृति का संरक्षण करते हुए नवीन को आत्मसात करना होगा। आधुनिकीकरण को अपनाते समय यह ध्यान देना होगा कि वह मूल भारतीय संस्कारों पर आघात करने वाला न हो। शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी है कि वह पश्चिमीकरण की प्रवृत्ति को रोके तथा आधुनिकीकरण को सही दिशा प्रदान करे।”

7. उत्पादकता में वृद्धि करना- राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादकों को बढ़ाना होगा। शिक्षा द्वारा तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी ज्ञान का विकास कर राष्ट्र के प्रति व्यक्ति आय को उच्च किया जा सकता है तथा उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

8. भारतीय होने के भावना पर गर्व होना- लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा प्रदान करने के लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए कहा था। “भारत में मेरा अंग्रेजी देने का यह लक्ष्य है कि जो भारतीय विद्यार्थी स्कूलों एवं कालेजों से पढ़कर निकलें वे शक्ति सूरत से तो हिन्दुस्तानी रहे परन्तु बौद्धिक दृष्टि से अंग्रेजियत के भक्त बन जाये” और उसके द्वारा इस उद्देश्य को लेकर प्रदान की गयी शिक्षा का परिणाम यह हुआ कि एक बड़ा बौद्धिक वर्ग भारतीय होने की भावना से हीनत्व बोध से ग्रसित होने लगा। वर्तमान समय में शिक्षा का यह उद्देश्य है कि हर व्यक्ति भारतीय होने के गर्व को स्थापित करे। इस विषय में मैक्समूलर ने यह कहा था कि “यदि मुझे पूरे संसार में से उस देश को चुनने को कहा जाये, जहाँ प्रकृति ने सबसे अधिक संपदा, शक्ति और सौन्दर्य बिखेरा है जिसके कुछ भाग ते ऐसे हैं मनु धरती पर स्वर्ग उतर आया हो तो मैं निसंदेह भारत को चुनूँगा”

1.3.1 शिक्षा सामाजिक उप-प्रणाली के रूप में (Education as social sub system)

शिक्षा सामाजिक प्रगति और उसमें सुधार की एक मुख्य विधि है। इसके माध्यम से समाज द्वारा अपने शाधनों और श्रोतों का निर्माण कर सकता है। प्रत्येक समाज की अपनी एक संस्कृति होती है तथा संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलते रहती है संस्कृति का अस्तित्व बना रहता है समाज की संस्कृति के अनुसार ही आचरण करना ही समाजीकरण कहलाता है। समाज के सदस्यों का अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किसी एनी के संपर्क में आना तथा अंतःक्रिया करना एक सामाजिक क्रिया का ही परिणाम है। प्रत्येक समाज की एक अपनी उपव्यवस्था होती है इस उपव्यवस्था की जानकारी समाज के प्रत्येक सदस्य को होना अनिवार्य होता है। प्रत्येक व्यक्ति समाज के प्रारम्भिक ईकाई के रूप में होता है तथा शिक्षा के द्वारा समाजीकरण का कार्य करता है, शिक्षा एक उपप्रणाली के रूप में कार्य करता है। यह विद्यालय तथा अन्य शिक्षण संस्थानों में सम्पन्न होता है विद्यालय को लघु समाज का स्वरूप प्रदान करने विद्यालय में जो उप-सामाजिक व्यवस्था बनती हो वह समग्र सामाजिक व्यवस्था का प्रतिमान होती है अतः वास्तव में सामाजिक व्यवस्था में जो गुण एवं विशेषताएं होती हैं वे सभी प्रतिनिधित्व विद्यालय में भी देखने को मिलती हैं। विद्यालयों की स्थापना समाज अपनी

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है। इसलिए समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का विद्यालय के प्रत्येक पहलू पर गहरा प्रभाव डालता है। विद्यालय जीवन पर सामाजिक व्यवस्था के प्रभावों के कारण ही विद्यालय को एक छोटा समाज (A MINIATURE SOCIETY) कहा जाता है। इसे उप-सामाजिक व्यवस्था कहने का भी यही तात्पर्य है।

हुमायूँ कबीर के अनुसार- “विद्यालय समुदाय की अभिव्यक्ति है”।

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार- “विद्यालय बड़े समाज का एक छोटा समुदाय है”।

जॉन ड्यूवी के शब्दों में- “विद्यालय एक सरलीकृत तथा विस्तृत किया गया वातावरण है जहाँ जीवन के गुणों तथा व्यवसायों की शिक्षा बालक के विकास के उद्देश्य से दी जताई है”

शिक्षा की प्रक्रिया में तीन अंग परस्पर मिलकर उसे उपव्यवस्था का स्वरूप प्रदान करता है शिक्षा उपव्यवस्था के रूप में अनेक कार्यों का संपादन करती है।

1. संस्कृति का हस्तांतरण।
2. मूल्यों का समावेशन करना।
3. सामाजिक समायोजन
4. व्यक्तित्व निर्माण
5. समाज के समान व्यवहार प्रतिमान प्रदान करना।

समाज मानवीय सम्बन्धों का एक जाल है और सामाजिक सम्बन्ध इस समाज के आधार है। समाज के लोगो के मध्य अंतःक्रिया से सामाजिक सम्बन्धों से स्थापना होती है। विद्यालय और समाज में घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योंकि दोनों ही शिक्षा के महत्वपूर्ण अभिकरण है, एक औपचारिक तथा दूसरा अनौपचारिक शाधन है। विद्यालयों की स्थापना समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है विद्यालयी जीवन पर सामाजिक व्यवस्था के प्रभावों के कारण ही विद्यालय को एक छोटा समाज कहा जाता है। इसे उप-सामाजिक व्यवस्था(A SUB- SOCIO SYSTEM) कहने का भी यही तात्पर्य है। विद्यालय को एक उप-सामाजिक व्यवस्था के रूप में समझने से पहले सामाजिक प्रणाली(SOCIO SYSTEM)को समझना आवश्यक है।

पारसन का सामाजिक-प्रणाली का सिद्धांत (Parsons Thoery of socio system) अमेरिका के प्रमुख समाज-शास्त्री पारसन ने सामाजिक प्रणाली का संप्रत्यय दिया था। पारसन ने इस सिद्धान्त का प्रारंभ क्रिया के माध्यम से किया। उसने संसार को सामाजिक, भौतिक तथा सांस्कृतिक लक्ष्यों के द्वारा तीन भागों में विभाजित किया है।

1. सामाजिक संरचना(Social Structure) सामाजिक संरचना का निर्माण समाज के सदस्यों के आंतरिक सम्बन्धों के फलस्वरूप होता है। सामाजिक संरचना का विश्लेषण करते समय हम यह देखते हैं

कि सामाजिक संस्थाएं किस पर से एक दूसरे को प्रभावित करती है इस प्रकार के शाधन, तरीके, कार्य प्रणालियां एवं व्यावहारिक जिन्हें मानव-समूह मान्यता प्रदान करता है, सामाजिक संस्थाएं कहलाती हैं वस्तुतः ये सामाजिक संस्थाएं किसी भी सामाजिक व्यवस्था का आधार है। कुछ सामाजिक संस्थाएं जाति, श्रेणी या वर्ग, धर्म, कक्षा शिक्षण, अनुशासन प्रणाली, राजनीति, सांस्कृतिक केंद्र आदि है।

2. सांस्कृतिक प्रणालियां (culture system)-किसी समाज या समुदाय की वे संगठित और परस्पर जुड़ी हुई मान्यताएँ, मूल्य, परंपराएँ, रीति-रिवाज, भाषा, धर्म, कला, संगीत, और सामाजिक आचार-विचार जिनके माध्यम से वह समाज अपने जीवन को संचालित करता है। सांस्कृतिक प्रणाली एक ऐसा ढाँचा है जिसमें समाज के सभी सांस्कृतिक तत्व एक-दूसरे से जुड़े होते हैं और मिलकर एक सामाजिक जीवनशैली बनाते हैं। यह प्रणाली यह तय करती है कि समाज के लोग कैसे सोचते हैं, कैसे व्यवहार करते हैं और किस प्रकार के सामाजिक नियमों का पालन करते हैं।

3. व्यक्तित्व प्रणालियाँ- सामाजिक व्यवस्था का अध्ययन व्यक्तित्व-प्रणाली के अध्ययन के बिना अधूरा रह जाता है। व्यक्तित्व-प्रणाली के अंतर्गत एक्टर (actor), ऑल्टर (alter) की संवेदनाओं (emotional) प्रेरणा (motivation), ज्ञानवृद्धि (orientation), मूल्य (value) आदि का अध्ययन किया जाता है।

एक उप-सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था का केवल एक भाग ही नहीं परन्तु उसका एक क्रॉससेक्शन भी है प्रायः जब हम एक कमल ककड़ी में पांच या छः छिद्र दिखाई देते हैं, इसी प्रकार से यदि हम कोई भी सामाजिक व्यवस्था को लें तो उसकी उप-सामाजिक व्यवस्था भी वैसी ही होगी क्योंकि वह मुख सामाजिक व्यवस्था का एक छोटा सा भाग है। सामाजिक प्रणाली में कई में कई उप-प्रणालियाँ सम्मिलित होती है विद्यालय शिक्षा की और कक्षा, विद्यालय की एक उप-सामाजिक व्यवस्था है।

उप सामाजिक व्यवस्था की समस्याएं (problem of a sub-social system)- पारसन के अनुसार किसी भी सामाजिक व्यवस्था को निम्नलिखित चार समस्याओं से गुजरना पड़ता है।

1. अनुकूलत /adaptation
2. उद्देश्य-प्राप्ति/goal-attainment
3. एकता /integrity
4. विलंब होने के कारण को दूर करना

1.4 शिक्षा के आयाम /Dimensions of Education

शिक्षा एक व्यापक प्रक्रिया है जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में सहायक होती है। यह केवल पाठ्यक्रम या पुस्तक ज्ञान तक सीमित नहीं होती, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्ति की क्षमताओं को विकसित करती है। शिक्षा शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक और व्यावसायिक विकास को लक्षित करती है। शारीरिक रूप से शिक्षा व्यक्ति को स्वस्थ रहने, अनुशासित जीवन जीने और कार्यक्षम बनने की प्रेरणा देती है। मानसिक और बौद्धिक

आयाम व्यक्ति की सोचने, समझने, विश्लेषण करने और समस्याओं को हल करने की क्षमता को विकसित करते हैं। शिक्षा भावनात्मक स्थिरता लाकर आत्म-विश्वास, सहानुभूति और आत्म-नियंत्रण को बढ़ाती है, जिससे व्यक्ति अपनी भावनाओं को संतुलित रख पाता है। सामाजिक दृष्टि से शिक्षा व्यक्ति को समाज में मिल-जुलकर रहने, सहयोग करने और अपने कर्तव्यों का पालन करने योग्य बनाती है। नैतिक आयाम के अंतर्गत शिक्षा सत्य, अहिंसा, ईमानदारी, न्याय जैसे मूल्यों को जीवन में उतारने की प्रेरणा देती है। आध्यात्मिक विकास के माध्यम से शिक्षा व्यक्ति को आत्मबोध, आत्मानुशासन और जीवन के गूढ़ रहस्यों को समझने की क्षमता प्रदान करती है। इसके साथ ही, शिक्षा व्यक्ति को व्यावसायिक और तकनीकी ज्ञान देकर आजीविका कमाने योग्य बनाती है, जिससे वह आत्मनिर्भर और उत्पादक नागरिक बन सके। शिक्षा का सांस्कृतिक आयाम व्यक्ति को अपनी संस्कृति, परंपरा और विरासत से जोड़ता है तथा उसमें विविधता में एकता की भावना का विकास करता है। इस प्रकार शिक्षा के ये विविध आयाम मिलकर एक संतुलित, सशक्त और जिम्मेदार नागरिक के निर्माण में सहायक होते हैं, जो न केवल स्वयं के लिए बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी उपयोगी सिद्ध होता है।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार- "शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के भीतर निहित पूर्णता को विकसित करना है। यह न केवल ज्ञान का संप्रेषण है, बल्कि जीवन के विभिन्न पहलुओं-जैसे नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक और आध्यात्मिक का समन्वित विकास भी है।"

इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि शिक्षा के आयाम केवल अकादमिक ज्ञान तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह एक समग्र प्रक्रिया है जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करती है।

शिक्षा के आयाम की आवश्यकता-

- 1.सम्पूर्ण विकास में सहायक- शिक्षा का उद्देश्य केवल बुद्धि का विकास नहीं है, बल्कि शरीर, मन, भावना और आत्मा – सभी का संतुलित विकास करना है। इसके लिए विभिन्न आयामों की जरूरत होती है।
- 2.समायोजन हेतु- शिक्षा का सामाजिक आयाम व्यक्ति को समाज के साथ तालमेल बिठाना, सहयोग करना और जिम्मेदार नागरिक बनना सिखाता है। यह सामाजिक जीवन के लिए अनिवार्य है।
3. नैतिक मूल्यों के विकास के लिए- केवल ज्ञान होने से व्यक्ति अच्छा नहीं बनता। नैतिक और आध्यात्मिक आयाम उसे ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, करुणा, सत्य और सेवा जैसे गुणों से युक्त करते हैं।
4. आजीविका अर्जन हेतु- व्यावसायिक और आर्थिक आयाम व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने हेतु आवश्यक हैं। ये आयाम रोजगारोन्मुखी शिक्षा प्रदान करते हैं, जिससे व्यक्ति समाज के लिए उपयोगी बन सके।

5. संवेगात्मक विकास के लिए - संवेगात्मक आयाम व्यक्ति को अपने भीतर की भावनाओं को समझने, नियंत्रित करने और सकारात्मक दिशा में उपयोग करने की क्षमता देता है।
6. वैश्विक नागरिकता के लिए- सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आयाम व्यक्ति को विविधताओं का सम्मान करना, सहिष्णुता रखना और वैश्विक सोच अपनाना सिखाते हैं।
7. रचनात्मकता और नवाचार के लिए- बौद्धिक आयाम व्यक्ति में कल्पनाशीलता, तर्क, विश्लेषण और नवाचार की भावना को विकसित करता है, जो आज के तेज़ी से बदलते युग में अत्यंत आवश्यक है।

1.4.1 निवेश के रूप में शिक्षा (Education as investments)

सन् 1950 से पूर्व निवेश के सभी सिद्धान्त इस पक्ष में थे कि यदि निवेश भौतिक पूँजी जैसे भवन, फैक्टरी और मशीन आदि में किया जाए तो आय अधिक होगी क्योंकि इससे माल तथा सेवाओं का उत्पादन ज्यादा होगा, किन्तु 1950 के दशक के अन्त में और 1960 के दशक में अमेरिका में कुछ अर्थशास्त्रियों ने शिक्षा और अर्थशास्त्र के मध्य सम्बन्ध स्थापित करके यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से हम ज्ञान और कौशल जैसे परिसम्पत्ति की रचना कर सकते हैं जो ठीक उसी प्रकार जो मानव उत्पादन शक्ति को बढ़ाने का कार्य करती है जिस प्रकार नई मशीन में निवेश से उसकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है उन्होंने अवलोकन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला कि शिक्षा का खर्च एक प्रकार का निवेश माना जा सकता है जिससे भविष्य में सुनिश्चित लाभ होगा।

बोमेने 1968 ने मानव पूँजी में निवेश के सैद्धान्तिक और अनुभवजन्य कार्यों की समीक्षा करके इसे “आर्थिक विचारधारा में मानव निवेश क्रान्ति” का नाम दिया। आर्थिक विचारधारा के इतिहास में विशिष्ट नामों के कार्यों का सर्वेक्षण करने से पक्ष सामने आया कि अधिकांश अर्थशास्त्री निम्न तीन कारणों से इस बात से सहमत हैं कि मानव को पूँजी के रूप में सम्मिलित करना चाहिए।

1. मनुष्य के लालन-पालन एवं शिक्षा में जो लागत आती है वही वास्तविक लागत है।
2. मानव श्रम का उत्पादन राष्ट्रीय सम्पत्ति को बढ़ाता है।
3. मानव पर किया गया वह खर्च जो इसकी उत्पादकता को बढ़ाता है, यदि अन्य बातें पूर्ववत् रहे तो राष्ट्रीय सम्पत्ति को बढ़ाता है।

शिक्षा में निवेश की अवधारणा (Concept of Investment in Education)

स्पष्ट है कि मानव-पूँजी के अर्थशास्त्र की जाँच केवल औपचारिक शिक्षा के प्रभाव तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें अंतः कार्य प्रशिक्षण और कुशलता प्राप्त करने के तरीकों तथा वैज्ञानिक शोध और तकनीकी विकास को भी शामिल किया गया है। दूसरे शब्दों में आप कह सकते हैं कि देश, समाज एवं परिवार के विकास की प्रत्येक प्रविधि शिक्षा के विकास पर आधारित है और शिक्षा ही

विविध प्रकार की उत्पादकता को जन्म देने में सार्थक है अतः शिक्षा पर किया गया पूँजीगत व्यय ही निवेश के रूप में जाना जाता है।

प्रायः मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक जो गतिविधियाँ सीखने की प्रक्रिया में सहायक होती है उनकी एक विस्तृत सूची बनाना असम्भव है। लेकिन औपचारिक शिक्षा और प्रशिक्षण का महत्व अनुपम है क्योंकि केवल यह ही एक संगठित सीखने की प्रक्रिया है और सरलता से इसका व्यापक प्रशिक्षण दिया जा सकता है। यहाँ औपचारिक शिक्षा के संगठित रूप से अभिप्राय यह है कि वह सम्पूर्ण प्राप्त जो निर्धारित ज्ञान को प्रदान करने के लिए व्यवस्थित तरीके से किये जाते हैं। शिक्षा प्रदान करने का यह कार्य मान्यता प्राप्त व्यावसायिक शिक्षकों के समूह द्वारा नियमित ढंग से किया जाता है। यह कार्य उन शिक्षक संस्थाओं के परिसर में किया जाता है जिन्हें सरकार तब मान्यता प्रदान करती है जब वह कुछ उद्देश्य मानव पूरे करते हैं। स्पष्ट है कि ध्यान का केन्द्रीकरण इस प्रकार की औपचारिक शिक्षा की क्रियाओं पर करने से शिक्षा कार्य पूर्णतः सक्रिय हो जाता है। परन्तु जहाँ तक मानव पूँजी का विषय है, व्यय को निवेश और उपभोग में अलग करना अत्यधिक कठिन है। इस व्यावहारिक समस्या के साथ साथ यह एक धारणात्मक समस्या भी पैदा करती है। शुल्ज के अनुसार शिक्षा खर्च को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं-

1. उपभोग (Consumption)- वह व्यय जो उपभोक्ता की प्राथमिकताओं को सन्तुष्ट करता है और किसी भी प्रकार से उसकी क्षमताओं को नहीं बढ़ाता।
2. निवेश (Investment)- वह खर्च जो केवल क्षमताओं को बढ़ाता है और किसी प्रकार के उपभोग सम्बन्धी प्राथमिकताओं को सन्तुष्ट नहीं करता है।
3. वह खर्च जिसमें उपर्युक्त दोनों का समावेश हो।

1.4.2 शिक्षा और मानव अधिकार (Education and Human Rights)

शिक्षा और मानव अधिकार एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का साधन नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को उसके जीवन के हर क्षेत्र में सशक्त बनाने का माध्यम है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझता है, अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव लाता है और समाज को भी एक नई दिशा देने में योगदान करता है। इसी कारण शिक्षा को एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1948 में "मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा" (Universal Declaration of Human Rights – UDHR) के अनुच्छेद 26 में यह स्पष्ट रूप से कहा है कि हर व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है। शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य होनी चाहिए, खासकर प्राथमिक स्तर पर। इसका उद्देश्य व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ मानव अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति सम्मान को बढ़ावा देना भी होना चाहिए।

भारत के संविधान में भी शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। अनुच्छेद 21A के तहत 6 से 14 वर्ष के बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया है। यह केवल एक कानूनी व्यवस्था नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। शिक्षा के माध्यम से समाज के पिछड़े और वंचित वर्गों को मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया जाता है।

शिक्षा मानव अधिकारों की रक्षा और उनके प्रचार-प्रसार का सशक्त माध्यम है। एक शिक्षित व्यक्ति यह समझ सकता है कि उसके साथ कोई अन्याय, भेदभाव या शोषण हो रहा है या नहीं। वह अपने अधिकारों की रक्षा करने और जरूरत पड़ने पर उचित मंच पर अपनी बात रखने में सक्षम होता है। यही कारण है कि शिक्षा को लोकतंत्र की रीढ़ कहा जाता है।

शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति में सोचने, समझने, सवाल करने और निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है। वह समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को भी समझता है। जब व्यक्ति अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने कर्तव्यों को भी निभाता है, तो एक न्यायपूर्ण और सशक्त समाज की स्थापना होती है।

इस प्रकार, शिक्षा और मानव अधिकारों का संबंध अत्यंत गहरा है। शिक्षा से ही व्यक्ति अपने मानव अधिकारों को समझता है, उनका उपयोग करता है और उनके लिए संघर्ष करने की क्षमता प्राप्त करता है। इसलिए यह जरूरी है कि समाज के हर व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के गुणवत्तापूर्ण और समान अवसर वाली शिक्षा मिले, ताकि एक समानता पर आधारित, न्यायपूर्ण और मानवतावादी समाज की रचना हो सके।

अपनी उन्नति जानिए

1 “संकुचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय, हमारी शक्तियों के विकास एवं उन्नति के लिए चेतनापूर्वक किए गये किसी भी प्रयास से हो सकता है”। यह परिभाषा किस विद्वान द्वारा दी गयी है?

अ. रूसो के द्वारा

ब. प्लेटो के द्वारा

द. जे० एस० मेंकेंजी के द्वारा

स. उपरोक्त सभी के द्वारा

2. “शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाये। (सः विद्या या विमुक्तये)” यह विचार किसके द्वारा दिया गया है?

अ. जगत गुरु शंकराचार्य द्वारा

ब. स्वामी विवेकानन्द के द्वारा

द. गाँधी जी द्वारा

स. हेंडरसन के द्वारा

3. संयुक्त राष्ट्र संघ ने “मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा” (Universal Declaration of Human Rights – UDHR) किस वर्ष किया था?

अ. 1945 में

ब. 1848 में

द. 1948

स. 2016 में

4. किस अर्थशास्त्री ने मानव पूँजी में निवेश के सैद्धान्तिक और अनुभवजन्य कार्यों की समीक्षा करके इसे “आर्थिक विचारधारा में मानव निवेश क्रान्ति” का नाम दिया।

अ. मैक्स वेबर ने

ब. बोमेने ने

स. दोनों ने

स. उपरोक्त में से कोई नहीं

5. “विद्यालय एक सरलीकृत तथा विस्तृत किया गया वातावरण है जहाँ जीवन के गुणों तथा व्यवसायों की शिक्षा बालक के विकास के उद्देश्य से दी जताई है” यह परिभाषा किसने दी है ?

अ. जॉन ड्यूवी

ब. हरबार्ट

स. रूसो

स. प्लेटो

1.4.3 नैतिक विकास के लिए शिक्षा (Education for Ethical Developments)

शिक्षा में नैतिकता से अभिप्राय उन मूल्यों, गुणों और आस्थाओं की शिक्षा से है, जिन पर मानव की व्यक्तिगत और समाज की सर्वश्रेष्ठ समृद्धि निर्भर करती है। नैतिक शिक्षा व्यक्ति के आंतरिक सद्गुणों को विकसित एवं संपुष्ट करती है, क्योंकि व्यक्ति समष्टि का ही एक अंश है, इसलिए उसके सद्गुणों के विकास का अर्थ है-‘समग्र समाज का सुसभ्य एवं सुसंस्कृत होना।’

परिभाषा- नैतिक शिक्षा और नैतिकता में कोई अंतर नहीं है अर्थात् नैतिक शिक्षा को ही नैतिकता माना जाता है। समाज जिसे ठीक मानता है, वह नैतिक है और जिसे ठीक नहीं मानता वह अनैतिक है। कर्तव्य की अतिरिक्त भावना नैतिकता है, जो उचित एवं अनुचित पर बल देती है। नैतिकता की विभिन्न परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

महात्मा गाँधी नैतिक कार्य उसे मानते थे, जिसमें सदैव सार्वजनिक कल्याण की भावना निहित हो। स्वेच्छा से शुभ कर्मों का आचरण ही नैतिकता है।

पंडित मदन मोहन मालवीय के कथनानुसार- “नैतिकता मनुष्य की उन्नति का मूल आधार है। नैतिकता विहीन मनुष्य पशु से भी निम्न है। नैतिकता एक व्यापक गुण है।”

सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन् के अनुसार- “नैतिकता व्यक्ति के आध्यात्मिक, बौद्धिक एवं सामाजिक विकास का आधार है। नैतिकता का प्रभाव व्यक्ति के सभी क्रिया-कलापों पर पड़ता है।”

पश्चिमी विचारक नैतिकता को एक धार्मिक गुण मानते हैं। इन गुणों में आत्म-संयम, त्याग, दया, परोपकार सहिष्णुता, सेवा आदि सम्मिलित हैं। इसी कारण हरबर्ट ने उच्चतर विचारों के सृजन एवं निम्न प्रवृत्तियों के दमन को नैतिकता कहा है।

नैतिक शिक्षा का महत्त्व- नैतिक शिक्षा वस्तुतः मानवीय सद्गुणों को उजागर करती है। यदि यह कहा जाए कि नैतिक शिक्षा ही मानवता का मूल है तो असंगत न होगा। नैतिक शिक्षा के अभाव में मानवता पनप ही नहीं सकती। क्योंकि मानव की कुत्सित वृत्तियाँ विश्व के लिए अभिशाप हैं। इन्हें केवल नैतिक शिक्षा से ही नियंत्रित किया जा सकता है। इसी के माध्यम से उसमें नव-चेतना का

संचार हो सकता है। नैतिक शिक्षा ही व्यक्ति को उसके परम आदर्श की प्रेरणा दे सकती है और उसे श्रेष्ठ मनुष्य बनाती है।

नैतिक शिक्षा का उद्देश्य- नैतिक शिक्षा का संबंध छात्र-छात्राओं की आंतरिक वृत्तियों से है। नैतिक शिक्षा उनके चरित्र-निर्माण का एक माध्यम है। चरित्र ही जीवन का मूल आधार है। अंग्रेजी में यह कथन प्रसिद्ध है”

If wealth is gone, nothing is gone, If health is gone, something is gone, If character is gone, everything is gone.” (यदि हमने धन खोया तो कुछ नहीं खोया, यदि हमने स्वास्थ्य खोया तो कुछ खोया, परंतु यदि हमने अपना चरित्र खोया तो अपना सब कुछ खो दिया।)

इसलिए चरित्र की रक्षा करना नैतिक शिक्षा का मूल उद्देश्य है। नैतिकता को आचरण में स्वीकार किए बिना मनुष्य जीवन में वास्तविक सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। छात्र-छात्राओं के चरित्र को विकसित एवं संवर्द्धित करने के लिए नैतिक शिक्षा अनिवार्य है। नैतिक शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं-

- (1) सर्वांगीण विकास- छात्र-छात्राओं के नैतिक गुणों को प्रफुल्लित करना नैतिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है, कि वे आगे चलकर देश के आदर्श नागरिक बन सकें। शिष्टाचार, सदाचार, अनुशासन, आत्म संयम, विनम्रता, करुणा, परोपकार, साहस, मानव-प्रेम, देशभक्ति, परिश्रम, धैर्यशीलता आदि नैतिक गुण हैं। इनका उत्तरोत्तर विकास नितांत आवश्यक है। यह कार्य नैतिक शिक्षा के द्वारा ही परिपूर्ण हो सकता है।
- (2) धार्मिक सहिष्णुता- छात्र-छात्राओं में धार्मिक सहिष्णुता को विकसित करना भी नैतिक शिक्षा का उद्देश्य है। छात्र विभिन्न धर्मों के मूल तत्वों से परिचित हों, आज के संदर्भ में यह बहुत ही आवश्यक बात है क्योंकि ऐसी स्थिति में ही उन्हें सभी धर्मों के समन्वय सूत्रों की एकता दिखाई देगी। छात्रों के हृदय में धार्मिक सहिष्णुता विकसित होगी। उन्हें धार्मिक संकीर्णता से दूर रखने में नैतिक शिक्षा ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है।
- (3) देशभक्ति- नैतिक शिक्षा से ही छात्र-छात्राओं में देश-भक्ति के अटूट भाव पल्लवित हो सकते हैं। वैयक्तिक स्वार्थों से ऊपर उठकर उनमें देश के हित को प्राथमिकता प्रदान करने के विचार पनप सकते हैं। नैतिक शिक्षा से छात्र देश के प्रति सदैव जागरूक रहते हैं।
- (4) विश्व बंधुत्व की भावना- नैतिक शिक्षा से छात्र-छात्राओं में विश्व बंधुत्व की भावना को जागृत किया जा सकता है। जब छात्रों में यह भाव विकसित होगा कि मानव उस विराट पुरुष की कृति है तो उनके समक्ष ‘वसुधैव कुटुंबकम्’ का महान् आदर्श साकार हो सकता है। यह तभी हो सकता है, जब उन्हें नैतिक शिक्षा दी गई हो।

1.4.4 उद्देश्यपूर्ण और सतत प्रक्रिया के रूप में शिक्षा (Education as purposive and continuous process)

शिक्षा एक प्रकार की प्रक्रिया है जिसके द्वारा छात्रों के व्यक्तित्व का विकास होता है। यह प्रक्रिया ऐसी नहीं है जो किसी समय प्रारम्भ हो और निश्चित समय पर समाप्त हो जाये। हम प्रायः देखते हैं, उसने अपनी समाप्त कर ली। अथवा उसने अब शिक्षा प्राप्त करना प्रारम्भ कर दिया है। वस्तुतः शिक्षा उस समय से प्रारम्भ हो जाती है जब बच्चा जन्म लेता है।

आज मनोवैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँच रहे हैं कि जन्म के पूर्व से ही शिक्षा प्राप्त हो जाती है। महाभारत के अनुसार अभिमन्यु ने चक्रव्यू को अपनी वेधना अपनी माता सुभद्रा के गर्भ से ही सीख लिया था। यदि हम यह न स्वीकार कि गर्भ में बालक की शिक्षा प्रारम्भ हो जाती है तो भी इस तथ्य से तो इंकार किया ही नहीं जा सकता कि जन्म के समय से ही प्रारम्भ हो जाती है। जन्म के प्रारम्भ से होकर शिक्षा आजीवन चलते रहती है। इस प्रक्रिया में कोई बाधा नहीं आती है। यह, अविरल रूप से, अविच्छिन्न रूप से एवं अबाध गति से सदा चलते रहते हैं। हम प्रतिदर्श, प्रतिमास, प्रतिदिन, यहाँ तक कि प्रतिक्षण कुछ न कुछ सीखते हैं। यह प्रक्रिया जीवन भर चलते-रहती हैं हिन्दू दर्शन के अनुसार तो शिक्षा की प्रक्रिया मृत्यु के समय भी समाप्त नहीं होती है। हिन्दू आत्मा की अमरता एवं अजरता में विश्वास करते हैं उनके अनुसार, मृत्यु केवल अगले जन्म की सीढ़ी है। एक जन्म में शिक्षा-प्रक्रिया द्वारा प्राप्त संस्कार स्वभावतः दूसरे जन्म में समाप्त हो जाते हैं। इन्हें ही संस्कार कहा जाता है। हमें संस्कारों के रूप में अपने पूर्व जन्मों की कमाई प्राप्त हो जाती है। यदि हम इस प्रकार के विचार में विश्वास न करें तो भी इतना तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि शिक्षा की प्रक्रिया जीवन भर अविरल रूप से चलते रहती है और जन्म से मृत्यु के बीच की अवधि में कोई भी शक्ति उसमें बाधक नहीं हो सकती है।

अपने व्यापक अर्थ में शिक्षा जीवन-पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। मनुष्य का समूचा जीवन ही शिक्षा का काल है और व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक कुछ-न-कुछ सीखता रहता है।

एडलर (Adler) के अनुसार- “शिक्षा मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से सम्बन्धित क्रिया है। यह छोटे बच्चों से ही सम्बन्धित नहीं होती, अपितु जन्म से आरम्भ होती है और मृत्यु तक चलती रहती है”।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

- 1 मनोविज्ञान (Psychology) शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के दो शब्दों _____ तथा _____ से हुई है।
- 2 सत्रहवीं शताब्दी में मनोविज्ञान को _____ या _____ का विज्ञान कहा गया।
- 3 विलियम जेम्स द्वारा दी गयी मनोविज्ञान की परिभाषा दीजिए।

4 20वीं शताब्दी के मनोविज्ञानिकों ने मनोविज्ञान को _____ का विज्ञान कहना प्रारम्भ किया।

1.5 संस्कृति के लिए शिक्षा (Education for Culture)

संस्कृति और शिक्षा का आपस में घनिष्ठ संबंध इस बात की पुष्टि करता है कि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक को उसकी सामाजिक विरासत और संस्कृति प्रदान करना है। प्रत्येक मानव समूह में हजारों सालों के विकास के परिणामस्वरूप संस्कृति के विभिन्न अंगों का विकास होता है यह संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होते रहती है। इस प्रकार प्रत्येक बालक किसी न किसी संस्कृति में जन्म अवश्य लेता है, अर्थात् संस्कृति का मनुष्य के जीवन में अत्यधिक महत्त्व है इस सामाजिक विरासत से उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कार्य करने के एक निश्चित दिशा प्राप्त होती है। बोगड्स के अनुसार- संस्कृति का समूह के समस्त रीति-रिवाजों, परंपराओं और चालू व्यवहार प्रतिमानों से बनती है संस्कृति एक समूह का मूलधन है। वह मूल्यों की एक ऐसी पूर्ववर्ती समष्टि है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति पैदा होता है। वह एक माध्यम है, जिसमें व्यक्ति पैदा होते हैं और विकसित होते हैं।”

अलैंगेंडर ए० गोल्डनवाईजर ने संस्कृति में निम्नलिखित तत्व माने हैं-“हमारी प्रवृत्तियाँ, विश्वास और विचार, हमारे निर्णय और मूल्य, हमारी संस्थाएँ-राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक, हमारी नैतिक संहिताएँ और शिष्टाचार के नियम, हमारी पुस्तकें और मशीनें, हमारे विज्ञान और दर्शन और दार्शनिक ये सब और दूसरी बहुत सी चीजें तथा प्राणी, स्वयं भी और अपने विविध सम्बन्धों में भी” ए० डब्ल्यू के शब्दों में- “संस्कृति ज्ञान, व्यवहार विकास की उन आदर्श पद्धतियों को तथा ज्ञान और व्यवहार से उत्पन्न हुए साधनों की व्यवस्था को कहते हैं, जो सामाजिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दी जाती है।”

मनुष्य के जीवन में संस्कृति के योगदान को इस प्रकार से वर्णित किया गया है।

1. प्राकृतिक वातावरण में समायोजन- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो सामाजिक वातावरण में रहता है बिना सामाजिक समायोजन के वह समाज में नहीं रह सकता है। सामाजिक परिवेश में समायोजन की प्रक्रिया में वह नए-नए आविष्कार करता है, वह संस्कृति का एक अभिन्न अंग है जो प्राकृतिक परिवेश की भिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न मानव समूहों में अंतर देखा जा सकता है। इसी आधार पर आदिम और विकसित संस्कृति में अंतर किया जाता है। भारतवर्ष में विभिन्न जनजातियों के सदस्य अपने वातावरण के साथ समायोजित होने के लिए अलग-अलग व्यवहार करते हैं। यह व्यवहार जनजाति अपने दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है।

2. सामाजिक परिवेश में समायोजन- संस्कृति में रीति-रिवाजों, परम्पराएँ और चालू व्यवहार प्रतिमान सम्मिलित होते हैं। उसमें हमारे विश्वास और विचार, निर्णय और मूल्य तथा सामाजिक संस्थाएँ निहित हैं। इन सबसे व्यक्ति को सामाजिक परिवेश से समायोजन करने में सहायता मिलती है। वास्तव में, सामाजिक परिवेश में परिवर्तन के साथ-साथ इन सभी में भी परिवर्तन होता रहता है। संस्कृति से ही सामाजिक परिवर्तन के प्रतिमान निश्चित होते हैं और इन प्रतिमानों से व्यक्ति पर सामाजिक नियंत्रण रहता है।

3. व्यक्तित्व का विकास- व्यक्तित्व मनुष्य के व्यवहार के प्रतिमानों से स्पष्ट होता है। मानव व्यवहार पर सब कहीं समूह की संस्कृति का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है समाजशास्त्रियों ने अपने अध्ययनों में यह बात स्पष्ट कर दी है कि भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में पाए जाने वाले भेद के कारण भिन्न-भिन्न समाजों में मूल व्यक्तित्व प्रतिमान में भेद पाया जाता है। कहीं पर मानव अधिक आक्रामक होता है, कहीं पर मानव में समर्पण की भावना भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। भारतीय मनुष्य के व्यक्तित्व पर भारतीय संस्कृति की और पाश्चात्य संस्कृति की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। संस्कृति मानव के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, नैतिक और सौन्दर्यात्मक सभी आयामों को प्रभावित करती है।

4. समाजीकरण- समाजीकरण की प्रक्रिया में संस्कृति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिए भिन्न-भिन्न समाजों में व्यक्ति के समाजीकरण की मात्रा और दिशा में भी भेद पाया जाता है प्रत्येक समाज के वातावरण का अपना एक एथोस (ETHOS) होता है जो विभिन्न माध्यमों से मनुष्यों को प्रदान किया जाता है।

राल्फ लिंटन के अनुसार व्यक्ति तीन प्रकार संस्कृति के अंगों में भाग ले सकता है। सर्वप्रथम वह सार्वभौमिक रूप से संस्कृति में भाग लेता है। अर्थात् उन आदतों, विचारों और संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं को अपनाने का प्रयत्न करता है जो समाज के अभी प्रौढ़ व्यक्तियों में पाया जाता है द्वितीय, व्यक्ति विशेष रूप से संस्कृति के अंगों में भाग लेता है अर्थात् संस्कृति के उन तत्वों को ग्रहण करता है जो कि समाज के विशिष्ट अंग विशेष व्यवस्था अथवा विशिष्ट लिंग वाले व्यक्तियों में पाए जाते हैं। तीसरे, व्यक्ति वैकल्पिक रूप से संस्कृति के अंगों में भाग लेता है अर्थात् संस्कृति के उन तत्वों को अपनाता है जो समाज के कुछ ही व्यक्तियों द्वारा अपनाया जाता है। संस्कृति के अंगों में भाग लेने के वैकल्पिक रूप से मनुष्यों में व्यक्तियों में अंतर देखा जा सकता है।

1.5.1 सामाजिक संस्कृति में परिवर्तन (Socio culture changes)

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन के वाहक के रूप में- मनुष्य द्वारा रचित संगठन ही समाज कहलाता है और उसमें रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक प्राणी की संज्ञा दी गयी है। प्रत्येक समाज ने धीरे-धीरे अपनी संस्कृति, रीति रिवाजों, परम्पराएँ विकसित कर ली हैं। इन विशिष्टताओं के कारण एक समाज दूसरे समाज से प्रथक समाज की रीति- रिवाज, रहन-सहन, परम्पराओं, नीतियों तथा आचार-

विचार में जो परिवर्तन होते रहते हैं वे ही सामाजिक परिवर्तन कहलाता है। सामाजिक परिवर्तन समाज की एक सहज प्रक्रिया है यह परिवर्तन पूर्व में होते रहते हैं, वर्तमान में भी हो रहा है और निरंतर होते रहेंगे।

सामाजिक परिवर्तन की परिभाषा- सामाजिक परिवर्तन की विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है।

सर जोन्स के अनुसार- “ सामाजिक परिवर्तन वह शब्द है, जो विभिन्न क्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रियाओं या सामाजिक संगठनों के किसी अंग में अंतर या रूपांतर को वर्णित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।”

गिलिन और गिलिन के शब्दों में- “ सामाजिक परिवर्तन जीवन के स्वीकृत प्रकारों में परिवर्तन है। भले ही यह परिवर्तन भौगोलिक दशाओं के परिवर्तन से हुए हों या सांस्कृतिक साधनों पर जनसंख्या की रचना या सिद्धांतों के परिवर्तन से हुए या ये प्रचार से या समूह के अन्दर ही अविष्कार से हुए हों या ये प्रचार से या समूह के अन्दर ही अविष्कार से हुए हों।”

मैकाइवर तथा पेज के शब्दों में- “उस परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन मानेंगे, जो कि इसमें (सामाजिक सम्बन्धों) में हो।”

डासन एवम गेटिस के शब्दों में- “ सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन है, क्योंकि समस्त संस्कृति अपनी उत्पत्ति, अर्थ और प्रयोग में सामाजिक है।”

सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं- सामाजिक परिवर्तन की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं।

1. सामाजिक परिवर्तन सामुदायिक परिवर्तन से सम्बन्धित होता है- सामाजिक परिवर्तन का अर्थ या सम्बन्ध किसी व्यक्ति विशेष या समूह के जीवन में परिवर्तन होने से नहीं है बल्कि सम्पूर्ण समाज या समुदाय के जीवन में होने वाले परिवर्तनों से सम्बन्ध रखता है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि जब किसी समुदाय के अधिकांश सदस्यों के सम्बन्धों, सामाजिक बंधनों, सामाजिक नियमों तथा विचार करने के तरीकों में परिवर्तन हो जाता है। उसे सामाजिक परिवर्तन की संज्ञा दी जाती है।
2. सामाजिक परिवर्तन एक सार्वभौमिक तथ्य है- सामाजिक परिवर्तन बिना किसी अपवाद के विश्व के प्रत्येक समाज में होता है यह आदिम से आदिम समाजों तक तथा आधुनिक दृष्टिकोण में विश्वास रखने वाले प्रत्येक समाज में संभव है।
3. सामाजिक परिवर्तन की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है- सामाजिक परिवर्तन अनिश्चित होता है इसके विषय में कोई भी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है कोई व्यक्ति इस बात का दावा नहीं कर सकता है कि किसी समाज में किस-किस प्रकार के और किस-किस समय परिवर्तन होंगे। सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में केवल संभावना व्यक्त की जा सकती है निश्चित रूप से भविष्यवाणी नहीं।

4. सामाजिक परिवर्तन अनिवार्य नियम है- सामाजिक परिवर्तन समाज में होने वाली एक आवश्यक व अनिवार्य घटना है भिन्न-भिन्न समाजों में परिवर्तन की मात्र में विविधता पाई जा सकती है लेकिन इसके विपरीत सामाजिक परिवर्तन बिल्कुल न होने की संभावना व्यक्त नहीं की जा सकती है।

5. सामाजिक परिवर्तन की गति असमान होती है- सामाजिक परिवर्तन प्रत्येक समाज में अनिवार्य रूप से होता है लेकिन इस बात को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि परिवर्तन की गति प्रत्येक समाज में एक समान नहीं होती है।

6. सामाजिक परिवर्तन एक जटिल तथ्य है- सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति बहुत जटिल प्रक्रिया है क्योंकि उसका मापन नहीं किया जा सकता है

मैकाइवर के अनुसार- “सामाजिक परिवर्तन का अधिक सम्बन्ध गुणात्मक परिवर्तन से है और गुणात्मक तथ्यों की माप न हो सकने के कारण इसकी जटिलता भी बहुत अधिक बढ़ जाती है”

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. “सामाजिक परिवर्तन वह शब्द है, जो विभिन्न क्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रियाओं या सामाजिक संगठनों के किसी अंग में अंतर या रूपांतर को वर्णित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।” यह परिबर्णन किसने दी है?

अ. सर जोन्स द्वारा

ब. मैकाइवर

स. डासन एवम गेटिस

द. उपरोक्त में से कोई नहीं

7. सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं हैं?

अ. सामाजिक परिवर्तन की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है

ब. सामाजिक परिवर्तन एक जटिल तथ्य है

स. सामाजिक परिवर्तन की गति असमान होती है

द. उपरोक्त सभी

8. अलैंगेंडर ए० गोल्डनवाईजर ने संस्कृति में निम्नलिखित तत्व माने हैं-

अ. हमारे निर्णय और मूल्य

ब. हमारी संस्थाएं-राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक,

स. हमारी नैतिक संहिताएँ और शिष्टाचार के नियम

द. उपरोक्त सभी

1.6 सारांश

शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान का हस्तांतरण नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति और समाज के सर्वांगीण विकास का माध्यम है। शिक्षा के लक्ष्य व्यक्ति को बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक रूप से

सक्षम बनाना है, ताकि वह एक जागरूक, जिम्मेदार और सक्रिय नागरिक बन सके। यह न केवल रोजगार के अवसर प्रदान करती है, बल्कि जीवन जीने की कला भी सिखाती है। शिक्षा समाज की एक महत्वपूर्ण उप-प्रणाली के रूप में कार्य करती है, जो सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने, मूल्यों का संचरण करने और सामाजिक परिवर्तन को दिशा देने में सहायक होती है। यह परिवार, धर्म, राजनीति और अर्थव्यवस्था जैसी अन्य सामाजिक प्रणालियों के साथ मिलकर कार्य करती है। आधुनिक समय में शिक्षा को एक निवेश के रूप में देखा जाता है, क्योंकि यह व्यक्ति में कौशल और दक्षता का विकास करती है, जिससे उसकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है और आर्थिक प्रगति संभव होती है। यह सामाजिक और राष्ट्रीय विकास में भी योगदान देती है। शिक्षा एक मौलिक मानव अधिकार है, जो हर व्यक्ति को गरिमा, स्वतंत्रता और समान अवसर पाने का हक देती है। यह भेदभाव, असमानता और अन्याय के विरुद्ध लोगों को सजग बनाती है और उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करती है। इसके साथ ही शिक्षा व्यक्ति के नैतिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह उसे सत्य, अहिंसा, ईमानदारी, सहिष्णुता, करुणा जैसे मूल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित करती है और उसे आत्मनिरीक्षण तथा आत्मनियंत्रण की ओर अग्रसर करती है। शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण और सतत प्रक्रिया है, जो जन्म से मृत्यु तक चलती रहती है। यह केवल औपचारिक शिक्षा संस्थानों तक सीमित नहीं होती, बल्कि व्यक्ति अपने अनुभव, समाज और परिवेश से निरंतर सीखता रहता है। शिक्षा न केवल संस्कृति के संरक्षण का माध्यम है, बल्कि सामाजिक संस्कृति में परिवर्तन का भी साधन है। यह नई पीढ़ी को सामाजिक मूल्यों, परंपराओं और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ती है, साथ ही उन्हें बदलते युग की आवश्यकताओं के अनुसार आधुनिक विचारों को अपनाने की प्रेरणा देती है। इस प्रकार शिक्षा व्यक्ति के साथ-साथ समाज को भी प्रगति की दिशा में ले जाने वाली शक्तिशाली प्रक्रिया है।

1.7 शब्दावली

- 1.8 शिक्षा सामाजिक उप- प्रणाली के रूप- यह एक इसी व्यवस्था है जो समाज की आवश्यकताओं, उनके मूल्यों और लक्ष्यों के अनुरूप व्यक्तियों का विकास करती है और सामाजिक व्यवस्था को बनाने में सहायक होती है।
- 1.9 शिक्षा के आयाम- यह व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए विभिन्न पहलू जैसे शारीरिक, मानसिक, नैतिक आध्यात्मिक विकास से सम्बन्धित है।
- 1.10 शिक्षा निवेश के रूप में – इसका अर्थ है कि भविष्य में बेहतर आर्थिक, सामाजिक लाभ के लिए वर्तमान में शिक्षा पर संसाधन लगाना।
- 1.11 सामाजिक परिवर्तन- यह लोगों की सोच, उनका व्यवहार और दृष्टिकोण को परिवर्तित करके समाज में नयी चेतना का विस्तार और उसमें सुधार करती है।

1.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. द. जे० एस० मेंकेंजी के द्वारा
2. अ. जगत गुरु शंकराचार्य द्वारा
3. द. 1948 में
4. ब. बोमेने द्वारा
5. अ. जॉन ड्यूवी
6. अ. सर जोन्स द्वारा
7. द. उपरोक्त सभी
8. द. उपरोक्त सभी

1.9 सन्दर्भग्रन्थ

1. त्रिपाठी, मधुसूदन (2007), आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा, ओमेगा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली
2. पाण्डेय, डॉ० रामशकल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पब्लिकेशंस, आगरा
3. सक्सेना, एन० आर० स्वरूप एवं चतुर्वेदी, शिखा (2012) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर० लाल० पब्लिकेशंस, मेरठ
4. वशिष्ठ, विजेंद्र कुमार (2007), भारतीय शिक्षा का इतिहास, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
5. मिश्रा, डॉ० महेंद्र कुमार (2009), उदीयमान भारतीय समाज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
6. मिश्रा, मंजू (2008), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, ओमेगा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली
7. लाल, रमन बिहारी (1982) : शिक्षा के दार्शनिक और समाज शास्त्रीय आधार, मेरठ, रस्तोगी प्रकाशन (उ. प्र.)।
8. पुरकैत, बी. आर. (1986) : न्यू एजुकेशन इन इंडिया, अम्बाला, असोसिएट्स पब्लिशिंग।
9. कार्ले, एडम (1985) : एजुकेशन स्ट्रेटजी फॉर डेवलपिंग, सोसाइटीज़, टैविस्टॉक, पब्लिकेशन्स।
10. गीत, भाई योगेंद्र (1990) : शिक्षा सिद्धान्त की रूप रेखा, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।
11. वर्मा, एम. (1969) : द फिलॉसफी ऑफ इंडियन एजुकेशन, संदर्भ- आर पी पाठक मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन।
12. <https://hindikiguide.com/essay-on-moral-education-in-hindi.html>

13. <https://himanshupublications.com/product/diverse-dimensions-of-education-hindi/>

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा से आप क्या समझते हैं? शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्ट करें?
2. “शिक्षा निवेश के रूप में” इस पद की व्याख्या कीजिये?
3. इनमें से प्रत्येक पर 100 शब्द लिखे-
 - शिक्षा और मानव अधिकार
 - सामाजिक परिवर्तन
 - नैतिक विकास और शिक्षा
 - शिक्षा एक सामाजिक उप-प्रणाली के रूप में
4. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारण करने की क्यों आवश्यकता है स्पष्ट कीजिये ?

इकाई 2

प्राचीन एवं वैदिक काल, मध्यकाल, स्वतंत्रता-पूर्व काल, स्वतंत्रता-पश्चात काल में शिक्षा का विकास (विद्यालयी शिक्षा के विकास सहित) एवं शैक्षिक पुनर्गठन

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भारतीय शिक्षा प्रणाली

2.4 प्राचीन एवं वैदिक काल में शिक्षा का विकास

2.5 मध्यकाल में शिक्षा का विकास

2.6 स्वतंत्रता-पूर्व शिक्षा का विकास

2.7 स्वतंत्रता-पश्चात् शिक्षा का विकास

2.8 शैक्षिक पुनर्गठन

2.9 सारांश

2.10 शब्दावली

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.13 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भारतीय शिक्षा का बीजारोपण अतीत में आज से लगभग 4,000 वर्ष पूर्व हुआ था। इस काल में शिक्षा पर ब्राह्मणों का आधिपत्य था। भारतीय शिक्षा का वास्तविक स्रोत वैदिक काल से ही मिलता है। यह वह काल था, जहां बड़े-बड़े गणितज्ञ, ज्योतिष, वैज्ञानिक, चिकित्सक आदि ने न केवल भारत अपितु पूरे दुनिया को शिक्षा का एक नया आयाम दिखाया। भारतीय शिक्षा पद्धति प्राचीन काल में अत्यंत समुन्नत व उत्कृष्ट थी। अतएव प्राचीन काल में भारत को विश्व गुरु कहा जाता था। वस्तुतः यह शिक्षा मनुष्य को न केवल जीवन के यथार्थ का दर्शन कराती थी, वरन् यह शिष्य को इस योग्य बनाती थी कि वह भवसागर की बाधाओं को पार करके अंत में मोक्ष को प्राप्त कर सके। भारत ही एक ऐसा देश है जो धर्म और अध्यात्मिक के क्षेत्र में विश्व का मार्ग दर्शन करता रहता है “गुरुपदमधिष्ठत” शब्द का प्रयोग भारत के लिए ही गया है। हमारी प्राचीन संस्कृति की महत्ता एवम् प्राचीन आदर्शों का ही प्रभाव था कि सम्पूर्ण मध्य एशिया तक और आधुनिक काल में पाश्चात्य देशों में भी हमारी संस्कृति का प्रचार-प्रसार हुआ। इस इकाई के माध्यम से आप भारतीय शिक्षा प्रणाली, जिसमें प्राचीन काल में भारतीय शिक्षा, मध्यकालीन भारत में

शिक्षा एवं आधुनिक भारत में भारतीय शिक्षा प्रणाली के विषय में जान सकेंगे और भारतीय शिक्षा प्रणाली के गुण एवं दोषों से अवगत हो सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद हमारे व्यवहार में निम्नलिखित परिवर्तन हो सकेंगे।

- भारतीय शिक्षा प्रणाली के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
 - प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, मध्यकालीन भारतीय शिक्षा प्रणाली एवं आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
 - भारतीय शिक्षा प्रणाली की विशेषताओं एवं गुण-दोषों के बारे में जान सकेंगे।
 - प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, मध्यकालीन भारतीय शिक्षा प्रणाली एवं आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली के विशेषताओं के बारे में अध्ययन कर पाएंगे।
 - प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली बनाम आधुनिक शिक्षा प्रणाली के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
-

2.3 भारतीय शिक्षा प्रणाली (Indian Education System)

भारत एक ऐसा देश है जो धर्म एवम् अध्यात्म के क्षेत्र में विश्व का मार्ग दर्शन करता रहता है हमारी प्राचीन संस्कृति की महत्ता एवम् प्राचीन आदर्शों का ही प्रभाव है कि वर्तमान समय में पाश्चात्य देशों में हमारी प्राचीन ज्ञान परम्परा और संस्कृति का भी प्रचार हुआ। यह बात स्मरणीय है कि प्राचीन भारत में धर्म का इतना बोलबाला था कि व्यक्ति के जीवन की सभी क्रियाएँ धर्म की परिधि में ही आते थे, यही कारण था कि शिक्षा और धर्म का साथ-साथ बीजारोपण हुआ। थामस के अनुसार- “ ऐसा कोई भी देश नहीं है जहाँ ज्ञान के प्रति अतीत काल में इतना प्रेम हो, या ज्ञान का इतना स्थायी और शक्तिशाली प्रभाव हो। वैदिक काल के सादा कवियों से लेकर, आजकल के बंगाली दार्शनिकों, शिक्षकों और विद्वानों का एक अटूट क्रम भारत में मिलता है।” प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के रूप में विकसित होने की क्षमता थी अथवा नहीं इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व राष्ट्रीय शिक्षा का स्वरूप समझ लेना अप्रासंगिक न होगा। राष्ट्रीयता देशभक्ति से कहीं ज्यादा व्यापक एवं विकासशील मानी जाती है, राष्ट्रीयता के कई तत्व होते हैं एकता की भावना, भौगोलिक सीमा, सामान्य भाषा, एक धर्म, जातीय एवं ऐतिहासिक परम्परा, संस्कृति, जातीय उद्भव। राष्ट्र की ये विशेषतायें समय के अनुसार बदलती और विकसित होती रहती हैं। यदि हम भारतीय शिक्षा प्रणाली की गहराई से अध्ययन करें तो इसमें राष्ट्रीयता के अनेक गुणों का समावेशन मिल जायेगा। वर्ण व्यवस्था की कठोरता, व्यावसायिक शिक्षा का न्यून

प्रचार, धर्म केन्द्रित शिक्षा आदि कतिपय दोष होने के बाद भी यही शिक्षा के सम्पूर्ण ढांचे पर दृष्टिपात करे तो यह शिक्षा लोक-कल्याणकारी, राष्ट्र-कल्याणकारी और व्यक्ति के आत्मिक एवं सामाजिक पुनरुत्थान के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी। भारतीय शिक्षा प्रणाली को हम चार कालों में विभक्त कर सकते हैं।

2.4 प्राचीन एवं वैदिक काल में शिक्षा का विकास (Development of Education in Ancient and Vedic Times)

वेदकालीन शिक्षा (Vedic Education)- वैदिक शिक्षा को वेदकालीन शिक्षा अथवा प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली के नाम से जाना जाता है वेदकालीन शिक्षा मुख्य रूप से वेदों पर आधारित शिक्षा है लेकिन यजुर्वेद भी उस काल की शिक्षा-व्यवस्था के विषय में पर्याप्त ज्ञान प्रदान करता है विश्व में जितनी भी प्राचीन संस्कृति या सभ्यता है उनकी एक सामान्य विशेषता यह है कि उसमें धर्म को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता था। धर्म का जिस रूप में आज में प्रयोग किया जाता है उससे अधिक रूप में उसका विस्तृत अर्थ प्रचलित था समाज के समस्त आचरण को नियंत्रित करने वाली संहिता, धर्म के नाम से जानी जाती थी इस अध्ययन में वैदिक युग की शिक्षा प्रणाली की विशेषताओं का विश्लेषण किया गया है, जिसमें गुरु-शिष्य परंपरा, आध्यात्मिक अनुशासन, नैतिक शिक्षा, एवं व्यावहारिक ज्ञान का समावेश था। वैदिक शिक्षा का उद्देश्य केवल सैद्धांतिक ज्ञान प्रदान करना नहीं था, बल्कि यह व्यक्ति के संपूर्ण विकास को सुनिश्चित करने हेतु जीवनमूल्यों पर केंद्रित थी। इस अध्ययन में वैदिक शिक्षा के मूलभूत तत्वों, उसके प्रभावों एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली के साथ उसके तुलनात्मक अध्ययन पर चर्चा की गई है। वैदिक शिक्षा प्रणाली केवल शैक्षिक दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि नैतिकता, आत्म-अनुशासन एवं सामाजिक समरसता के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण थी। वैदिक काल की शिक्षा प्रणाली में अद्वितीय विशेषताएं और गुण समाहित हैं, जो दुनिया के किसी अन्य देश की प्राचीन शिक्षा प्रणाली में नहीं पाए जाते हैं।

डॉ० एफ.ई. (Dr. F.E) के अनुसार, “अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ब्राह्मणों ने न केवल शिक्षा की एक प्रणाली विकसित की, जो साम्राज्यों के ढहने और समाज के परिवर्तन की घटनाओं के बावजूद भी बची रही, साथ ही उन सभी ने हजारों वर्षों के दौरान भी, उच्च शिक्षा की मशाल जलाए रखा।”

डॉ. पी.एन. प्रभु के शब्दों में, “प्राचीन भारत में शिक्षा, राज्य, सरकार या किसी दलीय राजनीति जैसे किसी बाहरी नियंत्रण से मुक्त थी। राजाओं का यह कर्तव्य था कि वे विद्वान पंडितों से सीखें, अपनी पढ़ाई करें तथा किसी भी स्रोत के हस्तक्षेप के बिना ज्ञान प्रदान करने के अपने कर्तव्य का पालन करें।

2.4.1. वेदकालीन शिक्षा प्रणाली की विशेषताएं (Features of Vedic Education System)

प्राचीन भारतीय शिक्षा के आदर्शों तथा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु तत्कालीन ब्राह्मणों, शिक्षकों ने जिस विशिष्ट शिक्षा-प्रणाली का विकास किया, उसका गुणगान करते हुए डॉ० एफ. ई. केई ने लिखा है, “ब्राह्मणों, शिक्षकों ने जिस शिक्षा-प्रणाली का विकास किया, वह न सिर्फ साम्राज्यों के पतन तथा समाज

के परिवर्तनों से अप्रभावित रही, वरन् उसने हजारों वर्षों तक उच्च शिक्षा की ज्योति को प्रज्जलित रखा।" वैदिक कालीन या वैदिक युगीन शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

वेदकालीन शिक्षा प्रणाली के मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं।

1. उस समय आचरण के आधार पर गुरुकुल में प्रवेश किया जाता था। गुरुकुल में सदाचरण और उच्च चरित्र वालों को ही प्रवेश दिया जाता था।
2. यद्यपि शिक्षा में धर्म एवम दर्शन की प्रधानता वैदिक युग में थी, फिर भी जनसाधारण को लौकिक शिक्षा अर्थात् शस्त्र विद्या, चिकित्सा इत्यादि का ज्ञान भी दिया जाता था।
3. अविवाहित छात्र ही गुरुकुल में प्रवेश ले सकते थे और सम्पूर्ण अध्ययन काल तक ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। विवाहित छात्रों का आश्रमों में प्रवेश निषेध माना जाता था।
4. वैदिक शिक्षा सामूहिक की अपेक्षा वैयक्तिक अधिक थी प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाता था। विद्यार्थी का शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक विकास कर उसे शाश्वत सत्य का साक्षात्कार कराना तत्कालीन शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था।
5. गुरुकुल में 24 वर्ष तक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र को वसु, 36 वर्ष तक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र को रूद्र, 48 वर्ष तक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र को आदित्य कहा जाता था।
6. विद्यार्थी को धर्म एवं दर्शन की शिक्षा देने के साथ ही जीवनोपयोगी शिक्षा भी दी जाती थी। गुरु का आश्रम, छात्रों के जीवन की प्रयोगशालाएं होती थीं। छात्र, गुरुओं की गायों को वनों से चराकर पशुपालन की शिक्षा ग्रहण करते थे।
7. पुस्तकों के अभाव के कारण श्रवण और मनन पर अधिक बल दिया जाता है। गुरु से सुनकर याद करना तथा गुरु द्वारा बतायी गयी बातों पर मनन करना और पुनः उस पर चर्चा करना आवश्यक होता था।
8. अपने तथा गुरु के भ्रमण के लिए छात्र भिक्षाटन करते थे। इस युग में भिक्षाटन करना बुरा नहीं माना जाता था। इससे छात्रों में विनम्रता एवम सामाजिकता की भावना उत्पन्न होती थी।
9. प्राचीन भारत में शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल प्रणाली का विशेष महत्त्व था। छात्र बचपन से ही अपने गुरु के घर पर रहते थे। गुरु की देखरेख में ही सम्पूर्ण अध्ययन काल तक विद्योपार्जन करते थे। ये गुरुकुल गाँवों और शहरों से दूर हुआ करते थे। शहर से दूर एक आदर्श वातावरण में शिक्षण कार्य होता था। गुरु एवं गुरुपत्नी छात्रों के माता-पिता के सामान ही उनकी देखरेख करते थे।
10. प्राचीन काल में छात्र, शिक्षा का आरम्भ उपनयन संस्कार से करते थे। प्रायः 8 से 12 वर्ष तक के बालकों का उपनयन संस्कार होता था।

2.4.2 वेदकालीन शिक्षा प्रणाली के उद्देश्य (Objectives of Vedic Education System)

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली मनुष्य के सर्वांगीण विकास पर जोर दिया जाता था। उसके द्वारा विद्यार्थियों में स्वच्छता तथा शिष्टाचार के नियमों का संचार हुआ था। इस शिक्षा प्रणाली ने अंधविश्वासों

को मिटाकर उस युग में छात्रों को उदार बनाया था। वे दूसरों की भावनाओं का आदर करते थे। विद्या ने छात्रों में ऐसा नैतिक बल भर दिया था कि वे बड़े से बड़े प्रलोभनों तथा चंचल वासनाओं के समक्ष अडिग रहते थे। उस समय की शिक्षा शारीरिक उन्नति के लिए भी कम प्रयत्नशील न थी। प्रातः काल प्राणायाम तथा सूर्य नमस्कार करने से विद्यार्थी स्वस्थ और पुष्ट रहते थे। ईश्वर भक्ति, धर्म विश्वास, चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक और सामाजिक कर्तव्यों का ज्ञान तथा राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण और प्रचार उस युग की शिक्षा के मुख्य उद्देश्य और आदर्श थे। इन आदर्शों के कार्यान्वयन से समाज की पर्याप्त उन्नति हुयी जो इस प्रकार है।

(1) संस्कारों का विकास करना (To develop values)

वैदिककालीन युग में शिक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य छात्रों में अच्छे संस्कारों का विकास करना था। शिक्षा के द्वारा वैदिक आदर्शों के अनुरूप संस्कारों को छात्रों में विकसित किया जाता था। ब्रह्मचर्य, सदाचार, परमार्थ, जनहित भावना, परोपकार, सामाजिक भावना, गुरु व बड़ों का आदर, कर्तव्य पालन, सत्य व्रत, धर्म के प्रति निष्ठा, श्रम के प्रति आदर, उच्च विचार आदि संस्कारों को विकसित करके छात्रों को संस्कार युक्त बनाया जाता था।

(2) ज्ञान एवं अनुभव का समन्वय (Integration of knowledge and experience)

प्राचीन शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत ज्ञान एवं अनुभव का समन्वय करके शिक्षा प्रदान की जाती थी, जिसके फलस्वरूप शिक्षार्थी ज्ञान को आत्मसात् करने में सफल हो जाते थे। इस शिक्षा पद्धति में चिंतन, मनन, स्वाध्याय इत्यादि के द्वारा शिक्षार्थियों को यथासंभव योग्य एवं कुशल बनाने का प्रयास गुरुजनों द्वारा किया जाता था। इस उद्देश्य के संदर्भ में डॉ० आर० के० मुखर्जी ने लिखा है कि- “शिक्षा का उद्देश्य पढ़ना नहीं था, वरन् ज्ञान एवम् अनुभव को आत्मसात् करना था।”

(3) आत्मा की पवित्रता का विकास करना (To develop the purity of the soul)

वैदिक युग में शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य मानव का आत्मिक विकास करना था। उस काल में मानव जीवन को अत्यधिक सरल, स्वाभाविक तथा पवित्र बनाने का प्रयास किया जाता था। जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति था। मनुष्य की ईश्वर में पूर्ण आस्था थी तथा धर्म के द्वारा सत्य तक पहुंचकर मोक्ष प्राप्त करने का प्रयास किया जाता था।

(4) चित्तवृत्तियों का निरोध (Cessation of mental modifications)

वैदिक कालीन शिक्षा का एक अन्य महत्वपूर्ण गुण, छात्रों की चित्तवृत्तियों का निरोध करना था। प्राचीन भारतीय शिक्षाविद् जीवन को सफल बनाने हेतु आत्मज्ञान एवं आत्मसंयम का समान महत्व मानते थे। इसी कारणवश वैदिक काल में शिक्षार्थियों को न केवल मौखिक या सैद्धांतिक रूप से सत्य का ज्ञान कराया जाता था, अपितु सत्य के मार्ग पर चलने के लिए उन्हें आत्मसंयम की दिशा में प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता था। इसी उद्देश्य से शिक्षार्थियों को भिन्न-भिन्न प्रकार की कठोर परीक्षाओं में अपने को सिद्ध

करना आवश्यक था। शिक्षार्थियों को दिनचर्या का कठोरता से पालन करना पड़ता था। डॉ० आर० के० मुखर्जी के अनुसार- “मन के उन कार्यों का निषेध था, जिनके कारण यह भौतिक जगत में उलझ जाता है।”

(5) चरित्र का निर्माण (Building character)

वैदिक काल में शिक्षार्थियों के चरित्र-निर्माण तथा विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इसी को ही शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य समझा जाता था। वैदिक काल में ज्ञान सम्पन्न, परन्तु चरित्रहीन व्यक्ति को अत्यन्त निम्न दृष्टि से देखा जाता था। शिक्षार्थियों के चारित्रिक निर्माण हेतु, उनमें आरंभ से ही विभिन्न नैतिक प्रवृत्तियों का विकास करना नितांत आवश्यक माना जाता था। गुरुजन शिक्षार्थियों को सदाचरण के उपदेश देते थे एवं स्वयं अपने उन्नत चरित्र को उदाहरण स्वरूप शिक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत करते थे। डॉ० वेदमित्र के अनुसार- “छात्रों के चरित्र का निर्माण करना, शिक्षा का एक अनिवार्य उद्देश्य माना जाता था।”

(6) भारतीय संस्कृति का संरक्षण तथा प्रसार (Preservation and promotion of Indian culture)

हमेशा से शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य सांस्कृतिक धरोहर को अक्षुण्ण रखना रहा है। वैदिक काल की शिक्षा व्यवस्था भी इसका अपवाद नहीं थी। शिक्षा के द्वारा राष्ट्रीय एवं सामाजिक संस्कृति का संरक्षण तथा प्रसार करना, वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का एक आवश्यक अंग था। शिक्षार्थियों को संस्कृति का ज्ञान प्रदान करके सांस्कृतिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित किया जाता था। इसके साथ सांस्कृतिक गौरव को एक स्थान से अन्य स्थानों तक फैलाने व प्रचारित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी शिक्षालयों से निकलने वाले शिक्षार्थी ही किया करते थे।

(7) स्वास्थ्य संरक्षण एवं वृद्धि (Health Preservation and Enhancement)

वैदिककालीन ऋषि और गुरुओं की यह मान्यता थी कि मनुष्य जीवन का अंतिम उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना है। इस उद्देश्य अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति के लिए पहली आवश्यकता स्वस्थ शरीर और निर्मल मन की है। यही कारण है कि ऋषि आश्रमों और गुरुकुलों में शिष्यों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के संरक्षण और संवर्द्धन पर विशेष बल दिया जाता था। शारीरिक स्वास्थ्य के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए शिष्यों को मुख्य रूप से निम्न कार्य करने होते थे।

- (i) प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठना
- (ii) तत्पश्चात् दाँतून एवं स्नान करना
- (iii) तदुपरांत व्यायाम करना
- (iv) सादा भोजन करना
- (v) नियमित दिनचर्या का पालन करना

(vi) व्यसनो से दूर रहना

(8) सामाजिक कुशलता की उन्नति (Advancement of social skills)

वैदिक काल में शिक्षार्थियों को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार का ज्ञान साथ-साथ प्रदान किया जाता था, जिससे कि शिक्षार्थी शुद्ध आचार-विचार एवं व्यवहार के माध्यम से अपने जीवन को सफल बना सकें। व्यावहारिक कुशलता के माध्यम से ही शिक्षार्थी समाज में अपना अस्तित्व सुरक्षित रख पाते थे या समाज में सामंजस्य स्थापित कर पाते थे। शिक्षार्थी भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यवसायों के माध्यम से समाज की उन्नति करते थे। डॉ० आर० के० मुखर्जी के अनुसार – “शिक्षा पूर्णतया सैद्धांतिक और साहित्यिक नहीं थी, अपितु किसी न किसी शिल्प से सम्बन्धित थी।”

(9) व्यावसायिक कुशलता का विकास (Development of professional skills)

शैक्षिक ज्ञान के साथ शिक्षार्थियों को व्यावसायिक योग्यता प्रदान करना, प्राचीन भारतीय शिक्षा का अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य था। भिन्न-भिन्न वर्णों को भिन्न-भिन्न व्यवसायों की शिक्षा प्रदान की जाती थी, जैसे- ब्राह्मणों को अध्ययन-अध्यापन की, क्षत्रियों को सैनिक एवं राजकार्य की शिक्षा।

(10) ईश्वर की भक्ति एवं धार्मिकता का समावेश (Inclusion of devotion to God and religiosity)

प्राचीन काल की शिक्षा ‘सा विद्या या विमुक्तये’ की उक्ति को सार्थकता प्रदान करने वाली थी। प्राचीन काल में लोगों की धारणा थी कि शिक्षा के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है। वही शिक्षा सार्थक है, जिससे मोक्ष की प्राप्ति हो सके। मोक्ष की प्राप्ति ईश्वर की भक्ति के द्वारा ही हो सकती है। प्राचीन युग में शिक्षार्थियों में आध्यात्मिकता का विकास करने के लिए दैनिक जीवन में यज्ञ, व्रत, उपवास, सन्ध्या, प्रार्थना आदि का प्रावधान था। शिक्षा संस्थाओं में ज्ञान एवं भक्ति का समन्वय था। शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों ही धर्म का पालन करना अपना प्रमुख कर्तव्य समझते थे।

(11) सामाजिक कर्तव्यों का पालन करना (To follow social duties)

वैदिक काल की शिक्षा का एक उद्देश्य शिक्षार्थियों को सामाजिक कर्तव्यों का पालन करना सिखाना था। इस युग में शिक्षार्थी विद्या अध्ययन के साथ-साथ समाज के अन्य व्यक्तियों की सहायता कर, अपने सामाजिक कर्तव्यों का निर्वाह करते थे, जैसे-दीन-दुखियों की सहायता करना, निःशुल्क शिक्षा प्रदान करना आदि। इन सामाजिक कार्यों को उन्हें निःस्वार्थ भाव से करना होता था। शिक्षार्थी इन कार्यों को करके तीन प्रकार के ऋणों (पितृ, गुरु एवं देव) से ऋण-मुक्त हो जाते थे।

(12) जीविकोपार्जन के लिए तैयार करना (Prepare for earning a livelihood)

शिक्षार्थियों को जीविका के लिए तैयार करना भी हमेशा से शिक्षा संस्थाओं का महत्वपूर्ण कार्य माना जाता रहा है। वैदिक काल में भी शिक्षार्थियों को इस प्रकार का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता था

कि वे अपने जीविकोपार्जन के लिये समर्थ हो सकें। जीवनोपयोगी उद्यम जैसे-कृषि, डेरीफार्म, चिकित्सा, युद्ध, कला, व्यवसाय, पशु-पालन आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रकार के प्रशिक्षण से शिक्षार्थियों की सामाजिक कुशलता में वृद्धि होती थी तथा वे गृहस्थ आश्रम के दौरान अपने परिवारजनों का भरण-पोषण करने में सक्षम सिद्ध होते थे।

2.5 मध्यकाल में शिक्षा का विकास (Development of education in the medieval period)

शिक्षा कैसे दी जाय और किस प्रकार दे जाय, यह प्रश्न प्रत्येक युग के विद्वानों, मनीषियों और शासकों के सामने एक भरी समस्या रही है। प्रत्येक युग की एक विशेष शिक्षा पद्धति होती है। जिसमें उस काल-विशेष की सांस्कृतिक छाप विद्यमान रहती है। इस युग में शिक्षा के स्वरूप में कई परिवर्तन आये। अब तक हमारे देश के विद्यालयों में वैदिक मन्त्रों और बौद्ध सूत्रों का अध्ययन अध्यापन होता था लेकिन अब मकतब और मदरसों में कुरान तथा इस्लामी धर्म ग्रन्थों का पढ़ना-पढ़ाना प्रारम्भ हो गया था। संस्कृत तथा प्राकृत भाषाओं का प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त होने लगा था और लोग फ़ारसी भाषा के अध्ययन के लिए आकृष्ट होने लगे, मुस्लिम दरबारों में फ़ारसी जानने वाले व्यक्तियों को नौकरी मिलती थी। भारत में इस्लामी सल्तनत एकतन्त्रात्मक थी। राज्य के सभी कार्य तत्कालीन सुल्तान की इच्छा के होते थे। फलस्वरूप प्रत्येक सम्राट अपनी विचारधारा के अनुसार जनता को शिक्षित करना चाहता था। भारत का प्रथम मुस्लिम शासक मुहम्मद गौरी ने पाठशालाओं को खत्म कर वहाँ मकतब और मदरसे बनवाए। बाद में कुतुबुद्दीन ने विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। अकबर के समय तक प्राचीन शिक्षण विधि अस्त-व्यस्त रही। भारतीय विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों के स्थान पर मदरसे खोले गए। वेद का स्थान कुरान ने लिया तथा संस्कृत का स्थान फ़ारसी ने।

2.5.1 मध्यकालीन शिक्षा प्रणाली की विशेषताएं (Features of the medieval education system)

1. मुस्लिम शिक्षा का प्रारम्भ विस्मिल्लाह रस्म से होता था। बालक की उम्र 4 वर्ष 4 माह 4 दिन होने पर उसे नये कपड़े पहनाकर मौलवी साहब के पास ले जाते थे। मौलवी साहब कुरान की कुछ आयतें पढ़ते थे और बच्चा उनको दुहराता था। यदि बालक उन आयतों को नहीं दुहरा पाता था, तब विस्मिल्लाह शब्द कहना ही पर्याप्त समझा जाता था तथा बालक की औपचारिक शिक्षा प्रारंभ हो जाती थी।
2. इस्लाम युग में गुरु का स्थान बहुत ऊँचा होता था। वे जनता तथा विद्यार्थी के प्रिय तो थे ही, साथ में वे धार्मिक नेता भी होते थे। वे सामाजिक तथा धार्मिक दोनों में भाग लेते थे। धार्मिक होने के कारण वे बड़े त्यागी और पवित्र होते थे।

-
3. इस्लाम युग में गुरु का स्थान उच्च होता था। गुरु- शिष्य का सम्बन्ध निकट का होता था। गुरु शिष्य को पुत्रवत् समझते थे तथा गुरु शिष्य की सेवा में हाजिर रहते थे।
 4. छात्र वैदिक युग की भाँति गुरु के आश्रम में नहीं रहते थे। हाँ मदरसों में रहने वाले अधिकतर छात्र छात्रावास में रहते थे।
 5. अपनी लेखनी द्वारा इतिहासकारों ने घटनाओं का सजीव चित्र खींचकर कहानी और इतिहास लेखन को इस युग में ज्यादा महत्त्व दिया है। कहानी और इतिहास का लेखन सबसे पहले इसी युग में हुआ।
 6. पुनर्जन्म में विश्वास नहीं रखने के कारण धार्मिकता के साथ लौकिक सुख पर ज्यादा ध्यान रखा गया है साथ ही कुरान के अनुसार धनोपार्जन एवं ज्ञानोपार्जन को सबसे ज्यादा जरूरी समझा गया।
 7. कला, धर्म और जीवनोपयोगी विभिन्न विषयों के समन्वय द्वारा पाठ्यक्रम को व्यापक बना दिया गया था।
 8. मुसलमान शासकों में युद्ध प्रेमी होने के कारण सैनिक शिक्षा पर भरपूर बल दिया गया। राजकुमारों तथा पदाधिकारियों के पत्रों के लिए सैनिक शिक्षा अनिवार्य थी।
 9. इन शिक्षा-संस्थाओं में कक्षा-नायकीय पद्धति का प्रचलन था। इस पद्धति में उच्च कक्षाओं के योग्य छात्रों को नायक बनाया जाता था जो निम्न कक्षा के छात्रों का शिक्षण कर, अध्यापक के शिक्षण कार्य में सहायता देते थे।
 10. मुस्लिम काल में शिक्षा का माध्यम अरबी-फारसी भाषाएँ थीं। फारसी भाषा राज भाषा होने के कारण सरकारी नौकरी पाने का साधन था तथा इसी भाषा के ज्ञान द्वारा व्यक्ति को राजपद मिल सकता था। यही कारण था कि कुछ हिन्दू भी फारसी भाषा सीखने लगे थे। अकबर ने हिन्दी को तथा औरंगजेब ने उर्दू को प्रोत्साहन दिया, फिर भी अरबी और फारसी भाषा का महत्व भाषा के माध्यम के रूप में बना रहा। संस्कृत व पाली आदि भाषाओं के लिए मुस्लिम शिक्षा में कोई स्थान नहीं था।
 11. मुस्लिम काल में शिक्षण की पद्धति मुख्य रूप से मौखिक थी, रटने एवं स्मरण पर बल दिया जाता था। व्याख्यान, प्रश्नोत्तर तथा वाद-विवाद विधियों का प्रयोग किया जाता था। विद्यार्थियों को स्वाध्याय विधि से ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता था। शिक्षक की उपस्थिति में बड़ी कक्षाओं के कुशल तथा योग्य विद्यार्थी छोटी कक्षा के विद्यार्थियों को पढ़ाने का कार्य करते थे।

2.5.2 मध्यकालीन शिक्षा प्रणाली की उद्देश्य (The Objectives of the Medieval Education System)

मुस्लिम शिक्षा प्रणाली में शिक्षा ज्ञान का पर्याय मानी जाती थी। मुस्लिम शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य इस्लामिक संस्कृति एवं धर्म का प्रचार-प्रसार करना था। इसके साथ-साथ इन्होंने ज्ञान, कला कौशलों के प्रशिक्षण और ऐश्वर्य प्राप्त करने की शिक्षा पर भी बल दिया।

1. मुस्लिम धर्म तथा दर्शन का प्रसार (Spread of Muslim religion and philosophy)

शिक्षा जनसंचार का माध्यम बनाने के हक में मुस्लिम शासकों ने इसे धर्म संबोधनों, धार्मिक परंपराओं से अनुप्राणित किया था, क्योंकि उनका प्रमुख उद्देश्य था, भारतीय शिक्षा का 'इस्लामीकरण' करना। इसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए उन्होंने इसे नवीन संस्थाओं में मुस्लिम धर्म गुरुओं एवं मालवीयों के मार्गदर्शन में, शासकीय आदेशों के साये में पाला-पोसा। इस तरह इस काल की शिक्षा इस्लाम धर्म का पर्याय बन चुकी थी एवं तात्कालिक शासकों का भी यही उद्देश्य था।

2. अच्छे चरित्र-निर्माण पर बल (Emphasis on good character building)

मुस्लिम शिक्षण संस्थाओं में छात्रों में अच्छी आदतों और चरित्र-निर्माण के लिए शिक्षकों के द्वारा निरंतर प्रयास किए जाते थे। इस काल में छात्रों में अच्छे चरित्र-निर्माण को महत्व दिया गया था जैसा कि वैदिक काल व बौद्ध काल में भी दिया जाता था।

3. मुस्लिम शासकों के प्रति वफादारी (Loyalty to Muslim rulers)

मुस्लिम शिक्षा प्रणाली भारत की शिक्षा प्रणाली नहीं थी और मुस्लिम शासक भी भारत में विदेशी थे इसलिए भारतीयों को इन पर विश्वास नहीं था। इसलिए मुस्लिम शिक्षा प्रणाली का एक प्रमुख उद्देश्य भारतीयों को मुस्लिम शासकों के प्रति वफादार बनाना था। इसलिए इन्होंने हिन्दुओं के लिए अरबी और फारसी भाषा की शिक्षा की व्यवस्था कराई और जिन हिन्दुओं ने यह शिक्षा प्राप्त की उन्हें शासन ने ऊँचे पदों को सम्भालने की जिम्मेदारी सौंपी।

4. सांसारिक विलासिता की प्राप्ति (Attainment of worldly luxury)

मुस्लिम शासक विलासितापूर्ण जीवन जीने में विश्वास रखते थे। इस्लाम के अनुसार मानव जीवन में भौतिक ऐश्वर्य की प्राप्ति ही महत्वपूर्ण है। मध्यकालीन मुस्लिम शासक सांसारिक ऐश्वर्यपूर्ण तथा भोग विलासितापूर्ण थे और उन्होंने शिक्षा के द्वारा भी इसको बढ़ावा दिया।

5. इस्लाम धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध करना (Proving the supremacy of Islam)

मुस्लिम शिक्षा का उद्देश्य हिन्दुओं को इस्लामिक सभ्यता और संस्कृति की तरफ आकर्षित करना था। चूँकि मुस्लिम शासक यह अच्छी तरह से जानते थे कि जब तक हिन्दुओं का दृष्टिकोण परिवर्तित नहीं होगा, तब तक वह इस्लाम धर्म और संस्कृति का प्रचार और प्रसार नहीं कर पायेंगे इसलिए उन्होंने सबसे पहले भारतीयों पर इस्लामी सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव छोड़ने के प्रयास शुरू किए, जिससे वह अपनी सभ्यता, धर्म और संस्कृति का प्रचार व प्रसार कर सकें।

6. शिक्षा मानवीय ज्ञान तथा वृद्धि का माध्यम (Education is a means of human knowledge and growth)

हजरत मुहम्मद साहब का प्राथमिक उद्देश्य उनकी इस पंक्ति से स्पष्ट हो जाता है कि, “उपहार में स्वर्ण देने की बजाय बच्चों को शिक्षा देना श्रेयस्कर है।” अतः शिक्षा का मूल तत्त्व ज्ञानार्जन करना था, क्योंकि

शिक्षा के माध्यम से ही मानवीयता का प्रकाश प्राप्त होता है एवं व्यक्ति में स्व-विवेक जागृत होता है। शिक्षा के अभाव में धर्म तथा आध्यात्म विषयक ज्ञान की प्राप्ति भी असंभव है। यह ज्ञान ही है, जिससे व्यक्ति कर्तव्य, ईमान एवं धार्मिक प्रेरणाएं प्राप्त करने में सफल होता है। अतः मुहम्मद साहब तथा अन्य पैगम्बरों के वचनों के अनुरूप शिक्षा को जोड़ने का पूरा प्रयत्न इस युग में किया जाता रहा था।

2.6 स्वतंत्रता-पूर्व शिक्षा का विकास (ब्रिटिश काल के दौरान शिक्षा का विकास)

Development of Pre-Independence Education (Development of Education during the British Period)

शिक्षा स्वतंत्रता के सुनहरे दरवाजे को खोलने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है जो दुनिया को बदल सकता है। अंग्रेजों के आगमन के साथ, उनकी नीतियों और उपायों ने सीखने के पारंपरिक स्कूलों की विरासत को भंग कर दिया और इसके परिणामस्वरूप अधीनस्थों की एक वर्ग बनाने की आवश्यकता हुई। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, उन्होंने शिक्षा प्रणाली के माध्यम से अंग्रेजी रंग का एक भारतीय कैनवास बनाने के लिए कई कार्य किए।

प्रारंभ में, ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी शिक्षा प्रणाली के विकास से चिंतित नहीं थी क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य व्यापार और लाभ-निर्माण था। भारत में शासन करने के लिए, उन्होंने “रक्त और रंग में भारतीय लेकिन स्वाद में अंग्रेजी” बनाने के लिए उच्च और मध्यम वर्गों के एक छोटे से वर्ग को शिक्षित करने की योजना बनाई, जो सरकार और जनता के बीच दुभाषियों के रूप में काम करेंगे। इसे “डाउनवर्ड निस्पंदन सिद्धांत” भी कहा जाता था। भारत में शिक्षा के विकास के लिए अंग्रेजों द्वारा निम्नलिखित कदम और उपाय किए गए थे।

भारत में ब्रिटिश काल के दौरान शिक्षा के कालानुक्रमिक विकास की चर्चा नीचे दी गई है:

2.6.1 अधिनियम और शिक्षा - 1813 (Act and Education-1813)

1. चार्ल्स ग्रांट और विलियम विल्बरफोर्स, जो मिशनरी कार्यकर्ता थे, ने ईस्ट इंडिया कंपनी को अपनी गैर-आविष्कार नीति को छोड़ने के लिए मजबूर किया और पश्चिमी साहित्य पढ़ाने और ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा का प्रसार करने का रास्ता बनाया। इसलिए, ब्रिटिश संसद ने 1813 के चार्टर में एक खंड जोड़ा कि गवर्नर-जनरल-इन-काउंसिल शिक्षा के लिए एक लाख से कम है और ईसाई मिशनरियों को भारत में अपने धार्मिक विचारों को फैलाने की अनुमति देता है।
2. अधिनियम का अपना महत्व था क्योंकि यह पहली बार था कि ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में शिक्षा के प्रचार के लिए स्वीकार किया था।
3. आर. आर. रॉय के प्रयासों से, पश्चिमी शिक्षा प्रदान करने के लिए कलकत्ता कॉलेज की स्थापना की गई। साथ ही कलकत्ता में तीन संस्कृत महाविद्यालय स्थापित किए गए।

2.6.2 सार्वजनिक निर्देश की सामान्य समिति, 1823 (General Committee of Public Instruction, 1823)

इस समिति का गठन भारत में शिक्षा के विकास को देखने के लिए किया गया था जिसमें ओरिएंटलिस्टों का वर्चस्व था जो अंग्रेजी के बजाय ओरिएंटल शिक्षा के महान समर्थक थे। इसलिए, उन्होंने पश्चिमी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए ब्रिटिश इंडिया कंपनी पर दबाव बनाया। परिणामस्वरूप, भारत में शिक्षा के प्रसार में ओरिएंटलिस्ट-एंग्लिसिस्ट और मैकाले के संकल्प के बीच ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली की स्पष्ट तस्वीर सामने आई।

2.6.3 लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति, 1835 (Lord Macaulay's Education Policy, 1835)

1. यह नीति शिक्षा की उस प्रणाली को बनाने का एक प्रयास थी जो अंग्रेजी के माध्यम से समाज के केवल ऊपरी स्तर को शिक्षित करती है।
2. अंग्रेजी अदालत भाषा बन गई और फारसी को अदालत की भाषा के रूप में समाप्त कर दिया गया।
3. अंग्रेजी पुस्तकों की छपाई मुफ्त और बहुत कम कीमत पर उपलब्ध कराई गई।
4. प्राच्य विद्या की तुलना में अंग्रेजी शिक्षा को अधिक निधि मिलती है।
5. 1849 में, जेईडी बेथून ने बेथून स्कूल की स्थापना की।
6. पूसा (बिहार) में कृषि संस्थान की स्थापना की गई।
7. इंजीनियरिंग संस्थान की स्थापना रुड़की में की गई थी।

2.6.4 वुड्स डिस्पैच, 1854 (Woods Dispatch, 1854)

1. इसे “भारत में अंग्रेजी शिक्षा का मैग्ना कार्टा” माना जाता है और इसमें भारत में शिक्षा के प्रसार की व्यापक योजना है।
2. यह शिक्षा के प्रसार के लिए राज्य की जिम्मेदारी को जनता तक पहुँचाता है।
3. इसने पदानुक्रम की शिक्षा के स्तर की सिफारिश की- नीचे, वर्नाक्यूलर प्राइमरी स्कूल; जिले में, एंग्लो-वर्नाक्यूलर हाई स्कूल और संबद्ध कॉलेज, और कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास प्रेसीडेंसी के संबद्ध विश्वविद्यालय।
4. स्कूल स्तर पर उच्च अध्ययन और स्थानीय भाषा के लिए शिक्षा के माध्यम के रूप में अनुशंसित अंग्रेजी।

2.6.5 हंटर कमीशन 1882-83 (Hunter Commission 1882-83)

1. 1882 में W.W हंटर के तहत 1854 की वुड डिस्पैच की उपलब्धियों का मूल्यांकन करने के लिए इसका गठन किया गया था।

2. इसने प्राथमिक शिक्षा और माध्यमिक शिक्षा के विस्तार और सुधार में राज्य की भूमिका को रेखांकित किया।

3. इसने जिला और नगरपालिका बोर्डों को नियंत्रण हस्तांतरण को रेखांकित किया।

4. इसने माध्यमिक शिक्षा के दो विभाजन की सिफारिश की- साहित्य विश्वविद्यालय तक; व्यावसायिक कैरियर के लिए व्यावसायिक।

2.6.6 सैडलर कमीशन (Saddler Commission)

1. यह कलकत्ता विश्वविद्यालय की समस्याओं पर अध्ययन करने के लिए बनाया गया था और उनकी सिफारिशें अन्य विश्वविद्यालयों पर भी लागू थीं।

2. उनके अवलोकन इस प्रकार थे:

- 12 साल का स्कूल कोर्स
- इंटरमीडिएट चरण के बाद 3 साल की डिग्री
- विश्वविद्यालयों का केन्द्रीयकृत कामकाज, एकात्मक आवासीय-शिक्षण स्वायत्त निकाय।
- लागू वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा, शिक्षक प्रशिक्षण और महिला शिक्षा के लिए विस्तारित सुविधाओं की सिफारिश की।

इसलिए, हम कह सकते हैं कि ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली ईसाई मिशनरियों की आकांक्षा से प्रभावित थी। प्रशासन में और ब्रिटिश व्यावसायिक चिंता में अधीनस्थ पदों की संख्या बढ़ाने के लिए शिक्षित भारतीयों की एक सस्ती आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए इसे इंजेक्ट किया गया था। इसीलिए, वे अंग्रेजी शिक्षा पर जोर देते हैं और साथ ही ब्रिटिश विजेता और उनके प्रशासन का भी महिमामंडन करते हैं।

2.7 स्वतंत्रता-पश्चात् शिक्षा का विकास (Development of Education after Independence)

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद शिक्षा को एक राष्ट्रीय रूप देने का प्रयत्न किया गया। शिक्षा व्यवस्था को देश की नई परिस्थितियों के अनुरूप बनाने हेतु अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तनों की घोषणा की गयी।

संविधान में सभी को शिक्षा सामान रूप से सुलभ हो सके, इसके लिए अनेक प्रावधान किये गये।

- पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति, दलितों, वंचितों तथा महिलाओं की शिक्षा के विकास हेतु विशेष प्रयत्न किये गये।

-
- प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य व निःशुल्क बनाने का संकल्प लिया गया। माध्यमिक शिक्षा को बहुउद्देशीय बनाने पर विचार किया गया तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा के स्तर में सुधार करने का प्रयास किया गया।
 - विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) का गठन किया गया।
 - माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) का गठन किया गया।
 - राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) का गठन किया गया।
 - शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के अध्ययन और समाधान हेतु अनेक सनितियाँ गठित की गयीं।
 - 1968 में राष्ट्र की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की गयी।
 - सन 1986 में नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रस्तुत की गयी, जिसमें 1992 में संशोधन किये गये।
 - केंद्र व राज्य सरकारों के द्वारा एवम् केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् (CABE) के द्वारा समय-समय पर विभिन्न शैक्षिक समस्याओं पर विचार करने हेतु समितियों तथा कार्यदलों की नियुक्ति की गयी।
 - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) ने स्कूल शिक्षा के सम्बन्ध में एवं भारतीय विश्वविद्यालय संघ (AIU) तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने उच्च शिक्षा के सम्बन्ध में अनेक सार्थक प्रयत्न किये।
 - राजनैतिक नेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं, शिक्षा शास्त्रियों, शिक्षकों ने भी समय-समय पर शैक्षिक सुझावों तथा शिक्षा को तदनुसार पुनर्गठित करने के सम्बन्ध में अपने-अपने मत प्रस्तुत किये हैं।
 - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कोठारी आयोग ने सन 1966 में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की रूपरेखा को सर्वप्रथम प्रस्तुत किया। कोठारी आयोग (1964-66) ने शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिवर्तन का एकमात्र साधन मानते हुए अनुभव किया है कि शिक्षा के द्वारा भौतिक तथा मानवीय संसाधनों का विकास किया जा सकता है आयोग के अनुसार-
 - शिक्षा उत्पादकता के जुड़ी होनी चाहिए।
 - शिक्षा को आधुनिकता की प्रक्रिया में तेजी लानी चाहिए।

- शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण सुदृढ़ करना चाहिए तथा शासन के प्रजातान्त्रिक ढांचे को सबल बनाना चाहिए।
 - शिक्षा को सामाजिक, नैतिक, तथा आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देकर चरित्र निर्माण करना चाहिए।
- इन सब उद्देश्यों की सफलता के लिए आयोग ने विज्ञान की शिक्षा, कार्यानुभव, शिक्षा के व्यवसायीकरण तथा कृषि व अनुसन्धान में सुधार करने पर जोर देते हुए शिक्षा को उत्पादकता से जोड़ने का प्रायस किया। सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण को सुदृढ़ करने के लिए आयोग ने समान विद्यालय प्रणाली (Common School System) सामाजिक व राष्ट्रीय सेवा, भारतीय भाषाओं के विकास व हिंदी को राजकीय भाषा बनाने तथा राष्ट्रीय चेतना को प्रोत्साहित करने की अनुशंसा की।

2.7.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मुख्य उद्देश्य (Main Objectives of the National Education Policy 1986)

1. छात्रों में वैज्ञानिक मनोवृत्ति, चारित्रिक और आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना
2. शिक्षा के द्वारा छात्रों का शारीरिक, बौद्धिक और सौन्दर्यपरक विकास करना
3. शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन की वाहिका बनाना
4. छात्रों में परिस्थितियों की विषमता को बदल डालने का आत्मविश्वास पैदा करना
5. सामाजिक, तकनीकी और सांस्कृतिक परिवेश के प्रति जागरूकता पैदा करना

2.7.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्व: (Fundamental Elements of the National Education Policy 1986)

1. राष्ट्रीय शिक्षा कार्यक्रम: समूचे देश में एक समान 10 + 2 + 3 प्रणाली लागू करना।
2. मूल्यों की शिक्षा: सार्वभौमिक मूल्यों की शिक्षा जो व्यक्तियों की समानता और एकता पर बल देती है।
3. विकलांगों की शिक्षा: विकलांग व्यक्तियों को सामान्य समुदाय के साथ सहभागी बनाने पर बल देना।
4. अनुसूचित जातियों और जनजातियों की शिक्षा: अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शैक्षिक विकास के लिए विशेष योजनाएं बनाना।
5. गणित और विज्ञान शिक्षण: गणित और विज्ञान शिक्षा को आधुनिक तकनीकी उपकरणों के अनुरूप पुनर्गठित करना।
6. अल्पसंख्यकों की शिक्षा: अल्पसंख्यक समुदायों की शिक्षा के लिए गुणात्मक और सामाजिक न्याय की दृष्टि से सर्वसाधारण योजना बनाना
7. शिक्षक: शिक्षकों के चयन विधि, योग्यता और वस्तुनिष्ठता को पुनर्गठित करना

-
8. परीक्षा प्रणाली: छात्रों में रटने की प्रवृत्ति को निरुत्साहित करके निरन्तर और समग्र मूल्यांकन को प्रभावी बनाना
 9. स्त्री शिक्षा: स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न पाठ्यक्रमों और योजनाओं का निर्माण करना
 10. पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा और प्राथमिक शिक्षा: पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा और प्राथमिक शिक्षा के लिए विशेष योजनाएं बनाना।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत सरकार द्वारा लागू की गई एक व्यापक नीति है, जिसका उद्देश्य भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार करना और इसे 21वीं सदी की जरूरतों के अनुरूप बनाना है। यह नीति 1986 की शिक्षा नीति को बदलकर आई है और लगभग 34 साल बाद भारतीय शिक्षा में व्यापक बदलाव लाने का प्रयास करती है।

2.7.3 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मुख्य उद्देश्य (Main Objectives of the National Education Policy 2020)

1. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना: शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना और सभी छात्रों को समान अवसर प्रदान करना।
2. शिक्षा में समानता और समावेशिता: शिक्षा को अधिक समावेशी और समान बनाना, जिससे सभी वर्गों के छात्रों को लाभ हो।
3. समग्र और बहुआयामी विकास: छात्रों के शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास पर ध्यान केंद्रित करना।
4. 21वीं सदी के कौशल विकसित करना: छात्रों को आधुनिक तकनीकी और व्यावसायिक कौशल से लैस करना।
5. भारतीय संस्कृति और मूल्यों का संरक्षण: भारतीय संस्कृति और मूल्यों को शिक्षा में शामिल करना और उनकी रक्षा करना।

2.7.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मुख्य बिंदु (Key Points of the National Education Policy 2020)

1. स्कूली शिक्षा में सुधार: 5+3+3+4 संरचना लागू करना, मातृभाषा में शिक्षा, कक्षा 6 से व्यावसायिक शिक्षा।
2. उच्च शिक्षा में सुधार: मल्टीपल एंट्री और एग्जिट विकल्प, क्रेडिट बैंक प्रणाली, एकल नियामक निकाय।

-
3. शिक्षकों और शिक्षण प्रणाली में सुधार: शिक्षकों के प्रशिक्षण और विकास पर ध्यान केंद्रित करना।
 4. डिजिटल शिक्षा और तकनीकी सुधार: शिक्षा में तकनीकी का उपयोग बढ़ाना और डिजिटल शिक्षा को प्रोत्साहित करना।
 5. व्यावसायिक शिक्षा पर जोर: व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ावा देना और छात्रों को रोजगारोन्मुख बनाना।

2.7.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधारभूत स्तंभ (Fundamental Pillars of the National Education Policy 2020)

1. पहुंच (Access): सभी छात्रों को शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित करना।
2. समानता (Equity): शिक्षा में समानता और समावेशिता को बढ़ावा देना।
3. गुणवत्ता (Quality): शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना।
4. वहनीयता (Affordability): शिक्षा को सभी वर्गों के लिए वहनीय बनाना।
5. जवाबदेही (Accountability): शिक्षा प्रणाली में जवाबदेही और पारदर्शिता को बढ़ावा देना।¹

2.7.6 भारत में स्वतंत्रता के बाद बनी शिक्षा समितियां और आयोग (Education committees and commissions formed in India after independence)

1. डॉ. एस. राधाकृष्णन आयोग (1948-49) – विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) की स्थापना।
2. मुदालियर शिक्षा आयोग (1952-53) – इसे माध्यमिक शिक्षा आयोग भी कहा जाता है
3. डॉ. डीएस कोठारी आयोग(1964)– इसमें सामाजिक उत्तरदायित्व व नैतिक शिक्षा पर ध्यान दिया गया
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर पुनर्विचार – 1992 – एक सजग व मानवतावादी समाज के लिए शिक्षा का इस्तेमाल। इसे आचार्य राममूर्ति समिति भी कहा जाता है।
6. एम. बी. बुच समिति (1989) – दूरस्थ शिक्षा माध्यम पर बनी पहली शिक्षा समिति।
7. जी.राम रेड्डी समिति (1992) – दूरस्थ शिक्षा पर केन्द्रीय परामर्श समिति
8. प्रोफेसर यशपाल समिति (1992) – बोझमुक्त शिक्षा की संकल्पना
9. रामलाल पारेख समिति (1993) – बी०एड० पत्राचार समिति
10. प्रो. खेरमा लिंगदोह समिति (1994) – पत्राचार बी०एड० अवधि 14 माह तय की गई
11. प्रो. आर टकवाले समिति (1995)– सेवारत अध्यापकों हेतु पत्राचार से बी०एड०
12. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2005) – ज्ञान आधारित समाज की संकल्पना व प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा को अनिवार्य करने की सिफारिश की गई
13. जस्टिस जे एस वर्मा समिति (2012) – शिक्षकों की क्षमता की समय-समय पर जाँच

14. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2017) - राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2017 का मसौदा तैयार करने के लिए प्रख्यात अंतरिक्ष वैज्ञानिक एवं पद्मविभूषण डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में 9 सदस्यीय समिति का गठन किया गया है।

2.8 शैक्षिक पुनर्गठन (Educational Restructuring)

शैक्षिक पुनर्गठन का अर्थ है शिक्षा व्यवस्था में ऐसा व्यापक और सुनियोजित परिवर्तन करना जिससे शिक्षा अधिक प्रभावी, समावेशी और आधुनिक बन सके। यह प्रक्रिया न केवल पाठ्यक्रम में बदलाव तक सीमित रहती है, बल्कि इसमें शिक्षण पद्धतियों, मूल्यांकन प्रणाली, शिक्षक प्रशिक्षण, प्रबंधन प्रणाली और नीति-निर्माण तक का समावेश होता है। वर्तमान समय में समाज, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और वैश्विक आवश्यकताओं में निरंतर परिवर्तन हो रहा है, जिसके अनुरूप शिक्षा प्रणाली को भी समय-समय पर पुनर्गठित करना आवश्यक हो जाता है। शैक्षिक पुनर्गठन के अंतर्गत विद्यार्थियों को रटने की बजाय सोचने, समझने और व्यवहार में उतारने की प्रेरणा दी जाती है। यह प्रक्रिया शिक्षा को केवल प्रमाण पत्र प्राप्त करने का माध्यम न बनाकर, जीवन जीने की कला सिखाने वाला साधन बनाने की दिशा में कार्य करती है। भारत में नई शिक्षा नीति 2020 इसका एक प्रमुख उदाहरण है, जिसमें पाठ्यचर्या की लचीलापन, मातृभाषा में शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और मूल्यांकन की नई प्रणाली को बढ़ावा दिया गया है। इस प्रकार, शैक्षिक पुनर्गठन एक गतिशील प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य शिक्षा को अधिक प्रासंगिक, गुणवत्तापूर्ण और सबके लिए सुलभ बनाना है।

2.8.1 शैक्षिक पुनर्गठन के घटक (Components of Educational Restructuring)

शैक्षिक पुनर्गठन एक व्यापक प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षा प्रणाली के विभिन्न पहलुओं में बदलाव और सुधार किए जाते हैं। इस पुनर्गठन के कई महत्वपूर्ण घटक होते हैं, जो शिक्षा की गुणवत्ता, समावेशन और प्रभावशीलता को बढ़ाने में सहायक होते हैं। नीचे शैक्षिक पुनर्गठन के मुख्य घटकों की विस्तृत व्याख्या की गई है:

1. पाठ्यक्रम का पुनर्निर्माण

पाठ्यक्रम शैक्षिक पुनर्गठन का सबसे महत्वपूर्ण घटक होता है। इसमें पाठ्यक्रम को विद्यार्थियों की रुचि, समाज की जरूरतों, तकनीकी प्रगति और वैश्विक मानकों के अनुरूप संशोधित किया जाता है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों को ज्ञान का व्यावहारिक और समसामयिक अनुभव देना होता है ताकि वे जीवन में बेहतर निर्णय ले सकें।

2. शिक्षण पद्धतियों का सुधार

पारंपरिक शिक्षण पद्धतियाँ जैसे केवल व्याख्यान और रटान पर आधारित शिक्षा को छोड़कर, सक्रिय और सहभागी शिक्षण को बढ़ावा देना आवश्यक होता है। इसमें परियोजना आधारित शिक्षण, समूह चर्चा, प्रयोग, तकनीक का उपयोग जैसे आधुनिक तरीकों को अपनाया जाता है ताकि छात्र अधिक रुचि लेकर सीख सकें।

3. मूल्यांकन प्रणाली का आधुनिकीकरण

मूल्यांकन का उद्देश्य केवल परीक्षा में अंक प्राप्त करना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास को देखना होना चाहिए। इसलिए, शैक्षिक पुनर्गठन के अंतर्गत सतत एवं समग्र मूल्यांकन (CCE) प्रणाली को अपनाया जाता है, जिसमें छात्र की प्रगति, रचनात्मकता, व्यवहारिक कौशल, और सोचने की क्षमता को भी परखा जाता है।

4. शिक्षक प्रशिक्षण और विकास

शिक्षक शैक्षिक पुनर्गठन के सबसे महत्वपूर्ण अंग होते हैं। उन्हें नए शिक्षण विधियों, तकनीकी उपकरणों, और मूल्यांकन के तरीकों के बारे में प्रशिक्षित किया जाता है। निरंतर प्रशिक्षण से शिक्षक अपनी योग्यता बढ़ाते हैं और शिक्षा को और प्रभावी बनाते हैं।

5. शैक्षणिक प्रबंधन और प्रशासन

शैक्षिक संस्थानों का प्रबंधन पारदर्शी, उत्तरदायी और कुशल होना चाहिए। पुनर्गठन के तहत शैक्षणिक प्रशासन में विकेंद्रीकरण, संसाधनों का उचित उपयोग, और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में भागीदारी बढ़ाने पर ध्यान दिया जाता है। इससे संस्थान बेहतर ढंग से काम करते हैं और छात्रों की जरूरतों को समझ पाते हैं।

6. समावेशी और समान शिक्षा

शैक्षिक पुनर्गठन का एक महत्वपूर्ण घटक यह सुनिश्चित करना है कि सभी वर्गों के बच्चों को समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले। विशेष रूप से आर्थिक रूप से कमजोर, अल्पसंख्यक, और दिव्यांग बच्चों के लिए विशेष प्रावधान किए जाते हैं ताकि वे भी शिक्षा में पीछे न रहें।

7. तकनीकी संसाधनों का समावेश

आधुनिक शिक्षा में तकनीक का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। शैक्षिक पुनर्गठन के तहत स्कूलों और महाविद्यालयों में डिजिटल उपकरण, इंटरनेट, स्मार्ट क्लासरूम, और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म को शामिल किया जाता है, जिससे शिक्षा और अधिक रोचक और प्रभावी बनती है।

शैक्षिक पुनर्गठन के ये घटक शिक्षा को जीवन के लिए उपयुक्त, समकालीन, और सर्वव्यापी बनाने में मदद करते हैं। इनके माध्यम से शिक्षा प्रणाली में न केवल सुधार होता है, बल्कि यह छात्रों के सर्वांगीण विकास का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. किसके अनुसार “शिक्षा पूर्णतया सैद्धांतिक और साहित्यिक नहीं थी, अपितु किसी न किसी शिल्प से सम्बन्धित थी।”

(अ) डॉ० राधाकृष्णन

(ब) डॉ० आर० के० मुखर्जी

(स) डॉ० भीमराव अम्बेडकर

(द) अल्लेकर

2. किसने अनुसार “ऐसा कोई भी देश नहीं है जहां ज्ञान के प्रति अतीत काल में इतना प्रेम हो, या ज्ञान का इतना स्थायी और शक्तिशाली प्रभाव हो। वैदिक काल के सादा कवियों से लेकर, आजकल के बंगाली दार्शनिकों, शिक्षकों और विद्वानों का एक अटूट क्रम भारत में मिलता है।”

(क) थामस के अनुसार

(ख) डॉ० आर० के० मुखर्जी के अनुसार

(ग) महात्मा गाँधी के अनुसार

(घ) इनमें से कोई नहीं

3. विस्मिल्लाह रस्म किस वर्ष में किया जाता है

(क) 4 वर्ष 4 माह 4 दिन में

(ख) 4 वर्ष 5 माह 6 दिन

(ग) 5 वर्ष 4 माह 4 दिन

(घ) इनमें से कोई नहीं

4. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन कब किया गया।

(क) 1948-49

(ख) 1953-54

(ग) 1947-48

(घ) इनमें से कोई नहीं

5. 1954 में ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में भेजा गया वुड्स डिस्पेच किस क्षेत्र से सम्बंधित था।

(क) भारत के राजनीतिक मामले

(ख) भारतीय शिक्षा से

(ग) भारत में रेलवे के विकास से

(घ) भारत में औद्योगिक विकास से

6. क्रेडिट बैंक प्रणाली सम्बन्धित है

(क) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986

(ख) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

2.9 सारांश

भारतीय शिक्षा प्रणाली” एक बहुआयामी दृष्टिकोण है जिसमें गुण और दोष दोनों सम्मिलित हैं। हालांकि यह गुणवत्ता संबंधी असमानताओं और रटकर सीखने जैसे मुद्दों से जूझ रहा है, लेकिन डिजिटल परिवर्तन, नवीन शिक्षण विधियों और व्यावसायिक शिक्षा जैसे सुधार के लिए अवसर भी प्रदान करता है। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, जो वैदिक युग से सम्बन्धित है, ने विद्यार्थी के समग्र विकास, आध्यात्मिक विकास और सामाजिक विकास पर जोर दिया। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली आधुनिक शिक्षा के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती है, जो महत्वपूर्ण सोच, रचनात्मकता और चरित्र निर्माण को बढ़ावा देती है। इस प्रकार के सिद्धांतों को एकीकृत करके, हम एक अधिक व्यापक और समावेशी शिक्षा प्रणाली बना सकते हैं, जो छात्रों को देश काल परिस्थिति के अनुसार और निरंतर बदलती दुनिया के लिए तैयार करती है। शिक्षण शिक्षार्थियों के जीवन के सभी पक्षों और क्षमताओं का संतुलित विकास करता है इसके लिए पाठ्यक्रम में विज्ञान और गणित के अलावा बुनियादी कला, शिल्प, मानविकी और व्यायाम, भाषा, साहित्य तथा मूल्य आधारित शिक्षा का समावेश किया जाना चाहिए। शिक्षा से चरित्र निर्माण होता है, विद्यार्थियों में नैतिकता, तार्किकता और संवेगात्मक विकास को विकसित करना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में तैयार की गई है ज्ञान प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय विचार परंपरा में सदा सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना गया है प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा स्कूल के बाद के जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञान अर्जन नहीं बल्कि पूर्ण आत्मज्ञान और मुक्ति के रूप में माना गया है। तक्षशिला नालंदा विक्रमशिला और वल्लभी जैसे प्राचीन भारत के विश्व स्तरीय संस्थाओं ने अध्ययन के विविध क्षेत्रों में शिक्षक और शोध के प्रतिमान स्थापित किए थे। प्राचीन काल में अध्ययन का स्रोत केवल पुस्तक ही नहीं बल्कि विद्वान जनों का भाषण भी था। छात्र विद्यार्जन के साथ-साथ कुश्ती, घुड़सवारी, ज्योतिष शास्त्र जैसी कलाएं भी सीखते थे और अपने गुणों का विकास करते थे।

2.10 शब्दावली (Vocabulary)

- चित्तवृत्तियों का निरोध- चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। अर्थात् योग साधना के द्वारा मन की बहिर्मुखी वृत्तियों को अन्तर्मुखी वृत्तियों में परिवर्तित करना ही चित्त है।
- बिस्मिल्लाह रस्म- बिस्मिल्लाह रस्म एक महत्वपूर्ण इस्लामी परंपरा है, जिसमें बच्चे को पहली बार कुरान पढ़ने और लिखने की शुरुआत करने के अवसर पर एक समारोह आयोजित किया जाता है।

- समान विद्यालय प्रणाली- कॉमन स्कूल सिस्टम एक शिक्षा प्रणाली है जिसमें सभी छात्रों को समान शिक्षा प्रदान की जाती है, चाहे उनकी सामाजिक, आर्थिक, या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो।
- बौद्ध मठ- बौद्ध मठ एक ऐसा स्थान है जहां बौद्ध भिक्षु और भिक्षुणियां रहते हैं और ध्यान, अध्ययन, और सेवा के माध्यम से अपने जीवन को समर्पित करते हैं।
- प्रव्रज्या - प्रव्रज्या एक महत्वपूर्ण बौद्ध परंपरा है, जिसमें एक व्यक्ति बौद्ध भिक्षु या भिक्षुणी बनने के लिए दीक्षा लेता है।
- समानेर- सामनेर एक ऐसा व्यक्ति होता है जो बौद्ध भिक्षु बनने के लिए प्रशिक्षण ले रहा होता है, लेकिन अभी तक पूरी तरह से भिक्षु नहीं बना है।
- क्रेडिट बैंक प्रणाली- एकेडमिक बैंक क्रेडिट एक ऐसी प्रणाली है जिसमें छात्रों को उनके शैक्षिक प्रदर्शन के आधार पर क्रेडिट दिए जाते हैं।
- मल्टिपल एंट्री और एग्जिट विकल्प- मल्टीपल एंट्री और एग्जिट विकल्प एक शैक्षिक प्रणाली है जिसमें छात्रों को विभिन्न स्तरों पर प्रवेश करने और छोड़ने का अवसर मिलता है।

2.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. डॉ० आर० के० मुखर्जी
2. थामस
3. 4 वर्ष 4 माह 4 दिन
4. 1948-49
5. भारतीय शिक्षा से
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

2.12 संदर्भ ग्रंथ

1. वशिष्ठ, विजेंद्र कुमार (2007) भारतीय शिक्षा का इतिहास, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
2. पाठक, पी० डी० (2011) भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा
3. गुप्त (डॉ०), नाथूलाल (2005) प्राचीन भारतीय शिक्षा और शिक्षाशास्त्री, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
4. रजा, मुनिस (1999) शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम, ग्रन्थ शिल्पी प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली

5. किसलय (डॉ०), शरदेन्दु व प्रसाद (डॉ०), गोविन्द (2011) भारत में शिक्षा का विकास, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

6. <https://testbook.com/hi/ias-preparation/education-system-in-india>

7. <https://www.pratiyogitamitra.com/2025/02/blog-post.html>

2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय शिक्षा प्रणाली की मुख्य विशेषताएं क्या-क्या हैं?
2. प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली के मुख्य उद्देश्य क्या थे, व्याख्या कीजिये?
3. प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली और मध्यकालीन शिक्षा प्रणाली के मध्य क्या-क्या समानताएं हैं?
4. वेदकालीन शिक्षा व्यवस्था की विशेषताओं की व्याख्या कीजिये?

इकाई – 3

विशेष शिक्षा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

Historical Perspective of Special Education

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य भारतीय संदर्भ में
 - 3.3.1 वैदिक और महाकाव्य साहित्य
 - 3.3.2 प्रथम शताब्दी से 17 वीं शताब्दी तक
 - 3.3.3 18 वीं शताब्दी के अंतर्गत
 - 3.3.4 19 वीं शताब्दी के अंतर्गत
 - 3.3.5 20वीं शताब्दी के अंतर्गत
 - 3.3.6 21वीं शताब्दी के अंतर्गत
- 3.4 संवैधानिक प्रावधान और नीति निर्देशक सिद्धांत
 - 3.4.1 स्वतंत्रता के बाद का प्रारंभिक काल (1947-1970 का दशक):
 - 3.4.2 1980-1990 का दशक: नीतिगत बदलाव और कानून
 - 3.4.3 2000 का दशक: समावेशी शिक्षा और कानूनी सुदृढीकरण
 - 3.4.4 अनुच्छेद
- 3.5 विकलांगता के बदलते प्रतिमान
- 3.6 विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा की उभरती अवधारणा (अधिकार-आधारित दृष्टिकोण)
- 3.7 अधिकार-आधारित दृष्टिकोण को लागू करने के लिए व्यावहारिक रणनीतियाँ
- 3.8 सारांश
- 3.9 शब्दावली
- 3.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
- 3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारत में अष्टावक्र, धृतराष्ट्र, सूरदास, मंथरा जैसे दिव्यांग व्यक्ति हुए जिन्होंने अपनी दिव्यगता के बाद भी समाज में अहम भूमिका निभाई भारतीय शिक्षा व्यवस्था में दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के लिए अलग से कोई व्यवस्था नहीं थी समाज और राजाओं के संरक्षण में ही इन लोगों की देखभाल हुआ करती थी भारत एक शानदार अपवाद था। सम्राट अशोक ने विकलांग व्यक्तियों की देखभाल के लिए विशेष अधिकारी नियुक्त किए थे। भारत में मुख्यधारा की शिक्षा प्रणाली से बाहर विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा की एक अलग प्रणाली के रूप में विशेष शिक्षा 1880 के दशक में विकसित हुई थी। बधिरों के लिए पहला स्कूल 1883 में बॉम्बे में और अंधों के लिए पहला स्कूल 1887 में अमृतसर में स्थापित किया गया था। भारत में, विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए शिक्षा की यात्रा एक क्रमिक प्रक्रिया रही है, जो अलगाव से अधिक समावेशी दृष्टिकोण की ओर विकसित हुई है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप –

- विशेष शिक्षा के भारतीय ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को परिभाषित कर सकेंगे।
- विशेष आवश्यकता वाले भारतीय बच्चों के विकास को जान पाएंगे।
- विशेष शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान और नीति निर्देशक सिद्धांत जान पाएंगे।
- विकलांगता के बदलते प्रतिमानों को समझ सकेंगे
- विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा की उभरती अवधारणा (अधिकार-आधारित दृष्टिकोण) को समझ सकेंगे

3.3 विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य भारतीय संदर्भ में:

अथर्ववेद में यह जानकारी मिलती है कि इस काल में भारत में विकलांगों के उपचार हेतु गर्म एवं ठंडी जल का उपयोग, विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियां, वृक्षों तथा पत्तियों का प्रयोग उपचार हेतु औषधि के रूप में किया जाता था तथा विभिन्न प्रकार के योग चिकित्सा पद्धति का भी प्रयोग किया जाता रहा है अतः इससे स्पष्ट हो जाता है कि अक्षम व्यक्तियों की देखभाल करना आदिकाल से ही भारतीय परंपरा एवं संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है इतनी जागरूकता के बावजूद भी प्राचीन समय में विकलांगों की दशा सोचनीय ही थी लोगों में अंधविश्वास था जिसके कारण उनके लिए किसी प्रकार की कल्याणकारी व्यवस्था नहीं थी इस प्रकार के लोग विकलांगों को अभिशाप तथा पूर्व जन्मों का पाप मानते थे इसका

परिणाम इतिहास में विकृत संतानों को मारने के रूप में सामने आता है चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में मौर्य काल के अर्थशास्त्र में उल्लेख है कि राजा कौटिल्य ने विकलांगों हेतु अपमानजनक शब्दों के उपयोग करने पर प्रतिबंध लगाया था तथा उनकी रक्षा के लिए विशेष कानून भी बनाए थे उन्होंने कई विकलांगों को विशेषकर मूक बधिरों को अपने विशेष गुप्तचर के रूप में रखा था लगभग 1000 ईसा पूर्व के समय शास्त्र ग्रंथ एवं उपनिषद में दोषपूर्ण संतानों को जन्म लेने के कारण माता-पिता का चिंता युक्त होना कहा गया है इसी काल में कुछ महान पुरुष हुए थे जैसे महात्मा अष्टवक्र शारीरिक रूप से विकलांग थे भगवान श्री कृष्ण के मित्र सुदामा, इसी प्रकार राजा धृतराष्ट्र का वर्णन है जो दृष्टिहीन थी महान चिकित्सक चरक ने भी मंदबुद्धि के विभिन्न कर्म को बताया तथा विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण भी इसी काल में किया गया भारतीय हिंदू संस्कृति तथा बहुत ने विचारक ने अन्य देशों के समान ही इन्हे पूर्व जन्मों के पाप का फल कहा मनु संहिता में भी इनकी होने का कारण पूर्व अपराध कहा गया 5000 ईसा पूर्व के समय रामायण काल में मंद बुद्धि का उल्लेख रानी कैकेयी की की दासी मंथरा के रूप में मिलता है

3.3.1 वैदिक और महाकाव्य साहित्य

वैदिक और महाकाव्य भारत में, विकलांग व्यक्तियों के प्रति दृष्टिकोण जटिल था, जहाँ कुछ साहित्य उनके समर्थन पर जोर देते थे, वहीं कुछ अन्य कर्म-आधारित नकारात्मक विचारों को दर्शाते थे। वैदिक काल और महाभारत में युद्ध-विकलांग व्यक्तियों के लिए राज्य-समर्थित देखभाल और अंधे राजा धृतराष्ट्र और बुद्धिमान, विकृत ऋषि अष्टवक्र जैसे व्यक्तियों के प्रति सम्मान का वर्णन मिलता है। हालाँकि, यह व्यापक प्राचीन सामाजिक दृष्टिकोणों से विपरीत था, जो विकलांगता को पिछले पापों का परिणाम मानते थे और अक्सर अलगाव का कारण बनते थे। हालाँकि उस समय कोई औपचारिक "विशेष शिक्षा" प्रणाली नहीं थी, फिर भी कर्म की अवधारणाओं ने सामाजिक दृष्टिकोणों को प्रभावित किया, और आयुर्वेद जैसी प्राचीन चिकित्सा प्रणालियों ने उपचार प्रदान किए, जिससे पुनर्वास की नींव पड़ी।

वैदिक काल (लगभग 1500 - 1000 ईसा पूर्व)

देखभाल और सहायता: ऋग्वेद में स्वयं कमजोर और विकलांगों के लिए सेवाओं का उल्लेख है, जो राज्य या सामाजिक उत्तरदायित्व की एक सीमा का संकेत देता है।

कर्म और कारण: कर्म और कर्मफल (कर्मों के फल) में विश्वास प्रचलित थे, और कुछ लोग विकलांगता को पिछले पापों का परिणाम मानते थे। इसने एक मिश्रित धारणा को जन्म दिया, जहाँ सहायता के साथ-साथ एक संभावित कलंक भी दिया जाता था।

महाकाव्य साहित्य (महाभारत और रामायण)

विरोधाभासी चित्रण: धृतराष्ट्र: महाभारत के अंधे राजा, जिन्हें दृष्टिबाधित होने के बावजूद गुरुकुल में शिक्षा दी गई थी।

अष्टावक्रः आठ विकृतियों के साथ जन्मे एक ऋषि, जिन्होंने उपहास पर विजय प्राप्त कर दार्शनिक शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की और एक पूजनीय गुरु बने। हालाँकि, इस कथा की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि विकलांग व्यक्तियों में बुनियादी सम्मान अर्जित करने के लिए असाधारण गुण होने चाहिए। सामाजिक उत्तरदायित्वः महाकाव्य में महाभारत जैसी चर्चाएँ भी हैं, जहाँ विकलांगों (विशेषकर युद्ध में घायल हुए लोगों) को राज्य द्वारा सहायता प्रदान करने के महत्व को स्वीकार किया गया है।

नकारात्मक दृष्टिकोणः सम्मान के साथ-साथ, व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण भी थे जो विकलांग व्यक्तियों को बोझ के रूप में चित्रित करते थे, जो उस काल के जटिल और अक्सर नकारात्मक दृष्टिकोणों को दर्शाता था।

प्रारंभिक शिक्षा और चिकित्सा प्रणालियाँ

अनौपचारिक शिक्षाः इस युग में, शिक्षा मुख्यतः गुरुकुलों में होती थी जहाँ सभी बच्चे एक साथ शिक्षा ग्रहण करते थे। हालाँकि "विकलांगता" के लिए कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं थी, फिर भी कुछ समायोजन किए गए थे।

चिकित्सा परंपराएँः आयुर्वेद जैसी प्रणालियों ने विकलांगताओं को पहचाना और जड़ी-बूटियों, मालिश और शारीरिक उपचारों के माध्यम से उपचार प्रदान करने का प्रयास किया। इसने भविष्य के पुनर्वास दृष्टिकोणों की नींव रखी।

समग्र दृष्टिकोण

एक दोहरी प्रकृतिः प्राचीन और महाकाव्य साहित्य एक द्वैतवादी दृष्टिकोण दर्शाता है: एक ओर, करुणा और कमजोर व विकलांगों के समर्थन में विश्वास, और दूसरी ओर, पिछले कर्मों से जुड़ी विकलांगता का कलंक।

शैक्षिक पद्धतियाँः कुछ विद्वानों का सुझाव है कि गुरुकुल प्रणाली में, शिक्षा को सभी विद्यार्थियों, जिनमें विकलांग भी शामिल हैं, की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यक्तिगत बनाया जाता था। हालाँकि, वैदिक काल में विकलांगों के लिए विशिष्ट शैक्षिक व्यवस्था के बहुत कम प्रमाण मिलते हैं।

3.3.2 प्रथम शताब्दी से 17 वीं शताब्दी तक

प्रथम शताब्दी के बाद से विकलांगता का कोई विस्तृत इतिहास नहीं प्राप्त होता फिर भी कुछ तथ्य तथा खोजकर्ताओं के अनुसंधान के परिणाम स्वरूप प्राप्त साक्ष्य प्रस्तुत किए जा रहे हैं साक्ष्य के अनुसार 320 - 480 ई गुप्त सम्राट के समय में शारीरिक रूप से विकलांगों के व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं पुनर्वास के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया गया था इसी समय सभी धर्मों हिंदू, बौद्ध, जैन तथा इस्लाम आदि के उपदेशों में अक्षम व्यक्तियों को सम्मान देने तथा उन्हें सेवा दान हेतु करने को कहा गया है सम्राट अशोक के समय मठों में अर्थशास्त्र में पाटलिपुत्र के वर्णित चिकित्सालयों में विकलांग व्यक्तियों की देखभाल उपचार की व्यवस्था थी प्रथम शताब्दी के अंतर्गत विशेष शिक्षा की विश्व की पहली

पाठ्यपुस्तक पंचतंत्र की रचना हुई इस किताब की रचना पंडित विष्णु शर्मा ने किया था पंडित विष्णु शर्मा राजा अमर शक्ति के दरबारी थे उन्होंने राजा के मंदबुद्धि पुत्रों को शिक्षा देने हेतु पंचतंत्र की रचना की जिसे आज तक की सबसे सर्वश्रेष्ठ पाठ्य पुस्तक की संज्ञा दी जाती है 17वीं सदी में भारत में पूर्ववत तरीकों से ही विकलांगों को सुरक्षा की जाती थी इस काल में सूरदास जो जन्मजात दृष्टिहीन थे ने भगवान कृष्ण के गुणों को कविताओं के रूप में रचा इसी काल में मराठा और पेशवाओं ने गुप्तचर एवं जासूसी करवाई हेतु अपने कर्मचारियों में श्रवण बाधित लोगों की नियुक्ति की थी इस प्रकार इस काल में विकलांगों की सामाजिक स्थिति में काफी बदलाव आया तथा इसी के परिणाम स्वरूप विकलांगों की शिक्षण प्रशिक्षण के लिए सोचा जाने लगा इस प्रकार हम देखते हैं की सदी के पूर्व में आई शताब्दियों के इतिहास में विकलांगों की व्यवस्थित शिक्षण प्रशिक्षण की कोई विशेष जानकारी नहीं मिलती है

3.3.3 18वीं शताब्दी के अंतर्गत

भारत में 18वीं शताब्दी में, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की काफी हद तक उपेक्षा की जाती थी, उनकी शिक्षा के लिए जागरूकता या सहायता सीमित थी। शिक्षा की एक अलग शाखा के रूप में विशेष शिक्षा की अवधारणा 18वीं शताब्दी के अंत में उभरने लगी। जबकि कोई समर्पित विशेष विद्यालय मौजूद नहीं थे, मौजूदा शैक्षिक संरचनाओं के भीतर या धर्मार्थ प्रयासों के माध्यम से कुछ प्रकार की सहायता प्रदान की जा सकती थी, हालांकि ये व्यापक या व्यवस्थित नहीं थे। विशेष आवश्यकताओं वाले लोगों सहित सभी के लिए शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना बहुत बाद में विकसित हुआ।

- उपेक्षा और सीमित सहायता: 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से पहले, विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को अक्सर मुख्यधारा की शिक्षा से बाहर रखा जाता था और उन्हें बहुत कम या कोई सहायता नहीं मिलती थी। विकलांगता के बारे में समाज की समझ सीमित थी, और इन बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं के बारे में जागरूकता की कमी थी।
- विशेष शिक्षा का उद्भव: जैसे-जैसे जागरूकता बढ़ी, विशेष रूप से 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, एक अलग क्षेत्र के रूप में विशेष शिक्षा का विचार जोर पकड़ने लगा। यह बदलाव यूरोप में हुए विकास से प्रभावित था, जहाँ एल'एपी और हाउ जैसे अग्रणी व्यक्तियों ने बधिरों और अंधे लोगों के लिए शुरुआती स्कूल स्थापित किए।
- सहायता के शुरुआती रूप: विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों के लिए विशिष्ट विशेष स्कूल अभी तक प्रचलित नहीं थे, कुछ प्रकार की सहायता निम्नलिखित माध्यमों से प्रदान की गई होगी:
 - परिवार-आधारित देखभाल: परिवार प्राथमिक देखभालकर्ता हो सकते हैं, जो घर पर विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों को सहायता और शिक्षा प्रदान करते हैं।

- धर्मार्थ संगठन: कुछ धर्मार्थ संस्थाओं ने सीमित देखभाल और सहायता प्रदान की होगी, लेकिन यह अक्सर व्यापक नहीं होती थी।
- मुख्यधारा की शिक्षा व्यवस्था: कुछ मामलों में, विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों को नियमित कक्षाओं में शामिल किया जा सकता था, हालाँकि उन्हें अक्सर मुख्यधारा के पाठ्यक्रम के अनुकूल होने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता था।
- सुधार की आवश्यकता: 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शिक्षा में सुधार की आवश्यकता के बारे में जागरूकता बढ़ी और यह सुनिश्चित किया गया कि विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों सहित सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच मिले। इसके कारण अगली शताब्दियों में विशेष शिक्षा के लिए अधिक संरचित और व्यवस्थित दृष्टिकोण विकसित हुए।

3.3.4 19वीं शताब्दी के अंतर्गत

19वीं शताब्दी के प्रारंभ में पहली बार क्रमबद्ध तरीके द्वारा विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए प्रयास किए गए सन 1826 ई में उत्तर भारत में विशेष शिक्षा का शुभारंभ राजा काली शंकर घोषाल ने बनारस में अंधों के लिए पाठशाला की स्थापना करके किया 1867 में मद्रास सरकार ने मद्रास नगरपालिका सीमा के बाहर किलपौक में 66.5 एकड़ भूमि पर मद्रास पागलखाने (एमएलए) के निर्माण को औपचारिक रूप से मंजूरी दी। 15 मई, 1871 को 145 रोगियों के साथ नए भवन में पागलखाने ने काम करना शुरू किया। 1922 में एमएलए का नाम बदलकर सरकारी मानसिक अस्पताल कर दिया गया। 1977 में अस्पताल का नाम बदलकर मानसिक स्वास्थ्य संस्थान (आईएमएच) कर दिया गया। बधिरी के लिए पहला स्कूल 1883 में बॉम्बे में और 1887 ई में श्रीमती एनिशार्प जो मिशनरी संस्थापिका थी ने भारत में प्रथम दृष्टिबाधित विद्यालय की स्थापना अमृतसर में की जो बाद में 1903 में देहरादून में शार्प मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइंड के नाम से स्थापित किया गया 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में संपूर्ण भारत में छोटी-छोटी केंद्र खुल चुके थे जहां अक्षम लोगों को व्यक्तिगत अथवा एकीकृत शिक्षा पद्धति के अंतर्गत शिक्षा व व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाने लगा

3.3.5 20 वीं शताब्दी के अंतर्गत

इस शताब्दी के प्रारंभ में मानसिक पिछड़े बच्चे जो विद्यालय नहीं जाते थे उन्हें इकट्ठा करके एक विद्यालय प्रारंभ किया गया पर यह सामान्यतः सफल नहीं रहा शताब्दी के बाद में बुद्धि लब्धि जांच, मानसिक पिछड़ों के स्तर के निश्चितता आदि के बाद ये विद्यालय सफल होने लगे । दृष्टि दोष वाले बच्चों के लिए दिवसीय विद्यालय प्रारंभ किए गए पालकों ने इस तरह के विद्यालयों का भी स्वागत किया उन्हें स्वीकारा तथा सहयोग भी प्रदान किया क्योंकि उन्हें आवासीय सुविधा भी उपलब्धि थी आंशिक

विकलांग व्यक्तियों के लिए विद्यालय तो थे पर पूर्णतया विकलांग के लिए संभव नहीं था समस्यात्मक व्यवहार और शैक्षिक उपलब्धि वाले बच्चों के लिए कुछ कक्षाएं होती थी परंतु बोलने में समस्या वाले बच्चों के लिए कोई विशिष्ट कार्यक्रम नहीं थे 1900 ई के आसपास विश्व में विकलांग बच्चों के लिए प्रारंभिक शिक्षा के प्रयास किए गए परंतु इसमें थोड़ी ही सफलता मिली

अहमदाबाद, भारत में मूक-बधिर विद्यालय की स्थापना 1908 में की गई थी। यह श्रवण, वाणी और दृष्टिबाधित व्यक्तियों के लिए शिक्षा और पुनर्वास के क्षेत्र में काम करने वाले सबसे पुराने संगठनों में से एक है। 1914 ईस्वी में प्रथम विश्व युद्ध के प्रारंभ में ही अक्षम बच्चों के लिए शिक्षा प्रशिक्षण का कार्य प्रारंभ हुआ सरकारी लेडी नोयस स्कूल फॉर हियरिंग इम्पेयर्ड चिल्ड्रन इसकी स्थापना 2 नवंबर, 1931 को शिक्षाविद श्री कालिदास भट्टाचार्य ने दिल्ली में की (वर्तमान में जिसका प्रबंधन दिल्ली सरकार के सामाजिक कल्याण विभाग द्वारा किया जाता है) जिसके साथ ही सरकार का ध्यान इस तरफ आकर्षित हुआ 1939 में, मानसिक रूप से मंद बच्चों के लिए सरकारी मानसिक अस्पताल में एक अलग विभाग खोला गया था। यह मानसिक रूप से मंद बच्चों को देखने और उनकी देखभाल करने के तरीके में एक महत्वपूर्ण बदलाव को दर्शाता है, जिससे उन्हें सामान्य शरण आबादी से दूर और अधिक विशिष्ट देखभाल की ओर ले जाया गया। इस अवधि में मानसिक मंदता के बारे में बढ़ती समझ और इन बच्चों के लिए विशेष शिक्षा और सेवाओं के लिए जोर भी देखा गया। मुंबई में 1941 में विकलांग बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के लिए चिल्ड्रन्स एड सोसाइटी (CAS) की स्थापना की गई थी इसमें बहरे, दृष्टिहीन और मानसिक रूप से विकलांग बच्चे शामिल हैं। विशेष रूप से, मुंबई के मानखुर्द में मानसिक रूप से विकलांग बच्चों के लिए गृह की स्थापना इस उद्देश्य के लिए एक प्रमुख आवासीय संस्थान के रूप में की गई थी, जो चिल्ड्रन्स एड सोसाइटी के अंतर्गत काम करता है। यह बाल अधिनियम का प्रत्याक्ष परिणाम था कि 1944 में मुंबई एक विशेष आवश्यकता वाला स्कूल स्थापित किया गया “जय वकील” जिसकी शुरुआत श्री और श्रीमती होर्मुस्जी वकील ने अपनी बेटी दीना के लिए की थी, जो डाउन सिंड्रोम के साथ पैदा हुई थी। इस समय तक 50 के दशक में देश के विभिन्न हिस्सों में 11 और केंद्र आरंभ हुए सन 1946 में नेशनल इंस्टीट्यूट आफ मेंटल हेल्थ द्वारा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों की प्रशिक्षण का समर्थन किया गया इसी वर्ष स्वतंत्रता प्राप्ति तक संपूर्ण भारत में लगभग 45 मूक बधिर विद्यालयों की स्थापना हो चुकी थी साथ ही गामक अक्षमता के क्षेत्र में विकास व प्रकृति की भी शुरुआत हो चुकी थी इसी समय प्रथम बनावटी शारीरिक अंग केंद्र की स्थापना पाकिस्तान की सियालकोट शहर में हुई थी कुछ समय पश्चात देश विभाजन के समय भारतीय रक्षा वाहिनी ने कृत्रिम अंग निर्माण केंद्र स्थापित किया जो महाराष्ट्र के पुणे शहर में खोला गया यह केंद्र उन सैनिकों के लिए था जिन्होंने युद्ध में अपने हाथ पैर गंवा दिए थे और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति की दृष्टि से खोला गया था सन 1950 के आस पास दो पुनर्वास केंद्रों की स्थापना हुई जिसमें पहले दिल्ली में तथा दूसरा मद्रास में स्थापित किया गया यह केंद्र

प्रारंभिक रूप गामक अक्षमता से पीड़ित व्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए स्थापित किया गया फलस्वरूप संघीय सरकार का ध्यान इस तरफ आकर्षित हुआ और ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट आफ फिजिकल मेडिसिन एंड रिहैबिलिटेशन का निर्माण मुंबई में हुआ इसके साथ ही स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग केंद्र और राज्य सरकार के शरीर चिकित्सा विभाग और पुनर्वास परिषद के विभाग आदि के सहयोग से विभिन्न स्थानों में जैसे केरल, तमिलनाडु पश्चिम बंगाल, बिहार, जम्मू और कश्मीर तथा मणिपुर आदि स्थानों पर पुनर्वास केंद्र की स्थापना की गई इसका मुख्य उद्देश्य गामक क्षमता पीड़ित व्यक्तियों को पुनर्वास सेवाएं प्रदान करना था मुंबई में दृष्टि अक्षमता से ग्रसित व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय संघ की स्थापना की गई इसका उद्देश्य अक्षमता की रोकथाम एवं बचाव के उपाय करना था शिक्षा अधिनियम 45 के अनुसार 6 से 14 वर्ष के लोगों का विश्वव्यापी स्तर पर शिक्षाकरण में विशेष शिक्षा पर भी जोर दिया गया द फेडरेशन ऑफ द वेलफेयर आफ मेंटली रिटारडेड इंडिया की स्थापना 1965 में हुई इनका मुख्य उद्देश्य मंदबुद्धि व्यक्तियों हेतु विभिन्न प्रकार की सेवा कर मुख्य धारा में समाहित करना है सन 1965-66 में एजुकेशन कमिशन की रिपोर्ट के अनुसार विकलांग बच्चों को जहां तक संभव हो सामान्य विद्यालय में सामायोजन पर बल दिया 1965 से 85 तक समाज में अक्षम व्यक्तियों के प्रति जागरूकता लाने हेतु कार्यक्रम आरंभ तथा संचालित करने के लिए बहुत कार्य किया गया 1968 ईस्वी में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में विशेष विद्यालय एवं समेकित शिक्षा की बात की 1969 से 70 ई को विशिष्ट कक्षाओं का युग कहा जाता है इस समय कई तरह की अपंगता वाले बच्चों को भी सफलतापूर्वक एकीकृत किया जा रहा था इस तरह 20वीं सदी में लोगों द्वारा अक्षम व्यक्तियों स्वीकारने, सकारात्मक प्रवृत्ति बनाने आदि में बदलाव हुआ अदालत और सरकार की कार्यवाही ने अक्षम बच्चों के लिए और अधिक प्राप्त शिक्षा की उपलब्धता के प्रयास को सुनिश्चित किया 1984 में भारत सरकार ने मंदबुद्धि बच्चों के प्रशिक्षण हेतु सामग्री एवं संसाधन जुटाना हेतु राष्ट्रीय मानसिक विकलांग स्थान की स्थापना की गई 1985 ई तक की अवधि में समाज में विकलांग व्यक्तियों के प्रति जागरूकता लाने हेतु कार्यक्रम आरंभ करने तथा संचालित करने के लिए काफी कार्य किया गया इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु चार मुख्य राष्ट्रीय संस्थानों की स्थापना की गई 1986 में भारत सरकार ने भारतीय पुनर्वास परिषद का गठन कर विकलांगों के लिए चलाई जाने वाली कार्यक्रम की गुणवत्ता पर नियंत्रण रखने एवं सेवा संसाधनों की अधिमन्यता के लिए किया विकलांगों को सुविधा उपलब्ध कराने हेतु क्षेत्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गई सन 1986 ईस्वी में राष्ट्रीय शिक्षा नीति पारित की गई जिसमें विकलांगों को भी सामान्य बच्चों जैसी शिक्षा दी जाने का प्रावधान किया गया 1987 ईस्वी में मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम पारित हुआ इसमें विकलांगता की सुरक्षा एवं अधिकारों पर जोर दिया गया सन 1995 में भारत में निशक्त व्यक्ति अधिनियम बना जिसमें कहा गया कि विकलांग व्यक्तियों को सर्वदा उचित वातावरण में रखना चाहिए 1999 ईस्वी में भारत में मानसिक मंद, प्रमसतिकिय पक्षाघात, स्वलीनताग्रस्त बच्चों एवं

बहुविकलांगता के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत राष्ट्रीय न्यास की स्थापना की गई इस प्रकार से सरकारी एवं गैर सरकारी तौर पर राष्ट्रीय में अंतरराष्ट्रीय संगठनों ने 20वीं शताब्दी के अंत तक विकलांगों के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य के जिसमें विकलांगों का पुनर्वास सेवा प्रदान करने के साथ-साथ उन्हें सामान्य कारण प्रदान करते हुए समाज के मुख्य धारा में जुड़े जाने हेतु प्रयास किया गया था

3.3.6 21 वीं शताब्दी के अंतर्गत

21वीं शताब्दी के प्रारंभ में ही दिव्यांग बच्चों की शिक्षा में एक बड़ा बदलाव आया शिक्षा का एक नया रूप सामने आया जिसे समावेशी शिक्षा के रूप में देखा गया कहा गया कि विद्यालय का स्वरूप बदला जाए और विद्यालयों को समावेशी बनाया जाए जिससे की विभिन्न क्षमता वाले बच्चे बिना किसी बाधा के अपनी शिक्षा को पूर्ण कर सकें इसके लिए शिक्षा व्यवस्था में कई बदलाव किए गए जैसे 2002 में सर्व शिक्षा अभियान आया सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) भारत सरकार का एक व्यापक और एकीकृत प्रमुख कार्यक्रम है, जिसका उद्देश्य सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा (यूईई) प्राप्त करना है, जो पूरे देश को मिशन मोड में कवर करता है। एसएसए को 2001-2002 में राज्य सरकारों और स्थानीय स्वशासन के साथ साझेदारी में लॉन्च किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 2010 तक 6 से 14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को उपयोगी और प्रासंगिक, प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना है। इसके बाद 2006 में विकलांग व्यक्तियों के लिए पहली राष्ट्रीय नीति आई विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति, 2006 का उद्देश्य विकलांग व्यक्तियों के लिए समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा और समाज में उनकी पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना है। यह उन्हें मूल्यवान मानव संसाधन के रूप में मान्यता देता है। नीति रोकथाम कार्यक्रमों, पुनर्वास उपायों और बाधा-मुक्त वातावरण बनाने के माध्यम से शारीरिक, शैक्षिक और आर्थिक पुनर्वास प्रदान करने पर केंद्रित है। इसके बाद 2016 में आरपीडब्ल्यूडी एक्ट 2016 आया विकलांग व्यक्तियों के अधिकार (RPwD) अधिनियम, 2016, विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों और सम्मान को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से भारतीय कानून का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह पहले के विकलांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 की जगह लेता है, और विकलांगता की परिभाषा को और अधिक स्थितियों को शामिल करने के लिए विस्तारित करता है। RPwD अधिनियम विकलांग लोगों के लिए समानता, शिक्षा, रोजगार और जीवन के अन्य पहलुओं तक पहुँच को बढ़ावा देने पर केंद्रित है इसके बाद 2020 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति आई जिसने आरपीडब्ल्यूडी एक्ट में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए जितनी भी बातें कही गई थी उसे सम्मिलित किया गया राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारत की शिक्षा प्रणाली में सुधार के लिए एक व्यापक रूपरेखा है, जो पिछली राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 की जगह लेगी। इसका उद्देश्य 21वीं सदी की जरूरतों के अनुरूप एक समग्र, लचीली और बहु-विषयक शिक्षा प्रणाली बनाना है और छात्रों की रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच और समस्या-समाधान

कौशल विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करना है। नीति शिक्षा में पहुंच, समानता, गुणवत्ता, सामर्थ्य और जवाबदेही पर भी जोर देती है।

3.4 संवैधानिक प्रावधान और नीति निर्देशक सिद्धांत

3.4.1 स्वतंत्रता के बाद का प्रारंभिक काल (1947-1970 का दशक):

पृथक्करण पर ध्यान: विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा मुख्यतः गैर-सरकारी संगठनों और परोपकारी लोगों द्वारा संचालित विशेष विद्यालयों तक ही सीमित रही। मुख्यधारा में एकीकरण असामान्य था।

कोठारी आयोग (1964-66): इसने सिफारिश की कि "आशंकिक विकलांगता" वाले बच्चों को नियमित विद्यालयों में शिक्षा दी जाए और पृथक्करण के बजाय एकीकरण की वकालत की।

विकलांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (IEDC) योजना (1974): सरकार ने विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को नियमित विद्यालयों में स्थान दिलाने के लिए इस केंद्र प्रायोजित योजना की शुरुआत की, जिसमें सहायक उपकरणों, पुस्तकों और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की गई। यह एकीकरण की दिशा में पहला आधिकारिक कदम था।

3.4.2 1980-1990 का दशक: नीतिगत बदलाव और कानून

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई), 1986: इस नीति में सुझाव दिया गया था कि कम विकलांगता वाले बच्चों को मुख्यधारा के स्कूलों में शिक्षा दी जानी चाहिए। 1992 में इसके कार्य कार्यक्रम (पीओए) ने एकीकरण के विचार को और आगे बढ़ाया, यह सुझाव देकर कि विकलांग बच्चों को विशेष स्कूलों में बुनियादी जीवन कौशल हासिल करने के बाद मुख्यधारा में शामिल किया जाना चाहिए।

विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995: यह ऐतिहासिक कानून एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। इसने 18 वर्ष तक की आयु के विकलांग बच्चों के लिए उपयुक्त वातावरण में, चाहे वे एकीकृत स्कूलों में हों या विशेष स्कूलों में, मुफ्त शिक्षा को कानूनी रूप से अनिवार्य बना दिया। इसमें स्कूलों से विकलांग विद्यार्थियों के लिए उचित आवास, प्रशिक्षित स्टाफ और सुलभ बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने की भी मांग की गई है।

3.4.3 2000 का दशक: समावेशी शिक्षा और कानूनी सुदृढ़ीकरण

सर्व शिक्षा अभियान (SSA), 2001: इस राष्ट्रीय कार्यक्रम का उद्देश्य सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना था और शिक्षक प्रशिक्षण, बुनियादी ढाँचे और सहायक उपकरणों के लिए संसाधन उपलब्ध कराकर विकलांग बच्चों को मुख्यधारा के स्कूलों में शामिल करने पर जोर दिया गया।

86वाँ संविधान संशोधन, 2002: अनुच्छेद 21A के समावेशन ने शिक्षा के अधिकार को 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों, जिनमें विकलांग बच्चे भी शामिल हैं, के लिए एक मौलिक अधिकार बना दिया।

बच्चों का निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम, 2009: इस अधिनियम ने 86वें संशोधन को सुदृढ़ किया, जिसमें विकलांग बच्चों सहित सभी बच्चों के लिए "न्यूनतम प्रतिबंधात्मक वातावरण" में निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा अनिवार्य कर दी गई।

दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार (RPwD) अधिनियम, 2016: 1995 के अधिनियम का स्थान लेते हुए, यह कानून विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (UNCRPD) के अनुरूप है। इसने मान्यता प्राप्त विकलांगताओं की संख्या का विस्तार किया और "समावेशी शिक्षा" की एक अधिक व्यापक परिभाषा प्रस्तुत की। इसमें यह अनिवार्य किया गया है कि विकलांगता वाले और बिना विकलांगता वाले छात्र उपयुक्त शिक्षण अनुकूलन के साथ एक साथ सीखें।

समग्र शिक्षा योजना: यह समन्वित कार्यक्रम 2018 में सर्व शिक्षा अभियान (SSA), राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA) और शिक्षक शिक्षा को मिलाकर शुरू किया गया था। इसका लक्ष्य प्री-स्कूल से लेकर उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तक समावेशिता को बढ़ावा देना है। इस प्रकार, संसाधन कक्ष, विशेष शिक्षक और समावेशी शिक्षण सहायक सामग्री जैसी सहायता प्रदान की जाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020: विकलांग बच्चों को सामान्य स्कूलों में शामिल करने के लिए समावेशी शिक्षा को सशक्त बनाती है। यह प्रारंभिक पहचान, शिक्षक प्रशिक्षण, उपलब्ध शिक्षण सामग्री और सभी के लिए सुलभता पर केंद्रित है। नीति में प्रस्तुत एक अन्य अवधारणा स्कूल सुधारों में समान और समावेशी शिक्षा के उपयोग की है।

3.4.4 अनुच्छेद:

भारतीय संविधान के कई अनुच्छेद, हालाँकि शुरुआत में विकलांगताओं के लिए विशिष्ट नहीं थे, फिर भी उनकी व्याख्या की गई है और उनका उपयोग विकलांग व्यक्तियों के शैक्षिक अधिकारों की रक्षा के लिए किया गया है।

मौलिक अधिकार:

अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार): विकलांग व्यक्तियों सहित सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता और कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है।

अनुच्छेद 15 (भेदभाव न करना): धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध करता है, जिसे विकलांगता को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है।

अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण): न्यायिक व्याख्याओं ने इस अधिकार का विस्तार करते हुए इसमें सम्मान के साथ जीने का अधिकार और शिक्षा का अधिकार शामिल किया है, जो विकलांग व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होता है।

अनुच्छेद 21ए (शिक्षा का अधिकार): 86वें संशोधन द्वारा सम्मिलित, यह 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की गारंटी देता है।

अनुच्छेद 29(2) (अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण): यह सुनिश्चित करता है कि किसी भी नागरिक को धर्म, मूलवंश, जाति या भाषा के आधार पर किसी भी राज्य-संचालित या राज्य-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश से वंचित नहीं किया जा सकता।

राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (डीपीएसपी):

अनुच्छेद 41: राज्य को अपनी आर्थिक क्षमता के भीतर बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी और विकलांगता के मामलों में सार्वजनिक सहायता के लिए प्रभावी प्रावधान करने का निर्देश देता है।

अनुच्छेद 45: मूल रूप से राज्य को 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का निर्देश दिया गया था, जिसे अब अनुच्छेद 21ए द्वारा पूरक बनाया गया है।

अनुच्छेद 47: राज्य पर जीवन स्तर को ऊपर उठाने और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार करने का कर्तव्य आरोपित करता है, जिसमें विकलांग व्यक्तियों के लिए प्रावधान शामिल हो सकते हैं।

3.5 विकलांगता के बदलते प्रतिमान / changing models of disability

विकलांगता के बदलते मॉडल, दान/चिकित्सा से लेकर सामाजिक और अधिकार-आधारित तक, विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा में बदलाव लाए हैं, जो अलगाव से समावेशी शिक्षा की ओर बढ़ रहा है। विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (सीआरपीडी) द्वारा समर्थित अधिकार-आधारित दृष्टिकोण, राज्यों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक समान पहुँच सुनिश्चित करने के लिए सामान्य शिक्षा प्रणाली में आवश्यक संशोधन और सहायता प्रदान करने का आदेश देता है। प्रमुख तत्वों में उचित समायोजन के माध्यम से व्यक्तिगत आवश्यकताओं को समायोजित करना, सहायक तकनीकों का उपयोग करना, एक समावेशी स्कूल वातावरण को बढ़ावा देना और विकलांगता को एक व्यक्तिगत कमी के बजाय एक मानवाधिकार मुद्दे के रूप में मान्यता देना शामिल है।

विकलांगता के बदलते प्रतिमान (Changing models of disability)

1. दान प्रतिमान (The charity model)

ऐतिहासिक रूप से, यह मॉडल सामाजिक दृष्टिकोण पर हावी रहा है, विकलांगता को एक व्यक्तिगत त्रासदी या दुर्भाग्य के रूप में चित्रित करता रहा है।

केंद्रबिंदु: "दुर्भाग्यशाली" व्यक्तियों के लिए दया, परोपकार और देखभाल।

प्रतिक्रिया: विशेष संस्थानों में अलगाव और दान या कल्याणकारी कार्यक्रमों पर निर्भरता।

शिक्षा पर प्रभाव: विकलांग व्यक्तियों (PWD) को अक्सर मुख्यधारा की स्कूली शिक्षा से बाहर रखा जाता था, और शिक्षा को अधिकार के बजाय एक धर्मार्थ कार्य माना जाता था।

2. चिकित्सा प्रतिमान (The medical model)

यह मॉडल विकलांगता को व्यक्ति के भीतर मौजूद एक चिकित्सीय स्थिति या दुर्बलता के रूप में देखता है जिसे "ठीक" या "ठीक" किया जाना चाहिए।

केंद्रबिंदु: चिकित्सा पेशेवरों द्वारा नैदानिक निदान, उपचार और पुनर्वास, जिसका लक्ष्य व्यक्ति को "सामान्य" कार्य करने की स्थिति में वापस लाना है।

प्रतिक्रिया: विशिष्ट विकलांगताओं के लिए डिज़ाइन किए गए पृथक विशेष शिक्षा विद्यालय, इस अपेक्षा के साथ कि व्यक्ति को प्रणाली के अनुकूल होना होगा।

शिक्षा पर प्रभाव: विशेषज्ञों द्वारा अलग-अलग स्थानों पर शिक्षा प्रदान की जाती है, जिससे असामान्यता और निर्भरता की कहानी को बल मिलता है।

3. सामाजिक प्रतिमान (The social model)

1970 के दशक में उभरा यह परिवर्तनकारी मॉडल विकलांगता (जैविक स्थिति) और विकलांगता (सामाजिक और पर्यावरणीय बाधाएँ) के बीच अंतर करता है।

ध्यान: प्रणालीगत और सामाजिक बाधाएँ, जिनमें दृष्टिकोण, शारीरिक बाधाएँ और संस्थागत संरचनाएँ शामिल हैं, बहिष्कार और असुविधा का कारण हैं, न कि विकलांगता स्वयं।

शिक्षा के लिए निहितार्थ: यह मॉडल छात्रों को अनुरूपता के लिए बाध्य करने के बजाय, सभी छात्रों को समायोजित करने के लिए शैक्षिक प्रणाली, संस्कृति और शिक्षण विधियों में परिवर्तन को आवश्यक बनाता है। यह अधिकार-आधारित दृष्टिकोण का आधार बना।

4. अधिकार-आधारित प्रतिमान (The rights-based model (human rights model))

सामाजिक मॉडल के सिद्धांतों पर आधारित, यह दृष्टिकोण विकलांगता को एक मानवाधिकार मुद्दा मानता है और इस बात पर जोर देता है कि दिव्यांगजन अधिकार-धारक हैं, न कि दया या चिकित्सा हस्तक्षेप के पात्र।

फोकस: समानता, गैर-भेदभाव, स्वायत्तता और पूर्ण भागीदारी। यह अंतर्राष्ट्रीय कानून में निहित है, विशेष रूप से विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNCRPD) में।

प्रतिक्रिया: समान अधिकारों और अवसरों की गारंटी के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कानूनी ढाँचे।

शिक्षा पर प्रभाव: यह मॉडल समावेशी शिक्षा को एक मौलिक अधिकार मानता है, और यह सुनिश्चित करने के लिए प्रणालीगत परिवर्तनों की आवश्यकता है कि सभी शिक्षार्थियों को महत्व दिया जाए और वे पूरी तरह से भाग ले सकें।

3.6 विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा की उभरती अवधारणा (अधिकार-आधारित दृष्टिकोण)/ Emerging concept of education for persons with disability (right-based approach)-

अधिकार-आधारित प्रतिमान में बदलाव ने समावेशी शिक्षा को अपनाया है, जो सभी छात्रों को एक समान परिवेश में समान और उच्च-गुणवत्ता वाला शिक्षण अनुभव प्रदान करने पर केंद्रित है।

3.6.1 समावेशी शिक्षा: समावेशी शिक्षा का अर्थ है सभी बच्चों का एक ही कक्षा में, एक ही स्कूल में होना। इसका अर्थ है उन समूहों के लिए वास्तविक शिक्षण अवसर जिन्हें पारंपरिक रूप से बहिष्कृत किया गया है समावेशी शिक्षा सभी पृष्ठभूमि के छात्रों को एक साथ सीखने और बढ़ने का अवसर देती है, जिससे सभी को लाभ होता है।

समावेशी शिक्षा के सिद्धांत(Principles of inclusive education)

शिक्षा का अधिकार: यह बच्चों का एक कानूनी अधिकार है जो स्थानीय स्कूल में प्राप्त किया जा सकता है। विकलांग बच्चों के लिए, इस अधिनियम ने उन्हें समावेशी शिक्षा का अधिकार प्रदान किया है। और वह भी, एक नियमित स्कूल में और उचित सहायता के साथ। इसके लिए, शिक्षा का अधिकार बुनियादी ढाँचे, शिक्षक प्रशिक्षण और व्यक्तिगत शिक्षण योजनाओं में बदलाव की आवश्यकता रखता है। ताकि हर बच्चा, यहाँ तक कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे भी, शिक्षा प्राप्त कर सकें और उसका आनंद ले सकें।

विविधता का उत्सव: विविधता को एक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि एक ताकत के रूप में शामिल किया जाता है। बच्चे अलग-अलग सांस्कृतिक, भाषाई, शारीरिक और बौद्धिक पृष्ठभूमि से आते हैं, और समावेशी शिक्षा इन भेदभावों को सहन करती है और उन्हें अपनाती है। यह सभी बच्चों में अपनेपन की भावना पैदा करती है और सहिष्णु बहुलवादी शिक्षा व्यवस्था स्थापित करने में योगदान देती है। समावेशी कक्षाएँ जीवंत स्थान होती हैं जहाँ सभी एक-दूसरे के साथ सम्मान और समझ के साथ पेश आते हैं। क्योंकि वे प्रत्येक शिक्षार्थी की विशिष्टता की सराहना करते हैं।

समान अवसर: शिक्षार्थियों के साथ भेदभाव, समावेशन के मूल में निहित है क्योंकि सभी को समान शिक्षा का अधिकार है। इसका अर्थ है: विकलांगता, जाति, लिंग या सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर भेदभाव को दूर करना। सभी छात्रों को समान रूप से सामग्री वितरित करना और उनकी

सहायता करना। कक्षा की गतिविधियों, मूल्यांकन और स्कूली जीवन में समान अवसर प्रदान करना। इसमें आवश्यकतानुसार अतिरिक्त सहायता प्रदान करना भी शामिल है। जैसे कि व्यक्तिगत शिक्षा कार्यक्रम (आईईपी), उपचारात्मक कक्षाएं या सहायक उपकरण प्रदान करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कोई भी बच्चा पीछे न छूटे।

बाधाओं को दूर करना: समावेशी शिक्षा का मतलब केवल सामान्य कक्षाओं में विकलांग बच्चों को बढ़ावा देना नहीं है। यह उस दीवार को तोड़ना है जो ज़रूरतमंद बच्चों की शिक्षा में बाधा डालती है। ऐसी बाधाओं में शामिल हो सकते हैं: भौतिक: किसी भी प्रकार के रैंप, सुलभ शौचालय या परिवहन का अभाव। शैक्षणिक: कठोर पाठ्यक्रम, अकुशल शिक्षक या अयोग्य परीक्षा प्रक्रियाएँ। मनोवृत्ति: कलंक, नकारात्मक रूढ़िवादिता या सहकर्मी और कर्मचारी प्रतिरोध। इन बाधाओं को दूर करने के लिए व्यवस्थित परिवर्तन की आवश्यकता है। इसमें शिक्षण विधियों में बदलाव, शिक्षकों को प्रशिक्षण, सुविधाओं के लिए धन उपलब्ध कराना और सभी हितधारकों में एक समावेशी मानसिकता का निर्माण शामिल हो सकता है।

समग्र विकास: समावेशी शिक्षा न केवल शैक्षणिक विकास को बढ़ावा देती है, बल्कि सामाजिक, भावनात्मक और नैतिक विकास को भी बढ़ावा देती है। यह छात्रों को निम्नलिखित करने में सक्षम बनाती है: टीम वर्क, समझ और प्रशंसा में निपुणता; आत्म-सम्मान और आत्म-सुरक्षा में वृद्धि; आत्म-पहचान और सामुदायिक भावना का निर्माण; समावेशी परिवेश विकलांग या सीखने में भिन्नता वाले बच्चों को अपने साथियों के साथ पर्याप्त सामाजिक पहुँच प्रदान करता है। यह मौन शिक्षण अनुभव भी प्रदान करता है जो उनके समग्र विकास के लिए आवश्यक हैं।

3.6.2 यूडीएल (यूनिवर्सल डिज़ाइन फॉर लर्निंग): एक ऐसा शैक्षिक ढाँचा है जो विविध शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लचीले शिक्षण वातावरण और सामग्री तैयार करता है, जिससे सभी छात्रों को सफलता के समान अवसर मिलते हैं। यह तीन मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है: प्रतिनिधित्व के विविध माध्यम प्रदान करना (सूचना कैसे प्रस्तुत की जाती है), क्रिया और अभिव्यक्ति के विविध माध्यम (छात्र ज्ञान का प्रदर्शन कैसे करते हैं), और जुड़ाव के विविध माध्यम (छात्रों को कैसे प्रेरित और चुनौती दी जाती है)।

3.7 अधिकार-आधारित दृष्टिकोण को लागू करने के लिए व्यावहारिक रणनीतियाँ (Practical strategies for implementing a rights-based approach)

नीति विकास: सरकारों को अपनी नीतियों में समावेशी शिक्षा को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए, जो यूएनसीआरपीडी जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के अनुरूप हो।

पाठ्यचर्या लचीलापन: राष्ट्रीय पाठ्यक्रम को लचीला और अनुकूलनीय बनाया जाना चाहिए, जिससे व्यक्तिगत निर्देश और विविध शिक्षण शैलियाँ उपलब्ध हों।

शिक्षक प्रशिक्षण: शिक्षकों को समावेशी शिक्षाशास्त्र, विकलांगता जागरूकता और सहायक प्रौद्योगिकी के उपयोग में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। विकलांग शिक्षकों की भर्ती और नियुक्ति छात्रों को आदर्श उदाहरण भी प्रदान करती है।

बुनियादी ढाँचा और पहुँच: शैक्षिक सुविधाएँ भौतिक रूप से सुलभ होनी चाहिए, और शिक्षण सामग्री सुलभ प्रारूपों (जैसे, ब्रेल, सांकेतिक भाषा) में उपलब्ध होनी चाहिए।

सामुदायिक भागीदारी: समावेशी शिक्षा के प्रभावी कार्यान्वयन और निगरानी के लिए स्कूलों, परिवारों, समुदायों और दिव्यांगजनों के बीच सहयोग महत्वपूर्ण है।

सशक्तिकरण और आत्म-समर्थन: विकलांग छात्रों को उनकी शिक्षा को प्रभावित करने वाले निर्णयों में शामिल किया जाना चाहिए, जिससे उन्हें अपनी आवश्यकताओं की वकालत करने का अधिकार मिले।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न :

- 1- भारत में प्रथम दृष्टिबाधित विद्यालय की स्थापना कहाँ पर हुई थी?
- 2- विकलांग व्यक्तियों का अधिकार (RPwD Act) अधिनियम कब आया?
- 3- समावेशी शिक्षा की बात सर्वप्रथम कहाँ कही गई थी?
- 4- यूएनसीआरपीडी कब आया?

3.8 सारांश:

भारत में, ईसाई मिशनरियों द्वारा दृष्टिबाधित और श्रवण बाधित लोगों के लिए स्कूलों की स्थापना के साथ 1880 के दशक में एक अलग प्रणाली के रूप में विशेष शिक्षा उभरी। इन संस्थानों के लिए सरकारी समर्थन 19वीं सदी की शुरुआत में शुरू हुआ। कोठारी आयोग (1964-66) ने विकलांग बच्चों को नियमित स्कूलों में शामिल करने पर जोर दिया। 1974 में विकलांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (IEDC) कार्यक्रम ने एकीकरण को और बढ़ावा दिया। भारत ने समावेशी शिक्षा की दिशा में प्रगति की है, जिसमें विकलांग बच्चों सहित सभी बच्चों को शिक्षित करने के उद्देश्य से नीतियाँ और कार्यक्रम हैं। हालाँकि, बेहतर शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता और गरीबी और कलंक से संबंधित मुद्दों को संबोधित करने सहित चुनौतियाँ बनी हुई हैं। बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम, 2009, विकलांगों सहित 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा को अनिवार्य बनाता है। RPWD Act 2016 के आने के बाद दिव्यगो की स्थिति में सुधार आया है।

अंतरराष्ट्रीय फैसलों ने भी दिव्यांग बच्चों की शिक्षा को प्रभावित किया जैसे सलामंका का स्टेटमेंट, यूएनसीआरपीडी(UNCRPD) इन्होंने पूरी दुनिया में विशेष बच्चों की शिक्षा की विकास यात्रा को

काफी सुगम्य बनाया इनके प्रभाव से विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों का विकास सीमित, अक्सर अलग-थलग, प्रणालियों से विकसित होकर अधिक समावेशी और अधिकार-आधारित दृष्टिकोण में बदल गया है। शुरुआत में अक्सर धर्मार्थ संगठन और सरकार द्वारा वित्तपोषित विशेष स्कूल शामिल होते थे, जबकि हाल के दशकों में मुख्यधारा और समावेशी शिक्षा की ओर धीरे-धीरे बदलाव हुआ है। अब ये यात्रा यूनिवर्सल डिजाइन फॉर लर्निंग तक आ पहुँची है

3.9 शब्दावली:

विशेष शिक्षा - विशेष शिक्षा विशेष आवश्यकताओं वाले छात्रों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनुकूलित निर्देश और सहायता है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि वे अपनी क्षमता का दोहन कर सकें। इसमें व्यक्तिगत शिक्षा योजनाएँ (आईईपी), विशेष उपकरण, अनुकूलित सामग्री और सुलभ परिवेश में विशिष्ट शिक्षण विधियाँ शामिल हैं।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे - दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी विकलांगता वाला व्यक्ति, जो बाधाओं के साथ बातचीत में, दूसरों के साथ समान रूप से समाज में उसकी पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में बाधा डालता है।

3.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर:

- 1- अमृतसर
- 2- 2016
- 3- सलामानका स्पेन में
- 4- 2006

3.11 संदर्भग्रन्थ

1. डॉ. आर. ए. जोसेफ विशेष शिक्षा एवं पुनर्वास समाकलन पब्लिशर्स वाराणसी
2. <https://www.voice4ability.com/blog/historical-development-in-the-field-of-disability-8.html>
3. <https://www.21kschool.com/in/blog/inclusive-education-in-india/>
4. <https://www.unicef.org/education/inclusive-education>

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

- 1- भारतीय संदर्भ में विशेष शिक्षा के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य एवं विकास का वर्णन किजिए
- 2- विशेष शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान और नीति निर्देशक सिद्धांत का वर्णन किजिए

इकाई 4

विशेष शिक्षा का बदलता परिपेक्ष्य (Changing Perspective of Special Education)

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 विशेष शिक्षा के विकास के प्रमुख चरण
- 4.4 अलगाव आने के पश्चात समस्याएं एवं उनका निराकरण
- 4.5 अलगाव आने के पश्चात परिवर्तन या वर्तमान परिस्थितियां
- 4.6 समावेशी शिक्षा –
 - 4.6.1 समावेशी शिक्षा क्या है?
 - 4.6.2 समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत
 - 4.6.3 दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुये पढ़ाये गए स्कूलों के प्रकार
 - 4.6.4 स्कूलों का विकास
- 4.7 सारांश
- 4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
- 4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:

विकास मनुष्य की एक ऐसी विशेषता है जो जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। विकास की गति में वैयक्तिक भिन्नता होती है और भेद स्थायी होता है। विकास गति का ये भेद आनुवांशिकता भेदों के कारण भी होता है। दिव्यांग बच्चा होने पर परिवार का प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित होता है यदि इसका पूर्व का इतिहास देखा जाए तो दिव्यांग व्यक्तियों को अलग रखा जाता था और उन्हें परिहास का मुद्दा बनाया जाता था। दिव्यांग बच्चों को समान्य बच्चों से अलग रखा जाता था उन्हें सीमित संस्थानों में रखा जाता था। 1970 के दशक में अदालती फैसलों में विशेष जरूरतों वाले छात्रों को संसाधन और शिक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी राज्यों को दी, जिससे विशेष शिक्षा के क्षेत्र में बड़े बदलाव आए।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

-
- विशेष शिक्षा के विकास के प्रमुख चरण को स्पष्ट कर सकेंगे।
 - विशेष शिक्षा के अलगाव आने के पश्चात समस्याएँ एवं उनका निराकरण को स्पष्ट कर सकेंगे।
 - विशेष शिक्षा के अलगाव आने के पश्चात परिवर्तन य वर्तमान परिस्थितियाँ को जान सकेंगे।
 - समावेशी शिक्षा क्या है के बारे में जान सकेंगे।
 - समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांतों के बारे में जान सकेंगे।
 - दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुए पढ़ाये गए स्कूलों के प्रकार के बारे में जान सकेंगे।
 - स्कूलों का विकास के बारे में जान सकेंगे।
-

4.3 विशेष शिक्षा के विकास के प्रमुख चरण

विशेष शिक्षा कि अगर हम बात करें तो जो भी कदम उठाए जाए वे दिव्यांगता के पक्ष कि बात होगी और उन्हे सक्षम बनाने में एक अच्छा कदम होगा –

- * समावेशिता की ओर बदलाव – समान्यतया पहले के समय में दिव्यांग व्यक्ति को देखकर व्यक्ति अलग हो जाते थे परंतु उभरते रुझान को देखते हुये विशेष शिक्षा का लक्ष्य अब दिव्यांग छात्रों को अलग-अलग करने के बजाय उन्हें समान्य कक्षाओं में एकीकृत करना है ,जहां उन्हें आवश्यक सहायता और समायोजन प्रदान किए जाते हैं।
- * प्रौद्योगिकी का उपयोग – वर्चुयल रियलिटी (VR), आगमेटेड रियलिटी (AR) जैसी प्रौद्योगिकीयां बच्चों को सामाजिक कौशल सीखने और सुरक्षित वातावरण में महत्वपूर्ण जीवन कौशल का अभ्यास करने में मदद करती है खासकर औटिज्म से पीड़ित बच्चों के लिए।
- * साकारात्मक और सम्मानजनक भाषा – दिव्यांगों को उनकी अक्षमताओं के बजाय उनकी चुनौतियों के रूप में देखने के लिये भाषा के उपयोग पर ध्यान दिया जा रहा है जो उनको उनकी दिव्यांगता का आभास न करने बल्कि आत्मसममान बढ़ाने में मदद करेगा।
- * प्रारम्भिक हस्तक्षेप पर जोर – प्रारम्भिक अवस्था में ही दिव्यांग बच्चों की शीघ्र पहचान करके उन्हें विशेष सहायता प्रदान की जाती है,जिससे वे बुनियादी कौशल व विकसित कर सके और उनकी शिक्षा में प्रगति हो सके।
- * शिक्षण और सहयोग – शिक्षकों को अधिक लचीला और सहयोगी बनाना होगा जो विभिन्न छात्रों को एकसाथ प्रभावी ढंग से पढ़ाने के लिए विविध शिक्षण रणनीतियों का उपयोग करते हैं।

* माता – पिता और सामुदायिक भागीदारी – माता – पिता और समुदाय की सक्रिय भागीदारी विशेष शैक्षिक कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और सेवाओं को परिवारों के करीब लाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

* समान अवसर का लक्ष्य – विशेष शिक्षा का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी बच्चों को उनकी क्षमताओं की परवाह किए बिना शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर मिलें और वे भी समाज में एक सम्मान नागरिक या व्यक्ति का पूर्ण जीवन जीना सीख सकें।

उपरोक्त को देखते हुए ये निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षकों को छात्रों कि विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यक्तिगत शिक्षा कार्यक्रमों जैसे कि (IEPs) का प्रायोगात्मक निरीक्षण के द्वारा व्यक्तिगत जरूरतों के अनुसार शिक्षण सामग्री और उनके तौर – तरीकों में बदलाव आ सके।

4.4 अलगाव के पश्चात समस्याएँ एवं उनका निराकरण

विशेष शिक्षा में अलगाव की मुख्य समस्याएँ असमर्थ शिक्षक, अपर्याप्त संसाधन, समावेशी शिक्षा की कमी और कानूनी ढांचे की समझ का अभाव के कारण समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसके अतिरिक्त सामाजिक और भावात्मक विकास में कमी, आपसी साथियों के साथ संवाद का अभाव और सामाजिक कौशलों की कमी जैसी समस्याएँ आती हैं। भिन्नता का अनुभव का न होना से तात्पर्य है कि बच्चे केवल अपने जैसे ही बच्चों के प्रभाव में रहते हैं और समाज कि विविधताओं से परे रहते हैं जो उनके दृष्टिकोण को सीमित करता है। समस्याओं को देखते हुए यह भी कहा जा सकता है कि शिक्षकों के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण का अभाव है। समस्याओं की बात की जाए तो अपर्याप्त बुनियादी ढांचा, शिक्षकों की कमी, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच, स्कूल छोड़ने की दर और आलोचनात्मक सोच व रचनात्मक के बजाए रटने पर जोर शामिल है। इसके अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक असमानताएं, शिक्षा की पहुँच और गुणवत्ता, शिक्षण सामग्री, पाठ्यक्रम, वित्तीय प्रतिबंध, समावेशी शिक्षा संबंधी बाधाएँ, संचार और भाषाएँ संबंधी बाधाएँ महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं।

उपरोक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि विशेष शिक्षा का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि इन छात्रों को उचित सहायता मिले जिससे वे अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा तक पहुँच सकें।

समस्याओं के निराकरण कि बात करें तो हम उन समस्याओं को दूर करने में तभी सक्षम हो सकेंगे जब उनको शिक्षा से वंचित न रखकर उन्हें शिक्षा प्रदान करने में सहायक हों। अलगाव या बदलाव के दृष्टिकोण से देखा जाए तो शिक्षा के क्षेत्र में दिव्यांगताओं के लिए महत्वपूर्ण बदलाव आया है अब “विकलांगता” शब्द को “दिव्यांगता” कहा जाता है, अब उन छात्रों के लिए “बेचारा

“ शब्द नहीं उपयोग होता है बल्कि उनके लिए “चुनौती” जैसे शब्दों का उपयोग किया जाने लगा है। भाषा में बदलाव असाधारण आवश्यकताओं वाले छात्र होने का अर्थ भी एक व्यापक और समावेशी समझ को दर्शाते हैं। निराकरण की बात करें तो हैबिलीटेशन(Habilitation) और पुनर्वास (Rehabilitation) का भी बड़ा रोल है। हैबिलीटेशन से तात्पर्य है कि समर्थ बनना, उचित तथा कौशल युक्त या समर्थवान बनना। अंग्रेजी में कहें तो fit, Proper, Skillful, make capable and suitable बनना। इसी तरह Rehabilitation पुनर्वास विशिष्ट बालकों के लिए एक संस्था है जो दिव्यांगों के लिए कार्य करती है। इसके अतिरिक्त वर्तमान समय दिव्यांगों के लिए दिव्यंगजन अधिकार अधिनियम, 2016 लागू किया गया। इससे पहले 1992 में दिव्यांगता की 7 श्रेणियों को सम्मिलित किया गया था जबकि RPWD एक्ट 2016 में दिव्यांग की 7 से बढ़ाकर 21 कर दिया गया। इसके अतिरिक्त सरकारी नौकरियों में आरक्षण को 3% से 4% कर दिया गया साथ ही समाज में सम्मानजनक दृष्टिकोण बनाने के लिए विकलांग शब्द की जगह दिव्यांग शब्द का प्रयोग लोकप्रिय किया गया और सुगम्य भारत अभियान जैसे कार्यक्रमों से सार्वजनिक स्थानों और परिवहन को दिव्यांगों के लिए सुलभ बनाया जा रहा है।

- * कानूनी और नीतिगत निराकरण
- * सुलभता और पहुँच में सुधार
- * कल्याणकारी पहलें
- * UDID (यूडीआईडी) कार्ड
- * दिव्यांग शब्द: सोच और संवेदना का नया बदलाव

उपरोक्त से दिव्यांगों की समस्याओं के निराकरण से यह बात तो साबित हो गई है कि शिक्षा में दिव्यांग व्यक्तियों के बदलते परिपेक्ष्य में किस प्रकार अलगाव आया है और वर्तमान परिपेक्ष्य में समावेशी शिक्षा को कितना प्रोत्साहित किया गया है। एक ऐसा आभास भी होने लगा है कि असमर्थ व्यक्ति भी सक्षम बनकर मूल्यवान बन सकता है और एक ऐसा वातावरण तैयार किया जा रहा है जिसमें समान अवसर मिल सके, समाज में, अधिकारों में सम्पूर्ण सहभागिता हो।

4.5 अलगाव आने के पश्चात परिवर्तन या वर्तमान परिस्थितियाँ

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा उनके सामाजिक और भावात्मक विकास में सहायक होती है। उनकी शारीरिक, बौद्धिक और संवेदी अक्षमताओं के बावजूद समावेशी शिक्षा उनका समर्थन करती है। संशोधन सामग्री को सरल बनाने के लिए उसमें परिवर्तन या अनुकूलन करता है संशोधन से सीखी हुई सामग्री, उसकी कठिनाई, छात्र से अपेक्षित निपुणता का स्तर, शिक्षा का सुधार, पाठ्यक्रम सुधार, शिक्षा संस्थानों में सुधार आदि आदि का निरंतर प्रयास होता रहा है। समय के साथ जैसे-जैसे समाज की जरूरतें और मूल्य बदलते हैं। सार्वजनिक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण भी बदलते हैं। एक

सामाजिक संस्था के रूप में शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया से एक अभिन्न भूमिका निभाती है। विश्व स्तर पर विशेष शिक्षा का इतिहास देखा जाए तो वर्तमान परिस्थितियों के परिवर्तन के परिपेक्ष्य में अलगाव या बदलता स्वरूप अपने आपको दर्शाता है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षित करने के लिए 14वीं शताब्दी से लेकर आज तक समय समय पर प्रयास होते रहे जैसे 1578 में लीओन (स्पेन) ने बधिर बच्चों के लिए पहला प्रलेखित अनुभव तैयार किया। इसी तरह मिशेल(पेरिस) ने “इंस्टीट्यूट पोर सार्डस” ने बधिरों के लिए काम किया, इसी तरह लुई ब्रेल, मार्ग (ब्रिटिश) आदि ने इन बच्चों पर काम किया। 1922 में परिषद की स्थापना हुई। 1943 में अमेरिकी मनोचिकित्सक ने औटिज्म स्पेक्ट्रम विकार को वर्गीकृत करने वाले पहले व्यक्ति थे 1973 से 1990 में भी विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा अधिनियम (आईडीईए) पारित किया गया। 1902 में चाइल्ड लेफ्ट बिहाइंड एक्ट पारित किया गया भारत में विशेष शिक्षा का आरंभ ईसाई मिशनरियों और दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित और संज्ञात्मक रूप से विकलांग लोगों की सेवा करने वाली गैर सरकारी एजेंसियों ने बहुत ही काम किया। परिवर्तन के उद्देश्य से पहल – भारत सरकार ने विशेष आवश्यकताओं के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए इस पर सरकार और निजी क्षेत्र दोनों ने ही बहुत प्रयास कर कार्य किए।

○ सरकारी पहल (कानूनी और नीतिगत बदलाव) ----- इसके अंतर्गत जो भी अधिनियम बनाए गए उनके द्वारा अलगाव या बदलाव हुए हैं उनको सक्षम बनाने में उठाए गए कदम:--

* दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 --- यह सबसे बड़ा बदलाव है, जिसमें दिव्यांगता के प्रकारों की संख्या 7 से 21 कर दी गई।

* सरकारी नौकरियों में आरक्षण ---- बेंचमार्क दिव्यांगता वाले व्यक्तियों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण को 3% से 4% कर दिया गया।

* शिक्षा का अधिकार (आरटीई) ----- 2012 में हुये एक संशोधन में विकलांग बच्चों के लिए कई प्रावधान रखे गए।

* राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और नवीनतम संशोधन 2020 ---- शिक्षकों को प्रशिक्षित करने पर विशेष जोर देने के साथ-साथ एक समावेशी दृष्टिकोण को भी बढ़ावा देना चाहिए

○ सुलभता और पहुँच में सुधार

*सुगम्य भारत अभियान-इस अभियान के तहत सार्वजनिक स्थानों, भवनों, हवाई अड्डों और रेलवे स्टेशनों को दिव्यांगों के लिए सुगम और सुलभ बनाने का काम किया जा रहा है, ताकि वे असानी से इनका उपयोग कर सकें।

*बेबसाइटों की सुगम्यता ---- केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों की बेबसाइटों को दिव्यांगों के लिए सुगम बनया जा रहा है, जिससे वे ऑनलाइन सेवाओं का लाभ उठा सकें।

○ कल्याणकारी पहलें

* यूडीआईडी कार्ड ---- दिव्यांग व्यक्तियों के लिए एक विशिष्ट पहचान पत्र (UDID) कार्ड बनाए गए है जिससे उन्हें सरकारी योजनाओं का लाभ आसानी से मिल सके ।

* निरामया स्वास्थ्य बीमा योजना ---- यह योजना दिव्यांगों को स्वास्थ्य बीमा प्रदान करती है, जिससे उनके जीवन को सहज और सशक्त बनाया जा सके ।

* खाली पदों का भरा जाना ----- दिव्यांगों के लिए लंबे समय से खाली चल रहे करीब 15,000 पदों को एक विशेष अभियान के तहत भरा गया ।

* समान अवसरों की प्रधानता और परिवर्तन ---- हम आज के समय में परिवर्तन की बात कहें तो कुछ ऐसे संदर्भ है की उन्हें हमें आगे बढ़ावा देने की आवश्यकता है । ऐसे ही कुछ मुद्दे हैं जिनके द्वारा हम दिव्यांगों के प्रति जागरूकता का अहम प्रदर्शन कर सकते हैं ।

* तकनीकी प्रगति में सुधार ---- सहायक तकनीकी कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और वर्चुअल रियलिटी (VR) जैसी तकनीकों से उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर रही है और उन्हें डिजिटल दुनिया से जुड़ने में मदद कर रही है ।

* शिक्षा के महत्व में योगदान ---- शिक्षा क्षेत्र में “खुली शिक्षा “ पर जोर बढ़ रहा है , जिससे विशेष स्कूलों पर निर्भरता कम हो रही है और समुदाय आधारित शिक्षा या समावेशी शिक्षा को बढ़ावा मिल रहा है ।

* अवरोध मुक्त वातावरण ---- सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों को सुलभ बनाने और दिव्यांग व्यक्तियों के लिए जानकारी सुलभ बनाने के लिए उपाय किए जा रहे हैं ।

* सामुदायिक जीवन ---- संस्थानों से समुदाय आधारित जीवन की ओर योजनाओं को प्रोत्साहित किया जा रहा है, जिसमें दिव्यांग व्यक्तियों को समुदाय में रहने और भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है । पुर्नवास में आमतौर पर कई प्रकार की सेवाएँ शामिल हैं जैसे शीघ्र पहचान , निदान और हस्तक्षेप चिकित्सा, देखभाल और उपचार , सामाजिक , मनोवैज्ञानिक और अन्य प्रकार की परामर्श और सहायता, तकनीकी एवं गतिशीलता सहायता एवं अन्य उपकरणों का प्रवधान , विशिष्ट शिक्षा सेवाएँ , व्यावसायिक प्रशिक्षण , खुले या आश्रययुक्त रोजगार नियुक्ति आदि कार्यों में सक्षम बनाया जा रहा है ।

उपरोक्त से यह निष्कर्ष निकालकर आया है की वर्तमान समय में दिव्यांगों को सक्षम बनाने के लिए कितने प्रयास किए जा रहे हैं ।

4.6 समावेशी शिक्षा

4.6.1 समावेशी शिक्षा क्या है?

शिक्षा में समावेशी या समावेशन का अर्थ है कि सभी प्रकार के बच्चों कि शिक्षा एक साथ एक ही विद्यालय में हो। कक्षा एक छोटा सा समाज या क्षेत्र होता है जहां विभिन्न प्रकार के बच्चे होते हैं जैसे बुद्धिमान, सुस्त, भावात्मक रूप से बुद्धिमान, प्रतिभाशाली, मानसिक एवं शारीरिक रूप से अक्षम, आर्थिक एवं पारिवारिक रूप से अक्षम आदि। यदि हम एक ही दृष्टिकोण से देखेंगे तो कक्षा का एक बड़ा भाग शिक्षा से वंचित रह जाता है और बाद में फिर पिछड़ जाता है। व्यक्तिगत विभिन्नताओं से युक्त एक कक्षा में शिक्षण कार्य करना भी एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। समावेशन न केवल एक कक्षा विशेष के अध्यापक द्वारा बल्कि पूरे विद्यालय द्वारा अपनाया जाना चाहिए जिससे कि पूरा शिक्षण कार्यक्रम प्रत्येक बच्चे के लिए सार्थक और प्रासंगिक बन सके। सभी वर्गों के छात्रों को शिक्षा का लाभ मिल सके।

समावेशी शिक्षा एक ऐसी प्रणाली है जो यह सुनिश्चित करती है कि विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं या दिव्यांगता वाले बच्चों सहित सभी बच्चे सामान्य मुख्य धारा के स्कूलों में एक ही कक्षा में एक साथ शिक्षा प्राप्त करें यह केवल दिव्यांग बच्चों को मुख्य धारा के स्कूलों में शामिल करने से कहीं अधिक है यह उन बाधाओं को दूर करने में है जो शिक्षा विविधता का सम्मान करती है और सभी छात्रों को प्रभावी शिक्षण वातावरण बनाने पर जोर देती है।

समावेशी शिक्षा का व्यापक अर्थ समावेशी का अर्थ है कोई भी चीज जो किसी व्यक्ति, वर्ग या समूह को अलग न छोड़े। यह एक ऐसी स्थिति है जहां सभी को शामिल होने और अपना योगदान देने का अवसर मिलता है।

समावेशी शिक्षा के संदर्भ में:--यह शिक्षा वह प्रक्रिया है जो सभी शिक्षार्थियों, चाहें उनकी जरूरतें, योग्यतायें या सीखने की शैली कुछ भी हो, ऊंटक पहुँचने और उन्हें सहायता प्रदान करने में मदद करती है।

परिभाषायें (Deffination) :---

स्टेनबैक के अनुसार :--- “ इनके अनुसार एक समावेशी विद्यालय वह होता है जहां प्रत्येक बालक को उसके साथियों और विद्यालय समुदाय के अन्य सदस्यों द्वारा स्वीकार किया जाता है और सहारा दिया जाता है, ताकि वह अपनी शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा कर सके।

यूनेस्को (1994 के सलामांका वक्तव्य में) :-- इस वक्तव्य के बाद बड़ी संख्या में देशों ने दिव्यांग छात्रों को मुख्य धारा के स्कूलों में शामिल करने के लिए अपनी नीतियों में सुधार किया।

“Inclusive education means an education system where all students including physically or mentally disabled childrens regardless of their background or abilities study together in the same classes in regular schools. The concept ensures that everyone has access to quality educational and no child is left behind including not only children with disabilities but also those who speak minority languages.

NCF 2005 --- “समावेशन शब्द का अपनेआप में कुछ खास अर्थ होता है, समावेशन के चारों ओर जो वैचारिक, दार्शनिक, सामाजिक और शैक्षिक ढांचा होता है, वही समावेशन को परिभाषित करता है। समावेशन की प्रक्रिया में बच्चे को न केवल लोकतन्त्र की भागीदारी के लिए सक्षम बनाया जाता है, बल्कि वह सीखने एवं विश्वास करने के लिए सक्षम बनाया जाता है, ताकि वह लोकतन्त्र को बनाए रखने के लिए दूसरों के साथ रिश्ते बनाना, अन्तरक्रिया करना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है।”

उपरोक्त से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शिक्षा पर सबका अधिकार है। समावेशी शिक्षा बहुआयामी पहलू है। लोगों को समान अवसर देना, उन्हें संसाधन प्रदान करना उनका समर्थन करना उनकी हर तरह की बाधाएं दूर करना, उन्हें समूहों के साथ कार्य करना, लोगों के साथ संवाद, भाषा का स्तर बढ़ाना। सीखने की प्रक्रिया को मजबूत बनाना।

4.6.2 समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत

समावेशी पहुँच और नामांकन के लिए, स्कूलों कोई दिव्यांग बच्चों की जरूरतों को समझने और उनके लिए अनुकूलन वातावरण बनाने की आवश्यकता है। इसमें दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता, शारीरिक और सामाजिक बाधाओं को दूर करना, प्रारम्भिक हस्तक्षेप कार्यक्रम स्थापित करना, दिव्यांग बच्चों को सहयोगात्मक शैक्षिक वातावरण में एकीकृत कर, शिक्षकों को प्रशिक्षित करना और सभी छात्रों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करना शामिल है। स्कूलों की विविधता को बढ़ावा देना चाहिए, सामाजिक समावेशन की रणनीतियाँ अपनानी चाहिए और सभी बच्चों के लिए एक स्वागत योग्य और सम्मानजनक वातावरण बनाना चाहिए। समावेशी शिक्षा में सभी बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है। इसी तरह समावेशी शिक्षा दिव्यांग बच्चों की क्षमताओं को विकसित करने में मदद करता है। कोई भी बच्चा मुख्य धारा की शिक्षा में प्रवेश से वंचित न रहे।

* शारीरिक पहुँच या नामांकन ---- स्कूल के भवनों में दृश्य अलार्म सिस्टम और शायक श्रवण उपकरण जैसे शारीरिक समायोजन करना ताकि दिव्यांग छात्रों की जरूरतों को पूरा किया जा सके।

* सामाजिक समावेशन ----- बच्चों को ऐसा वातावरण देना जहाँ वे सम्मान सहित वातावरण को महसूस कर सकें। सहकर्म कार्यक्रम चलाना और शिक्षकों द्वारा विविधता व स्वीकृति पर चर्चा का नेतृत्व करना, जिससे आपसी मतभेदों को स्वीकार किया जा सके न कि उनसे डर लगे।

* प्रारम्भिक हस्तक्षेप या दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता को स्वीकारना ---- दिव्यांग बच्चे को प्रारम्भिक या शुरुआती चरण में ही आवश्यक सहायता और अधिक से अधिक सहायता प्रदान करना ताकि वे अपनी पूरी क्षमता विकसित कर सकें।

* शिक्षकों का प्रशिक्षण ---- शिक्षकों को दिव्यांग बच्चों की जरूरतों और उन्हें प्रभावी ढंग से पढ़ाने के तरीकों के बारे में प्रशिक्षण देना चाहिए।

* सामुदायिक साझेदारी ---- स्कूल और सामुदायिक संगठनों के बीच सहयोग बढ़ाना, ताकि समवेशी प्रारम्भिक शिक्षा तक पहुँच का विस्तार हो सके, शिक्षा के लिए व्यावसायिक विकास के अवसर बढ़ें और मूल्यवान संसाधनों की उपलब्धता हो।

* अभिभावकों की साझेदारी ---- अभिभावकों को कार्यक्रमों में शामिल किया जाए ताकि सभी बच्चों और परिवारों की जरूरतों को पूरा किया जा सके।

* मूल्यांकन और अनुकूलन ---- दिव्यांग बच्चों का प्रभावी ढंग से समर्थन करने के लिए स्कूलों को अपने भौतिक और सामाजिक ढाँचे का लगातार मूल्यांकन करना चाहिए और यदि उसमें कहीं भी कमी हो तो उसको उसके अनुकूल बनाना चाहिए।

* समावेशी वातावरण ---- एक ऐसा समवेशी वातावरण बनाना चाहिए जहाँ सभी बच्चे सुरक्षित और मूल्यवान महसूस कर सकें और उन्हें सीखने में सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर मिले।

दिव्यांग बच्चों को उनकी दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता के आधार पर सामान्य या समवेशी स्कूलों या विशेष स्कूलों में शिक्षा दी जाती है जहाँ उन्हें विशेष शिक्षण और सहायता मिलती है। स्कूलों का विकास समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने, भौतिक और सामाजिक पहुँच में सुधार करने और व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करने वाले अनुकूलित शिक्षण वातावरण बनाने की ओर हुआ है

4.6.3 दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुये पढ़ाये गए स्कूलों के प्रकार

दिव्यांग बच्चों को पढ़ाने वाले स्कूलों को मोटे तौर पर मुख्यधारा के स्कूल (जो समावेशी शिक्षा देते हैं), विशेष स्कूल (जो विशिष्ट दिव्यांगताओं के लिए केन्द्रित होते हैं) और घर पर शिक्षा (होमस्कूलिंग) व दूरस्थ शिक्षा जैसे विकल्पों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जिसमें बच्चों की दिव्यांगता और आवश्यकताओं के आधार पर शिक्षा का माध्यम चुना जाता है।

1. मुख्यधारा के स्कूल (सामान्य स्कूल)

- समावेशी शिक्षा: ऐसे स्कूल, जहाँ दिव्यांग बच्चों के साथ एकीकृत करके पढ़ाया जाता है, तभी उन्हें समान शैक्षिक अवसर मिल सके।

- सहायक उपकरण और अनुकूलन: इन स्कूलों में श्रवण बाधित बच्चों के लिए सहायक श्रवण उपकरण, दृश्य अलार्म और सामाजिक समवेशन के लिए सहकर्म कार्यक्रम जैसी रणनीतियाँ अपनाई जाती हैं।

2. विशेष स्कूल

- केन्द्रित शिक्षा: यह वे स्कूल होते हैं जो विशेष रूप से विभिन्न प्रकार की दिव्यांगताओं वाले बच्चों के लिए होते हैं, जैसे आटिज्म, बधिर-अंधता, या मानसिक मंदता वाले बच्चों के लिए

- उपचार एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण: विशेष स्कूलों में अक्सर फिजियोथेरेपी, स्पीच थेरेपी, व्यावसायिक प्रशिक्षण और रहने-खाने की व्यवस्था भी शामिल हो सकती है। उदाहरण: कुछ उदाहरणों में नेशनल

इंस्टीट्यूट फॉर थे एम्पावरमेंट ऑफ पर्सन्स विद इंटेलेक्चुअल डिसेबिलिटीज (NIPID), द माधवी नागार्जुन स्कूल फॉर द ब्लाइंड और द स्कूल फॉर द डेफ शामिल हैं।

3. अन्य शैक्षिक विकल्प

- घर पर शिक्षा: यह उन बच्चों के लिए एक विकल्प है जहां माता-पिता को लगता है कि सरकारी स्कूल पर्याप्त ध्यान या संसाधन नहीं दे सकते हैं।
- दूरस्थ शिक्षा (ऑनलाइन लर्निंग): होमस्कूलिंग के साथ ऑनलाइन शिक्षण विकल्पों का उपयोग किया जा सकता है, जिससे बच्चे को अपनी गति से और व्यक्तिगत शिक्षण अनुभव के अनुसार सीखने का मौका मिलता है।
- खुले स्कूल: जिन बच्चों को सामान्य स्कूलों में समस्या आती है, उन्हें खुले स्कूलों में शामिल किया जा सकता है।

उपरोक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि दिव्यांग बच्चों के लिए स्कूल का प्रकार उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं और दिव्यांगता की गंभीरता पर निर्भर करता है, कि विभिन्न प्रकार के स्कूलों और शिक्षा के विकल्पों का उद्देश्य सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है, भले ही उनकी दिव्यांगता कुछ भी है।

4.6.4 स्कूलों का विकास

समावेशी स्कूलों का विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो सभी छात्रों विशेषकर दिव्यांगों को एक ही स्कूल और कक्षा में शिक्षा के समान अवसर प्रदान करती है, जिससे उनका शैक्षणिक और सामाजिक विकास हो सके। इसके लिए सकारात्मक स्कूल संस्कृति, स्कूलों का निरंतर विकास, शिक्षकों का निरंतर प्रशिक्षण, अनुकूलित शिक्षण पद्धतियां, और सभी के लिए संसाधनों की उपलब्धता आवश्यक है। चुनौतियों में नकारात्मक दृष्टिकोण, संसाधनों की कमी और अपर्याप्त शिक्षक प्रशिक्षण शामिल है, जिनका समाधान सहानुभूति और व्यावसायिक विकास को बढ़ावा देकर किया जा सकता है।

समावेशी स्कूलों का विकास क्यों महत्वपूर्ण

- *समान अवसर: यह सुनिश्चित करता है कि सभी बच्चे चाहे उनकी दिव्यांगता हो या नहीं, स्कूल जाने, सीखने और आगे बढ़ने के समान अवसर प्राप्त करें।
- *सामाजिक विकास: यह छात्रों के बीच सहानुभूति, संचार और सहयोग जैसे सामाजिक कौशल को बढ़ावा देता है।
- *सकारात्मक वातावरण: यह सम्मान, टीमवर्क और सहकर्मी समर्थन की संस्कृति को विकसित करता है।
- *आत्म-सम्मान में वृद्धि: दिव्यांग छात्रों में आत्मविश्वास और अपनेपन की भावना बढ़ती है।
- *शिक्षक प्रशिक्षण: शिक्षकों को समावेशी शिक्षा की पद्धतियों जैसे की सीखने के लिए सार्वभौमिक डिजाइन (UDL) में निरंतर प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

समावेशी स्कूलों को विकसित करने के तरीके

- *आत्म-शिक्षा: समावेशिता के बारे में स्वयं को और समुदाय को शिक्षित करना पहला कदम है।
- *संसाधन केंद्र: स्थानीय संसाधनों का उपयोग करके और संसाधनों को संग्रहीत करने के लिए एक भौतिक स्थान बनाकर एक संसाधन केंद्र विकसित करना।
- *व्यावसायिक विकास: शिक्षकों के लिए चल रहे प्रशिक्षण का आयोजन करना ताकि वे समावेशी वातावरण में शिक्षण की चुनौतियों का सामना कर सकें।
- *सामुदायिक जुड़ाव: छात्रों, अभिभावकों और समुदाय के सदस्यों को प्रक्रिया में शामिल करना।
- *लचीला और रचनात्मक शिक्षण: विभिन्न सीखने की शैलियों और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए शिक्षण विधियों को अनुकूल बनाना।

उपरोक्त से स्पष्ट हो जाता है कि स्कूलों के विकास के लिए महत्वपूर्ण समायोजित चीजें होनी चाहिए और विकास क्यूँ जरूरी है। शिक्षा का विकास अतिआवश्यक है। शिक्षा के विकास से ही बच्चों का विकास संभव है।

4.7 सारांश

समावेशी शिक्षा या समावेशन शिक्षा का बच्चों के विकास के लिए कितना महत्व रखती है, वंचित वर्ग के लिए इसकी क्या उपयोगिता है। शिक्षा प्रणाली की उपलब्धियाँ किस तरह से हमारे जीवन में महत्व रखती है। आज के वर्तमान परिपेक्ष्य में देखें तो भारत शिक्षा व्यवस्था में विश्व में दूसरे स्थान पर है और चीन के पश्चात भारत ने शिक्षा व्यवस्था में 85% रिहायशी इलाकों में एक किलोमीटर की परिधि के अंदर एक प्राथमिक और 75% रिहायशी इलाकों में तीन किलोमीटर के अंदर उच्च प्राथमिक पाठशाला है। सरकार ने शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं परंतु इन सबके पश्चात भी वर्तमान में लाखों बच्चे शिक्षा की मुख्यधारा से वंचित हैं और हमारे विध्यालय भी ऐसे बच्चों के लिए वंचित साधनों जैसे नज़र आते हैं जिनकी विभिन्न ज्ञानेन्द्रिय, शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा आर्थिक कारणों से कुछ विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताएं हैं। पढ़ाए गए स्कूलों के प्रकार, उनका विकास किस तरह का हो यह भी महत्वपूर्ण है और वर्तमान परिपेक्ष्य में विशेष शिक्षा का क्या स्वरूप है। अंत में कहा जा सकता है कि संसाधनों के माध्यम से समावेशी शिक्षा को कैसे बढ़ावा मिल सकता है।

शिक्षा में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए बदलते परिपेक्ष्य में अलगाव या बदलाव या परिवर्तन देखा जाए तो आज के समय में “बेचारा” और “बेचारी” शब्द लुप्त हो गया है क्योंकि उनको सक्षम बनाने में सरकार द्वारा जो मुहिम चलाई गई और सामुदायिक स्तर या एकीकृत के रूप में देखा जाए तो सब प्रयास अपनेआप में बहुत ही बड़ी भूमिका में हैं। भारत सरकार और राज्य सरकारों ने इनके कल्याण हेतु बहुत सी योजनाएँ, नए आयाम, पुनर्वास द्वारा कार्य और योजनाएँ जिसमें सहायक उपकरणों की खरीद हेतु ADIP योजना, स्वरोजगार के लिए NDFDC योजना और व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए दीनदयाल विकलांग पुनर्वास योजना (DDRS) शामिल है। इसके अतिरिक्त शिक्षा के लिए छात्रवृत्तियाँ, रेलवे यात्रा रियायतें और राष्ट्रीय पुरस्कार जैसी योजनाएँ भी उपलब्ध हैं एवं निशुल्क शिक्षा का भी प्रावधान है DDRC के अंतर्गत दिव्यांगों के सर्टिफिकेट आदि की प्रक्रियाओं का भी प्रावधान है। निष्कर्ष यह निकलता है कि विशेष शिक्षा के बदलते परिपेक्ष्य कि यदि बात कि जाए तो वर्तमान परिस्थितियाँ विकास कि दौर में अग्रसर है और विकासात्मक प्रक्रिया सक्षम है।

1. **विकेन्द्रण (De centering):** यथार्थ चिंतन की क्षमता अर्थात् कोई बालक किसी समस्या के समाधान के संबंध में किस सीमा तक वास्तविक ढंग से सोच-विचार करता है।
2. **जीववाद (Animism):** निर्जीव वस्तुओं को भी सजीव समझना।
3. **आत्मकेन्द्रिता (Egocentrism):** खुद को केन्द्र में रखकर कोई निर्णय लेना।
4. **साम्यधारणा (Equilibration):** आत्मसातीकरण और समाविष्टिकरण में संतुलन करने की प्रक्रिया।

4.8 संदर्भग्रंथ

1. डॉ मीना अंबेस, भारत में शिक्षा व्यवस्था
2. जे. सी. अग्रवाल, भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास
3. <https://www.gov.nl.ca>
4. <https://uphwd.gov.in>
5. Linda Walsmur & Alan W. Brue, The complete guide to Special Education
6. अराधना मटानिया, दिव्यांगता, विशेष शिक्षा एवं समावेशी शिक्षा
7. <https://www.mieglobal.in>
8. <https://en.wikipedia.org>

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. समावेशी शिक्षा से आप क्या समझते हैं? पहुँच और नामांकन को स्पष्ट कीजिये।
2. दिव्यांगता की प्रकृति और गंभीरता से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिये।
3. समावेशी शिक्षा के सिद्धान्तों को विस्तार से समझाइए।
4. दिव्यांग बच्चों के स्कूलों के प्रकार से आप क्या समझते? बताइये।
5. विशेष शिक्षा में अलगाव से आप क्या समझते हैं? वर्तमान परिपेक्ष्य में इसकी समस्याएँ एवं निराकरण पर प्रकाश डालिए।
6. RPWD एक्ट क्या है? विस्तार से बताइये।
7. दिव्यांगों के लिए समावेशी शिक्षा का क्या महत्व है? प्रकाश डालिए।
8. अलगाव आने के पश्चात वर्तमान परिस्थितियों में कल्याणकारी पहल क्या थी? विस्तार से बताइये।

इकाई 5

शोध का प्रभाव और विशेष शिक्षा में तकनीकी - विशेष (विशिष्ट) एवं समावेशी शिक्षा में उन्नत तकनीकी शोध का प्रभाव (Impact of technological advances and researches in special and inclusive education)

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 विशेष और समावेशी शिक्षा
- 5.4 उन्नत तकनीकी शोध क्या है!
- 5.5 विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अनुकूलन का प्रभाव
- 5.6 सारांश
- 5.7 संदर्भ ग्रंथ सूची
- 5.8 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अग्रिम शोध छात्रों की व्यक्तिगत जरूरतों के अनुसार सीखने को अनुकूलित करने, सुलभता, स्वायत्ता और वैयक्तिकृत अनुभव बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये प्रौद्योगिकियाँ शिक्षार्थियों के सामाजिक और भावात्मक विकास में सहायता करती हैं और विभिन्न शिक्षण आवश्यकताओं का समर्थन करने के लिए नवीन तरीके प्रदान करती हैं। विशेष और समावेशी शिक्षा पर प्रौद्योगिकी और शोध के प्रभाव से छात्रों की प्रेरणा, भागीदारी और सीखने के परिणामों में सुधार हुआ है, व्यक्तिगत सीखने के अनुभव प्रदान किए गए हैं और सुलभ सामग्री तैयार हुई है। हालांकि प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बुनियादी ढांचा, शिक्षक प्रशिक्षण, लागत और सुसंगत नीतियों जैसी बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है ताकि सभी छात्रों को लाभ मिल सके और तकनीकी पहुँच को सुलभ, एकीकरण में सफलता के लिए बुनियादी ढांचे में सुधार, शिक्षक प्रशिक्षण, सुसंगत नीतियाँ, और डिजिटल साक्षरता को एक व्यापक रणनीति में एकीकृत करने की आवश्यकता है। सुनिश्चित करें कि प्रौद्योगिकियाँ सार्वभौमिक डिज़ाइन सिद्धान्तों का पालन करें ताकि वे सभी छात्रों के लिए सुलभ हों। समावेशी शिक्षा में प्रौद्योगिकी के गहन प्रभाव और सर्वोत्तम प्रथाओं को समझने के लिए निरंतर शोध आवश्यक है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

- विशेष और समावेशी शिक्षा के बारे में जान सकेंगे।
- उन्नत तकनीकी शोध के बारे में जान सकेंगे।
- विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अनुकूलन का प्रभाव के बारे में जान सकेंगे।
- शोध का स्कूली शिक्षा में प्रभाव पड़ने से शिक्षा में क्या सुधार हो सकता है और तकनीकी द्वारा हम बच्चों को क्या क्या सीखा सकते हैं के बारे में जान सकेंगे।

5.3 विशेष और समावेशी शिक्षा

विशेष और समावेशी शिक्षा क्या है यही हम जानेंगे कि विशेष शिक्षा दिव्यांग या विशेष आवश्यकताओं वाले छात्रों को अलग वातवरण में उनकी विशिष्ट जरूरतों के अनुसार शिक्षा प्रदान करती है, जबकि समावेशी शिक्षा में सभी तरह के छात्र, जिनमें विशेष आवश्यकताओं वाले छात्र भी शामिल हैं, मुख्यधारा के स्कूलों में एक साथ पढ़ते हैं। समावेशी शिक्षा का लक्ष्य व्यवस्था को अनुकूलित करके सभी को समान अवसर देना है।

विशेष शिक्षा (Special Education)

1. उद्देश्य: विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को उनके विशिष्ट सीखने के तरीकों और जरूरतों के अनुसार व्यक्तिगत और केन्द्रित शिक्षा प्रदान करना है।
2. सेटिंग: अक्सर दिव्यांग छात्रों के लिए अलग कक्षाएं या विशेष स्कूल बनाए जाते हैं।
3. पद्धति: विशेष शिक्षक छोटे समूहों में व्यक्तिगत निर्देश देते हैं।

समावेशी शिक्षा (Inclusive education)

1. उद्देश्य: सभी विद्यार्थियों को मुख्यधारा की कक्षाओं में शामिल करना, चाहे उनकी शारीरिक, मानसिक या सीखने की क्षमता कुछ भी हो।
2. सेटिंग: सभी छात्र, दिव्यांग या गैर –दिव्यांग, सामान्य कक्षाओं में एक साथ पढ़ते हैं, जिनमें उन्हें आवश्यक सहता और अनुकूलन प्रदान किए जाते हैं।
3. पद्धति: सामान्य और विशेष शिक्षक एक ही कक्षा में सहयोग करते हैं ताकि सभी छात्रों को लाभ मिल सके।

विशेष और समावेशी शिक्षा में मुख्य अंतर

- केंद्र: विशेष शिक्षा बच्चे की जरूरतों पर केन्द्रित होती है, जबकि समावेशी शिक्षा छात्रों की जरूरतों के अनुरूप पूरी शिक्षा प्रणाली को ढालने पर केन्द्रित होती है।
- शामिल करना: विशेष शिक्षा में छात्रों को अलग किया जाता है, जबकि समावेशी शिक्षा में उन्हें सामान्य शिक्षण वातावरण में शामिल किया जाता है।



उपरोक्त से स्पष्ट हो जाता है कि विशेष और समावेशी शिक्षा में क्या अंतर है उदाहरण के तौर पर देखा जाए तो विशेष शिक्षा में एक बच्चा जो मंदबुद्धि है, उसे अलग कक्षा में प्रशिक्षित किया जाता है और समावेशी शिक्षा में एक बधिर छात्र को सांकेतिक भाषा सिखाने के लिए उसके शिक्षकों और सहपाठियों के साथ सामान्य कक्षा में सहायता प्रदान की जाती है।

समावेशी शिक्षा वह अवधारणा है जो यह सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक बच्चा, चाहे वह किसी भी प्रकार की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक या आर्थिक पृष्ठभूमि से जुड़ा हो, समान रूप से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सके। यह शिक्षा प्रणाली सभी बच्चों को एक समान मंच प्रदान करती है, जहाँ भेदभाव के बिना सबको सीखने और विकसित होने का अवसर मिलता है। समावेशी शिक्षा का मूल विचार यह है कि किसी भी बच्चे को उसकी अक्षमता या विशेष आवश्यकता के कारण मुख्यधारा की शिक्षा से बाहर नहीं किया जाना चाहिए।

समावेशी शिक्षा केवल विशेष बच्चों को सामान्य विद्यालयों में शामिल करने का प्रयास नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा दृष्टिकोण है जो शिक्षा प्रणाली को अधिक संवेदनशील, लचीला और सहयोगात्मक बनाता

है। इसका उद्देश्य हर विद्यार्थी की सीखने की शैली, रुचि और क्षमता के अनुसार शिक्षा देना है। यह प्रणाली यह मानती है कि सभी बच्चे सीख सकते हैं, बस उनके लिए उपयुक्त वातावरण और अवसर की आवश्यकता होती है। शिक्षक का कार्य केवल पढ़ाना नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि प्रत्येक बच्चा सक्रिय रूप से शिक्षण प्रक्रिया में भाग ले सके।

भारत में समावेशी शिक्षा का महत्व बढ़ाने के लिए कई नीतियाँ और कार्यक्रम चलाए गए हैं। “शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009” (RTE Act, 2009) के अंतर्गत यह सुनिश्चित किया गया कि 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा मिले। साथ ही, “सर्व शिक्षा अभियान” और “समग्र शिक्षा अभियान” जैसे कार्यक्रमों ने विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य विद्यालयों में शामिल करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए। इन कार्यक्रमों के माध्यम से विद्यालयों में विशेष शिक्षकों की नियुक्ति, सहायक उपकरणों की उपलब्धता, और शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है।

समावेशी शिक्षा के अनेक लाभ हैं। सबसे पहले, यह बच्चों में समानता और सहयोग की भावना को बढ़ाती है। जब सामान्य और विशेष आवश्यकता वाले बच्चे एक साथ पढ़ते हैं, तो वे एक-दूसरे के अनुभवों से सीखते हैं। इससे सहानुभूति, समझ और सम्मान जैसी मानवीय भावनाएँ विकसित होती हैं। यह बच्चों को विविधता को स्वीकार करना और एक-दूसरे की सहायता करना सिखाती है। इसके अलावा, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का आत्मविश्वास भी बढ़ता है, क्योंकि वे समाज का एक सक्रिय हिस्सा महसूस करते हैं।

समावेशी शिक्षा शिक्षकों के लिए भी एक अवसर होती है कि वे नई शिक्षण तकनीकें और नवाचार अपनाएँ। यह शिक्षकों को प्रेरित करती है कि वे शिक्षण पद्धतियों को अधिक रचनात्मक और अनुकूल बनाएं ताकि सभी बच्चे शिक्षा में शामिल रह सकें। उदाहरण के लिए, शिक्षक दृश्य सहायता, ऑडियो सामग्री, या प्रोजेक्ट आधारित शिक्षण का उपयोग कर सकते हैं जिससे हर विद्यार्थी अपने तरीके से सीख सके।

हालाँकि, समावेशी शिक्षा को लागू करने में कुछ चुनौतियाँ भी हैं। कई बार विद्यालयों में आवश्यक संसाधनों की कमी होती है, जैसे विशेष शिक्षकों की अनुपलब्धता, सहायक उपकरणों की कमी या शिक्षण सामग्री का अभाव। समाज में अभी भी विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति संवेदनशीलता और जागरूकता की कमी है। इसलिए, समावेशी शिक्षा को सफल बनाने के लिए सरकार, शिक्षक, अभिभावक और समाज सभी का संयुक्त प्रयास आवश्यक है।

भविष्य की दृष्टि से, समावेशी शिक्षा केवल एक नीति या कार्यक्रम नहीं बल्कि एक सामाजिक आंदोलन है जो समानता, न्याय और मानवाधिकारों की भावना को मजबूत करता है। यह शिक्षा प्रणाली इस विचार को प्रोत्साहित करती है कि हर बच्चा मूल्यवान है और उसे अपने सपनों को साकार करने का अधिकार

है। जब विद्यालय हर प्रकार के बच्चों को अपनाते हैं, तो वे न केवल शिक्षण का स्थान बनते हैं बल्कि समाज में समानता और एकता के प्रतीक बन जाते हैं।

अंततः, समावेशी शिक्षा का सार यही है कि शिक्षा किसी विशेष वर्ग के लिए नहीं, बल्कि सभी के लिए है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो विविधता को स्वीकार करती है, समानता को बढ़ावा देती है और हर बच्चे को अपनी पूर्ण क्षमता तक पहुँचने का अवसर देती है। यही सच्चे अर्थों में शिक्षा का उद्देश्य है — “सबके लिए शिक्षा, और सबको समान अवसर।”

5.4 उन्नत तकनीकी शोध क्या है!

उन्नत प्रौद्योगिकी अनुसंधान (Advanced Technology Research) नई जटिल तकनीकों को विकसित करने, मौजूदा तकनीकों में सुधार करने और मौजूदा वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग करके नए समाधान खोजने का एक व्यवस्थित प्रयास है। इसमें डेटा विश्लेषण, मशीन लर्निंग और क्वान्टम कम्प्यूटिंग जैसी अत्याधुनिक विधियों और उपकरणों का उपयोग शामिल है ताकि अज्ञात समस्याओं को हल किया जा सके और सेवाएँ बनाई जा सकें।

उन्नत प्रौद्योगिकी अनुसंधान के मुख्य पहलू :

- नवीन ज्ञान का सृजन: यह मौजूदा वैज्ञानिक समझ की सीमाओं को आगे बढ़ाता है, जिससे नए सिद्धान्तों और अवधारणाओं का जन्म होता है।
- तकनीकी उन्नति: इसका उद्देश्य नई प्रौद्योगिकियों का आविष्कार करना या मौजूदा प्रौद्योगिकियों को बेहतर बनाना है, जिससे वे अधिक कुशल और प्रभावी बन सकें।
- उन्मुख दृष्टिकोण: यह वास्तविक दुनिया की समस्याओं को हल करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है, जैसे ग्रामीण भारत में स्थायी समाधान प्रदान करना।
- अत्याधुनिक उपकरण और तरीके: उन्नत शोधकर्ता डेटा विश्लेषण, मशीन लर्निंग और सुपरकम्प्यूटिंग जैसे उन्नत उपकरणों और विधियों का उपयोग करते हैं ताकि बड़ी मात्रा में डेटा का विश्लेषण किया जा सके और छिपे हुए पैटर्न की खोज की जा सके।
- अनुप्रयोग: विकसित प्रौद्योगिकियों को स्वास्थ्य सेवा, कृषि, ऊर्जा और अन्य क्षेत्रों में लागू किया जाता है।

उपरोक्त को देखते हुये हम कह सकते हैं कि क्वान्टम तकनीकों और उनके अनुप्रयोगों पर राष्ट्रीय मिशन क्वान्टम कम्प्यूटिंग के क्षेत्र में अनुसंधान को बढ़ावा देता है, जिससे भविष्य में जटिल समस्याओं को हल करने की क्षमता मिलती है। उन्नत तकनीकों का उपयोग स्वास्थ्य क्षेत्र में डिजिटल स्वास्थ्य को लागू करने और संवेदनशील डेटा को सुरक्षित रखने के लिए किया जा रहा है। उन्नत तकनीकों का उपयोग करके ग्रामीण क्षेत्रों को सशक्त बनाया जा सकता है, जिससे वे आत्मनिर्भर बन सकें।

विशेष शिक्षा के क्षेत्र में शोध और तकनीकी दोनों का गहरा प्रभाव है। शोध के माध्यम से यह समझ विकसित होती है कि विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों के लिए कौन-सी शिक्षण पद्धतियाँ सबसे प्रभावी हैं। इससे शिक्षकों को नई रणनीतियाँ अपनाने, व्यक्तिगत शिक्षण योजना (IEP) तैयार करने और विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षण वातावरण बनाने में सहायता मिलती है। शोध के परिणामों के आधार पर न केवल शिक्षण विधियों में सुधार होता है, बल्कि नई तकनीकी उपकरणों और सहायक साधनों के विकास में भी तेजी आती है, जो विशेष बच्चों की सीखने की प्रक्रिया को सहज और प्रभावी बनाते हैं।

विशेष शिक्षा में तकनीकी का प्रयोग विद्यार्थियों के लिए सीखने को अधिक सुलभ, आकर्षक और व्यक्तिगत बनाता है। ब्रेल डिस्प्ले, हियरिंग एड्स, AAC (Augmentative and Alternative Communication) ऐप्स, ऑडियो बुक्स और डिजिटल लर्निंग टूल्स जैसे उपकरण दृष्टि, श्रवण या बोलने की कठिनाइयों वाले विद्यार्थियों के लिए बेहद उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। स्मार्ट क्लासरूम, टैबलेट और ऑनलाइन शैक्षिक प्लेटफॉर्म के माध्यम से बच्चे अपनी गति और रुचि के अनुसार सीख सकते हैं। आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और मशीन लर्निंग जैसी तकनीकें भी विशेष शिक्षा में व्यक्तिगत शिक्षण अनुभव प्रदान कर रही हैं। इस प्रकार, शोध और तकनीकी का समन्वय विशेष शिक्षा को अधिक समावेशी, प्रभावी और आधुनिक बना रहा है। शोध दिशा देता है और तकनीक उस दिशा में गति प्रदान करती है, जिससे प्रत्येक विद्यार्थी अपनी क्षमता के अनुरूप आगे बढ़ सके।

5.5 विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अनुकूलन का प्रभाव

विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अनुकूलन छात्रों की व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करके सुलभता, व्यक्तिगत सीखने और समानता को बढ़ावा देता है, जिससे सीखने के अनुभव बेहतर होते हैं और सांभिकों अपनी पूरी क्षमता हासिल करने में मदद मिलती है। प्रौद्योगिकी विभिन्न सीखने की शैलियों को पूरा करने के लिए पाठ्यक्रम और सामग्री को अनुकूलित करती है, जिससे बाधाएं दूर होती हैं और छात्रों की व्यस्तता बढ़ती है। हालांकि इसके प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षक प्रशिक्षण, पर्याप्त संसाधनों और बुनियादी ढांचे तक पहुँच की आवश्यकता होती है।

तकनीकी अनुकूलन के प्रभाव

1. सुलभता में वृद्धि: प्रौद्योगिकी विशेष अवयवशक्तियों वाले छात्रों के लिए शैक्षिक सामग्री को अधिक सुलभ बनाती है। जैसे उदाहरण के तौर पर, टेक्स्ट-टू-स्पीच सॉफ्टवेयर, या वैकल्पिक इनपुट डिवाइस डिस्प्लेक्सिया या शारीरिक अक्षमता वाले छात्रों को सीखने में मदद कर सकते हैं।
2. व्यक्तिगत सीखने के अनुभव: तकनीकी अनुकूलन प्रत्येक छात्र की व्यक्तिगत सीखने की शैलियों, गति और प्राथमिकताओं के अनुरूप सामग्री और शिक्षण विधियों को अनुकूलित करने में सक्षम बनाता है।

3. बाधाओं को दूर करना: प्रौद्योगिकी उन बाधाओं को दूर करती है जो पारंपरिक शिक्षा प्रणालियों में छात्रों के लिए हो सकती हैं, जिससे उन्हें पाठ्यक्रम के साथ सार्थक रूप से जुड़ने का मौका मिलता है

4. छात्रों की व्यस्तता: व्यक्तिगत और सुलभ सामग्री, छात्रों को सीखने की प्रक्रिया में अधिक सक्रिय और व्यस्त रहने में मदद करती है, जिससे समग्र सीखने के परिणाम बेहतर होते हैं।

5. स्वतन्त्रता और स्वायत्ता: उपयुक्त तकनीकी उपकरणों के साथ, विशेष अवयव्यता वाले छात्रों को अपनी सीखने की प्रक्रिया में अधिक स्वतंत्र और स्वायत्त बनाने में मदद मिल सकती है।

उपरोक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि विशेष आवश्यकताओं वाले छात्रों से लेकर समावेशी छात्रों तक तकनीकी अनुकूलन का प्रभाव देखने को मिलता है यदि समावेशी कि बात कि जाए तो प्रौद्योगिकी की भूमिका में सीखने के लिए सार्वभौमिक डिजाइन (UDL) ढांचा शिक्षकों को ऐसे पाठ्यक्रम बनाने के लिए मार्गदर्शन कर्ता है। इसी तरह व्यक्तिगत शैक्षणिक योजनाएँ जैसे IEP या 504 में उल्लेखित विशिष्ट समायोजन को लागू करने में मदद करती है जिससे यह सुनिश्चित होता है कि प्रत्येक छात्र को उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार सहायता मिले।

वर्तमान युग में शिक्षा का स्वरूप तेजी से बदल रहा है, और इस परिवर्तन में प्रौद्योगिकी (Technology) ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जब हम विशेष और समावेशी शिक्षा की बात करते हैं, तो तकनीकी अनुकूलन (Technological Adaptation) का प्रभाव और भी गहरा दिखाई देता है। विशेष शिक्षा उन विद्यार्थियों के लिए है जिनकी शारीरिक, मानसिक, संवेदी या बौद्धिक क्षमताएँ सामान्य से भिन्न होती हैं, जबकि समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी प्रकार के विद्यार्थियों—चाहे वे सामान्य हों या विशेष आवश्यकताओं वाले—को एक समान और सहयोगपूर्ण वातावरण में शिक्षा प्रदान करना है। ऐसे में तकनीक न केवल सीखने की प्रक्रिया को सरल बनाती है, बल्कि समान अवसरों का वातावरण भी निर्मित करती है।

तकनीकी अनुकूलन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह व्यक्तिगत शिक्षण (Personalized Learning) की सुविधा प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, दृष्टिबाधित छात्रों के लिए स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर, ब्रेल डिस्प्ले, या ऑडियो बुक्स का उपयोग उन्हें उसी सामग्री तक पहुँच प्रदान करता है जो अन्य छात्र पढ़ते हैं। इसी प्रकार श्रवण बाधित विद्यार्थियों के लिए साइन लैंग्वेज ट्रांसलेटर ऐप्स, क्लोज्ड कैप्शनिंग वाले वीडियो और टेक्स्ट-टू-स्पीच तकनीकें संचार की बाधाओं को काफी हद तक दूर कर देती हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि तकनीक ने इन विद्यार्थियों के लिए 'सीखने का नया संसार' खोल दिया है, जहाँ सीमाएँ धीरे-धीरे मिटती जा रही हैं।

स्मार्ट क्लासरूम, डिजिटल लर्निंग प्लेटफॉर्म और इंटरैक्टिव कंटेंट ने भी विशेष और समावेशी शिक्षा में नई ऊर्जा भरी है। उदाहरण के तौर पर, टच-आधारित टैबलेट्स या कंप्यूटर प्रोग्राम ऐसे बनाए जा रहे हैं जो बच्चों की सीखने की गति, रुचि और क्षमताओं के अनुसार सामग्री प्रस्तुत करते हैं। इससे शिक्षक को भी

यह समझने में आसानी होती है कि कौन-सा छात्र किन क्षेत्रों में कठिनाई महसूस कर रहा है और उसे किस प्रकार का समर्थन चाहिए। इस तरह तकनीक शिक्षण प्रक्रिया को न केवल प्रभावी बनाती है बल्कि हर छात्र को आत्मनिर्भर बनने की दिशा में प्रोत्साहित करती है।

इसके अलावा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) और मशीन लर्निंग के प्रयोग से शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव आ रहे हैं। एआई आधारित एप्लिकेशन विद्यार्थियों के प्रदर्शन का विश्लेषण करके यह सुझाव दे सकते हैं कि उन्हें किन क्षेत्रों में अधिक अभ्यास की आवश्यकता है। कुछ उन्नत एआई टूल्स अब ऐसे वर्चुअल असिस्टेंट के रूप में कार्य करते हैं जो बच्चों को व्यक्तिगत रूप से मार्गदर्शन देते हैं—यह विशेष रूप से उन विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है जो सामाजिक या भाषाई बाधाओं के कारण कक्षा में प्रश्न पूछने से हिचकते हैं। इस तकनीकी सहयोग से उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और वे अपने सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेने लगते हैं।

वर्चुअल और ऑगमेंटेड रियलिटी (VR/AR) ने भी विशेष शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। उदाहरण के लिए, ऑटिज्म स्पेक्ट्रम डिसऑर्डर वाले बच्चों के लिए VR वातावरण में सामाजिक स्थितियों का अभ्यास कराना एक सुरक्षित और प्रभावी तरीका बन गया है। इससे वे वास्तविक जीवन की परिस्थितियों के लिए बेहतर रूप से तैयार हो पाते हैं। इसी तरह, शारीरिक विकलांगता से ग्रसित छात्र VR माध्यम से प्रयोगशाला प्रयोग या शैक्षणिक भ्रमण जैसे अनुभव प्राप्त कर सकते हैं, जिन तक भौतिक रूप से पहुँचना उनके लिए कठिन होता है।

तकनीकी अनुकूलन का एक और महत्वपूर्ण पहलू है—सुलभता (Accessibility)। भारत जैसे देश में, जहाँ संसाधनों की असमानता बड़ी चुनौती है, वहाँ डिजिटल उपकरणों और इंटरनेट की पहुँच ने दूरदराज के क्षेत्रों के विशेष आवश्यकता वाले छात्रों तक शिक्षा पहुँचाने का मार्ग खोला है। ऑनलाइन कक्षाएँ, वीडियो लेक्चर, और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म ने उन्हें घर बैठे शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया है। साथ ही, यह तकनीक शिक्षकों के लिए भी प्रशिक्षण का माध्यम बन रही है—वे विशेष शिक्षा की नवीन पद्धतियों और तकनीकी उपकरणों के प्रयोग के बारे में लगातार अपडेट रह सकते हैं।

हालाँकि, तकनीकी अनुकूलन के सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं। सबसे बड़ी चुनौती है—आर्थिक असमानता और डिजिटल विभाजन (Digital Divide)। बहुत से विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के पास आवश्यक उपकरण या इंटरनेट कनेक्शन नहीं होते, जिससे वे इस तकनीकी क्रांति से वंचित रह जाते हैं। दूसरी चुनौती है—शिक्षकों का अपर्याप्त प्रशिक्षण। केवल उपकरण उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है; शिक्षकों को यह भी सिखाना आवश्यक है कि इन तकनीकों का प्रभावी उपयोग कैसे किया जाए ताकि सभी छात्रों के हित में परिणाम मिल सकें। साथ ही, तकनीकी उपकरणों की भाषा, सामग्री की गुणवत्ता और स्थानीय सांस्कृतिक संदर्भों को ध्यान में रखना भी आवश्यक है, अन्यथा यह समावेशी शिक्षा के मूल उद्देश्य को सीमित कर सकता है।

सरकार और नीति-निर्माताओं की भूमिका भी इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) ने समावेशी शिक्षा और तकनीकी प्रयोग दोनों पर जोर दिया है। “डिजिटल इंडिया” और “समग्र शिक्षा अभियान” जैसी पहलें विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त तकनीकी साधन उपलब्ध कराने की दिशा में कार्य कर रही हैं। यदि इन नीतियों को स्थानीय स्तर पर प्रभावी रूप से लागू किया जाए, तो तकनीक शिक्षा में समानता लाने का एक सशक्त उपकरण बन सकती है।

भविष्य की दृष्टि से देखा जाए तो विशेष और समावेशी शिक्षा में तकनीकी अनुकूलन एक स्थायी परिवर्तन बन चुका है। आने वाले समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, रोबोटिक्स, अनुकूली शिक्षण सॉफ्टवेयर (Adaptive Learning Software), और डेटा विश्लेषण (Learning Analytics) जैसी तकनीकें शिक्षण प्रक्रिया को और भी अधिक व्यक्तिगत और प्रभावी बनाएंगी। इससे न केवल छात्रों की सीखने की गति में सुधार होगा बल्कि शिक्षकों का कार्यभार भी कम होगा, जिससे वे रचनात्मक और भावनात्मक सहयोग पर अधिक ध्यान दे पाएंगे।

अंततः यह कहा जा सकता है कि तकनीकी अनुकूलन ने विशेष और समावेशी शिक्षा को नई दिशा और नई संभावनाएँ दी हैं। यह केवल उपकरणों का उपयोग भर नहीं है, बल्कि यह एक सोच में परिवर्तन है— जहाँ शिक्षा हर व्यक्ति का अधिकार है और तकनीक उस अधिकार को सबके लिए सुलभ बना रही है। यदि हम इसके सामाजिक, आर्थिक और नीतिगत पहलुओं पर संतुलित ध्यान दें, तो यह परिवर्तन भारत जैसे विविध समाज को अधिक संवेदनशील, सशक्त और समावेशी बना सकता है। तकनीक अब केवल सहायक साधन नहीं रही; यह शिक्षा में समानता और गरिमा की नई भाषा बन चुकी है।

5.6 सारांश

शोध का प्रभाव और विशेष शिक्षा में तकनीकी से तात्पर्य है कि शिक्षा में उन्नत तकनीकी शोध का प्रभाव का होना जिससे कि छात्रों की व्यक्तिगत जरूरतों के अनुसार सीखने को अनुकूलित करने, सुलभता और स्वायत्ता और वैयक्तिकृत अनुभव बढ़ाने में महत्वपूर्ण होना। विशेष और समावेशी शिक्षा पर प्रौद्योगिकी और शोध के प्रभाव से छात्रों की प्रेरणा, भागीदारी और सीखने के परिणामों में सुधार हुआ है। शोध कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है। प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बुनियादी ढांचा में सुधार, शिक्षक प्रशिक्षण, सुसंगत नीतियाँ और डिजिटल साक्षरता को एक व्यापक रणनीति में एकीकृत करने की आवश्यकता है सुनिश्चित करना होगा कि प्रौद्योगिकियाँ सार्वभौमिक डिजाइन सिद्धांतों का पालन करें ताकि वे सभी छात्रों के लिए सुलभ हो। नई प्रणालियों के विकास कि दर, तकनीकी व सामाजिक क्षेत्रों में परिवर्तन को देखते हुए, प्रतिभा का अभिज्ञान व उसका पोषण अनुसंधान का एक और प्राथमिक विषय है। प्रयोगात्मक व देशांतरीय अध्ययन की सहायता से प्रतिभा शाली बच्चों के लिए उनकी योग्यता के विशेष क्षेत्रों में, समृद्ध पाठ्यक्रम के कार्यक्रम नियोजित व

विकसित होने चाहिए। शिक्षा के गुणात्मक सुधार के लिए अनुसंधान व नई पद्धतियों के द्वारा शिक्षा को सुधारा जा सकता है। विशेष आवश्यकताओं वाले छात्रों को शोध अनुसन्धान एवं तकनीकी द्वारा शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। आधुनिक समाज में शिक्षा का स्वरूप व्यवसायिक है, शिक्षा ज्ञानार्जन तथा इसके प्रसार से एक प्रगतिशील दिशा दे सके। यदि देखा जाये तो विशेष शिक्षा बच्चे की जरूरतों पर केन्द्रित होती है जबकि समावेशी शिक्षा छात्रों की जरूरतों के अनुरूप पूरी शिक्षा प्रणाली ढलने पर केन्द्रित होती है। शिक्षकों को ऐसे पाठ्यक्रम बनाने के लिए UDL भी मार्गदर्शन करता है। व्यक्तिगत शैक्षणिक योजनाएँ जैसे IEP को भी लागू कर सकते हैं। अंत में कह सकते हैं कि शोध का प्रभाव और तकनीकी विशेष (विशिष्ट) और समावेशी शिक्षा में उन्नत तकनीकी का प्रभाव छात्रों कि शिक्षा में किस तरह का बदलाव एवं सुधार ला सकता है।

5.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. लोकेश कौल: शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली; विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि.
2. समावेशी शिक्षा: यतीन्द्र ठाकुर
3. <https://journals.plos.org>
4. <https://hi.wikipedia.org>
5. <https://ijcrt.org>

5.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. विशेष और समावेशी शिक्षा में उन्नत तकनीकी शोध का क्या महत्व है?
2. विशेष और समावेशी शिक्षा में अंतर स्पष्ट कीजिये।
3. तकनीकी अनुकूलन का प्रभाव से तात्पर्य क्या है? विस्तार से बताइये।

इकाई 6-

विशेष शिक्षा के विकास में विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय और कानून एजेंसियों का योगदान

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून

6.3.1 विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून का महत्व

6.3.2 अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून की आवश्यकता

6.3.3 विशेष शिक्षा के विकास में प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून का योगदान

6.4. विशेष शिक्षा के विकास में प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय कानून का योगदान

6.4.1 शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध सम्मेलन (Convention Against Discrimination in Education, 1960)

6.4.2 संयुक्त राष्ट्र का दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन (UNCRPD), 2006

6.5 विशेष शिक्षा के विकास में प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं

6.5.1 UNESCAP (संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग, एशिया प्रशांत) 3.1.1 UNESCAP का परिचय

6.5.2 UNICEF (संयुक्त राष्ट्र बाल कोष)

6.5.3. WHO (विश्व स्वास्थ्य संगठन)

6.5.4 UNDP (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम)

6.5.5 सतत विकास लक्ष्य 4 (SDG 4)

6.6 सारांश

6.7 शब्दावली

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.9 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

विशेष शिक्षा का विकास केवल किसी एक राष्ट्र की उपलब्धि नहीं है, बल्कि यह एक वैश्विक आंदोलन का परिणाम है जिसमें विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं, संगठनों और कानूनों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात जब संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना हुई, तब से लेकर आज तक, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा ने यह स्थापित किया कि शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है, चाहे उसकी शारीरिक, मानसिक या बौद्धिक स्थिति कुछ भी हो। 20वीं सदी के उत्तरार्ध में

दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति समाज के दृष्टिकोण में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिला। पहले दिव्यांगता को एक चिकित्सीय समस्या के रूप में देखा जाता था, जहां व्यक्ति को 'ठीक' किया जाना आवश्यक समझा जाता था। परंतु धीरे-धीरे यह समझ विकसित हुई कि दिव्यांगता समाज द्वारा निर्मित बाधाओं का परिणाम है, न कि व्यक्ति की व्यक्तिगत सीमा। इस सामाजिक मॉडल ने दिव्यांग व्यक्तियों को अधिकार धारक के रूप में स्थापित किया और यह माना गया कि समाज की जिम्मेदारी है कि वह समावेशी वातावरण तैयार करे।

अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे UNESCO, UNICEF, WHO, UNDP और UNESCAP ने विश्व भर में विशेष शिक्षा के विकास में अग्रणी भूमिका निभाई है। इन संगठनों ने न केवल नीतिगत दिशानिर्देश प्रदान किए हैं, बल्कि तकनीकी सहायता, वित्तीय सहयोग, अनुसंधान, प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण के माध्यम से विकासशील देशों को समावेशी शिक्षा प्रणाली स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 1960 में UNESCO द्वारा शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध सम्मेलन से लेकर 2006 में संयुक्त राष्ट्र के दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन (UNCRPD) तक की यात्रा ने विशेष शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए हैं। 1994 का सलामांका वक्तव्य एक ऐतिहासिक दस्तावेज था जिसने समावेशी शिक्षा की अवधारणा को वैश्विक स्तर पर स्थापित किया। इस सम्मेलन में 92 देशों और 25 अंतर्राष्ट्रीय संगठनों ने भाग लिया और यह घोषणा की कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को नियमित विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। इसके पश्चात 2000 में दकार फ्रेमवर्क, 2006 में UNCRPD, और 2015 में सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) विशेषकर SDG 4 ने समावेशी और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को वैश्विक प्राथमिकता बना दिया। भारत के संदर्भ में, इन अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों का गहरा प्रभाव रहा है। भारत ने UNCRPD पर 2007 में हस्ताक्षर किए और इसके अनुरूप 2016 में दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम (RPWD Act) पारित किया। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 और समग्र शिक्षा अभियान जैसे कार्यक्रम इन्हीं अंतर्राष्ट्रीय मानकों और प्रतिबद्धताओं के परिणाम हैं। आज भारत में लगभग 2.78 करोड़ दिव्यांग व्यक्ति हैं, और उनकी शिक्षा सुनिश्चित करना राष्ट्रीय प्राथमिकता बन गई है।

यह अध्याय विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानूनों के योगदान का व्यापक अध्ययन प्रस्तुत करता है। हम देखेंगे कि कैसे 1960 से लेकर अब तक विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, घोषणाओं और संगठनों ने दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा के अधिकार को सुदृढ़ किया है। हम UNESCO, UNCRPD, UNESCAP, UNICEF, WHO, UNDP और SDG 4 के विशिष्ट योगदानों का विश्लेषण करेंगे और समझेंगे कि कैसे ये वैश्विक प्रयास राष्ट्रीय नीतियों और व्यवहारों को प्रभावित करते हैं।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप

- विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका को समझना
- प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय कानूनों और सम्मेलनों की पहचान करना
- UNCRPD के अनुच्छेद 24 और SDG 4 के लक्ष्यों का विश्लेषण करना
- अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के भारतीय नीतियों पर प्रभाव का मूल्यांकन करना
- समावेशी शिक्षा की अवधारणा और “Leave No One Behind” सिद्धांत को समझना
- दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण और वैश्विक नागरिकता की भावना विकसित करना संज्ञान के अर्थों को जानने में

6.3 विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून

विशेष शिक्षा का विकास अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और कानूनी ढाँचों से काफी प्रभावित हुआ है, जिन्होंने दिव्यांगता और समावेशी शिक्षा पर वैश्विक दृष्टिकोण को नया रूप दिया है। इसकी शुरुआत 1960 में यूनेस्को के शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध कन्वेंशन से हुई, जिसने शिक्षा को एक बुनियादी अधिकार माना और किसी भी आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित किया। तब से, अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने दिव्यांग व्यक्तियों के लिए कानूनी सुरक्षा और सहायता प्रणालियों को लगातार बढ़ाया है। 1994 में अभूतपूर्व सलामांका वक्तव्य ने समावेशी शिक्षा को एक विश्वव्यापी मानक के रूप में स्थापित किया, जिसमें कहा गया था कि समावेशी मानसिकता वाले नियमित स्कूल भेदभाव से लड़ने और स्वागत करने वाले समुदायों को बढ़ावा देने का सबसे अच्छा तरीका हैं। 2006 में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (UNCRPD) के साथ, चिकित्सा मॉडल से दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल में एक बड़ा बदलाव आया, जो कल्याणकारी मानसिकता से हटकर अधिकार-आधारित दृष्टिकोण की ओर बढ़ा। अनुच्छेद 24 विशेष रूप से समावेशी शिक्षा के अधिकार की गारंटी देता है और उचित समायोजन, सार्वभौमिक डिज़ाइन और सुगम्यता जैसी आवश्यक अवधारणाओं को प्रस्तुत करता है। यूनेस्को जैसे संगठन सभी के लिए शिक्षा और वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से नीति निर्माण और निगरानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। यूनिसेफ ने बाल-केंद्रित समावेशी शिक्षा कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित किया है और बाल अधिकारों पर कन्वेंशन (विशेषकर अनुच्छेद 23) का समर्थन किया है। इस बीच, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने अंतर्राष्ट्रीय कार्यप्रणाली, दिव्यांगता और स्वास्थ्य वर्गीकरण (ICF), विश्व दिव्यांगता रिपोर्ट (2011) और समुदाय-आधारित पुनर्वास कार्यक्रमों के माध्यम से योगदान

दिया है। UNDP ने समावेशी विकास और कौशल प्रशिक्षण पर काम किया है, और UNESCAP ने "तीन एशियाई और प्रशांत दशक के दिव्यांग व्यक्ति" (1993-2022) और इंचियोन रणनीति जैसी पहलों के माध्यम से क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाया है, जिसमें 10 लक्ष्य और 27 लक्ष्य शामिल हैं। 2015 में, सतत विकास लक्ष्य 4 (SDG 4) को अपनाया गया, जिसमें विशेष शिक्षा को वैश्विक विकास एजेंडे में शामिल किया गया, जिसका उद्देश्य "समावेशी और समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना और सभी के लिए आजीवन शिक्षा को बढ़ावा देना" है। यह लक्ष्य 4.5 के साथ विशेष रूप से प्रासंगिक है, जिसका उद्देश्य लैंगिक असमानताओं को दूर करना और दिव्यांग व्यक्तियों के लिए समान पहुँच की गारंटी देना है, साथ ही लक्ष्य 4.a, जो बच्चों, दिव्यांगताओं और लिंग के प्रति संवेदनशील शिक्षा सुविधाओं के निर्माण पर केंद्रित है। इन अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों ने राष्ट्रीय नीतियों को महत्वपूर्ण रूप से आकार दिया है, जैसा कि 2007 में भारत द्वारा यूएनसीआरपीडी के अनुसमर्थन और उसके बाद दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम (2016) के अधिनियमन में देखा जा सकता है, जो अंतर्राष्ट्रीय मानकों को स्थानीय कानून में शामिल करता है। यह यात्रा—पृथक्करण से समावेशन तक, और दिव्यांग व्यक्तियों को दान की वस्तु के रूप में देखने से लेकर उन्हें अधिकार धारकों के रूप में मान्यता देने तक—'हमारे बारे में कुछ भी हमारे बिना नहीं' के विचार के साथ-साथ वैश्विक जागरूकता में एक महत्वपूर्ण बदलाव का प्रतीक है। फिर भी, इन सिद्धांतों को व्यवहार में लाने में अभी भी चुनौतियाँ हैं, जैसे बुनियादी ढाँचे की कमी, पर्याप्त प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, दृष्टिकोण संबंधी बाधाएँ, वित्तीय बाधाएँ, और डेटा संग्रह एवं निगरानी में कमियाँ। सतत विकास लक्ष्यों में निहित 'किसी को पीछे न छोड़ें' का सिद्धांत यह सुनिश्चित करता है कि विकास के लाभ सबसे कमजोर और हाशिए पर पड़े समूहों तक पहुँचें। इसका अर्थ है कि विशेष शिक्षा केवल एक शैक्षिक लक्ष्य नहीं है, बल्कि एक मौलिक मानव अधिकार है, जो एक निष्पक्ष और समावेशी समाज के निर्माण के लिए आवश्यक है जहाँ प्रत्येक बच्चा, अपनी क्षमताओं या दिव्यांगताओं की परवाह किए बिना, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सके और अपनी पूरी क्षमता का उपयोग कर सके।

6.3.1 विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून का महत्व

1. वैश्विक दृष्टिकोण प्रदान किया – अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी।
2. समान अवसर की अवधारणा – UNESCO और UNICEF ने समान शिक्षा के अवसरों की नीति को बढ़ावा दिया।
3. अधिकार आधारित दृष्टिकोण (Rights-Based Approach) – UNCRPD (2006) ने दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा को अधिकार के रूप में स्थापित किया।
4. भेदभाव के विरुद्ध सुरक्षा – UNESCO Convention Against Discrimination in Education (1960) ने शिक्षा में भेदभाव को समाप्त करने पर बल दिया।

-
5. समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) – Salamanca Statement (1994) ने सभी बच्चों के लिए Inclusive Education का सिद्धांत दिया।
 6. राष्ट्रीय नीतियों को दिशा दी – इन अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के प्रभाव से भारत में PWD Act 1995, RPWD Act 2016, आदि बनाए गए।
 7. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर बल – UNESCO और UNICEF ने गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के मानक निर्धारित किए।
 8. सामाजिक न्याय और समानता का प्रसार – अंतर्राष्ट्रीय कानूनों ने दिव्यांग बच्चों के लिए समाज में समान भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा दी।
 9. वैश्विक सहयोग को प्रोत्साहन – देशों के बीच अनुभवों और संसाधनों के आदान-प्रदान की व्यवस्था बनी।
 10. निगरानी और मूल्यांकन तंत्र – संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाओं ने सदस्य देशों की प्रगति की निगरानी हेतु रिपोर्टिंग सिस्टम विकसित किया।
- 6.3.2 अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और कानून की आवश्यकता
1. समान अवसर सुनिश्चित करना: दिव्यांग व्यक्तियों को शिक्षा, रोजगार और सामाजिक भागीदारी में समान अवसर मिलें।
 2. मानव अधिकारों की रक्षा: सभी दिव्यांग व्यक्तियों के मूलभूत अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा करना।
 3. भेदभाव समाप्त करना: शिक्षा व समाज में दिव्यांगता के आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को रोकना।
 4. शिक्षा में समावेशन को बढ़ावा देना: समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) को विश्व स्तर पर लागू करने हेतु मार्गदर्शन देना।
 5. वैश्विक मानदंड स्थापित करना: सभी देशों में दिव्यांग शिक्षा के लिए समान नीतियाँ और मानक तैयार करना।
 6. देशों को दिशा-निर्देश देना: सरकारों को नीति निर्माण, कानून और कार्यक्रमों में सुधार हेतु सुझाव प्रदान करना।
 7. निगरानी और मूल्यांकन: अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ विभिन्न देशों में दिव्यांग अधिकारों के क्रियान्वयन की निगरानी करती हैं।
 8. सहयोग और संसाधन साझा करना: अनुसंधान, प्रशिक्षण और तकनीकी सहायता के माध्यम से देशों के बीच सहयोग बढ़ाना।
-

9. समाज में जागरूकता फैलाना: दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण और सामाजिक स्वीकृति को बढ़ावा देना।

10. अंतर्राष्ट्रीय संधियों के पालन हेतु बाध्यता: जैसे – UNCRPD (2006), UNESCO Convention (1960) आदि का पालन सुनिश्चित करना।

6.4. विशेष शिक्षा के विकास में प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय कानून का योगदान

6.4.1 शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध सम्मेलन (Convention Against Discrimination in Education, 1960)

शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध कन्वेंशन, 1960, संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) द्वारा अपनाया गया एक ऐतिहासिक अंतर्राष्ट्रीय विधान है, जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में किसी भी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करना और सभी व्यक्तियों के लिए शिक्षा के समान अधिकार को सुनिश्चित करना है। इस कन्वेंशन के माध्यम से नस्ल, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा अन्य विचार, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, आर्थिक स्थिति या किसी अन्य आधार पर शिक्षा के अधिकार में भेदभाव को स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया गया है। यह अधिनियम विशेष रूप से इस बात को मान्यता देता है कि दिव्यांग बच्चों सहित प्रत्येक बच्चा एक गरिमामय, उपयुक्त और समावेशी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार रखता है, जिससे न केवल उनके व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा मिलता है, बल्कि समाज में समता तथा सामाजिक न्याय के आदर्श की स्थापना होती है। यह कन्वेंशन सदस्य देशों को ऐसी शिक्षा नीति और व्यवस्था अपनाने के लिए प्रेरित करता है, जो समाज के सभी वर्गों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करे और शिक्षा के क्षेत्र में भेदभाव की किसी भी संभावना को जड़ से समाप्त करे।

विशेष शिक्षा के विकास में योगदान

- इस संधि ने विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा को समान अधिकार दिलाने में सहायक भूमिका निभाई।
- इसके बाद विभिन्न देशों में विशेष शिक्षा संबंधी कानून एवं योजनाएं विकसित की गईं, जैसे कि समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) की नीति।
- UNESCO तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों ने इस संधि के माध्यम से विशेष शिक्षा के मानक, प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता के दिशा-निर्देश प्रदान किए।

- Convention Against Discrimination in Education, 1960 ने न सिर्फ शिक्षा में भेदभाव रोकने बल्कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए समान शैक्षिक अवसर सुनिश्चित करने का वैश्विक ढांचा तैयार किया।
- देश-विदेश की नीतियों को आकार देने में इस संधि का असर दिखता है — विशेष शिक्षक प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम विकास और संसाधन उपलब्धता इसी के दिशा-निर्देशों के अनुरूप हैं।

6.4.2 संयुक्त राष्ट्र का दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन (UNCRPD), 2006

इस कन्वेंशन को UN जनरल असेंबली ने 13 दिसंबर 2006 को अपनाया और 30 मार्च 2007 को सदस्य देशों के हस्ताक्षर करने के लिए खुला। इस कन्वेंशन को लागू करने से दुनिया भर में दिव्यांग लोगों को उनके अधिकारों की मांग करने और राज्यों, निजी कंपनियों और नागरिक समाज की संस्थाओं को उन अधिकारों का पालन करने के लिए जवाबदेह बनाने की ताकत मिली है। यह सम्मेलन दिव्यांग व्यक्तियों को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पहुँच और राजनैतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में पूर्ण भागीदारी का अधिकार सुनिश्चित करता है। इसके तहत शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से समावेशी शिक्षा की पहलों को बढ़ावा दिया गया, जिससे दिव्यांग विद्यार्थियों को समान अवसर, सहयोगी व्यवस्थाएं, उपयुक्त पाठ्यचर्या और बिना किसी भेदभाव के मुख्यधारा की शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मिलता है। UNCRPD ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सभी सदस्य देशों को यह जिम्मेदारी दी कि वे अपनी राष्ट्रीय नीतियों व कानूनों को इस तरह संशोधित करें जिससे दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए स्कूल, कॉलेज और अन्य शिक्षण संस्थानों में पूर्ण समावेश संभव हो सके। भारत सहित विश्व के अनेक देशों ने इस सम्मेलन को स्वीकार कर, दिव्यांग जन अधिकार अधिनियम व समावेशी शिक्षा नीति जैसी विधायी पहलों के जरिये विशेष शिक्षा को मुख्यधारा में स्थापित किया है। इस प्रकार, UNCRPD ने वैश्विक स्तर पर दिव्यांग अधिकारों को कानूनी मान्यता दिलाते हुए, विशेष शिक्षा के विकास और विस्तार में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

यूएनसीआरपीडी और विशेष शिक्षा में योगदान

UNCRPD विशेष रूप से शिक्षा के अधिकार को एक मौलिक मानवाधिकार के रूप में मानता है और सभी स्तरों पर समावेशी शिक्षा की गारंटी देता है। यह कन्वेंशन दिव्यांग बच्चों और युवाओं को न केवल शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित करता है, बल्कि उन्हें उनकी आवश्यकतानुसार विशेष सहायता और समायोजन भी प्रदान करता है ताकि वे समान अवसरों के साथ शिक्षा ग्रहण कर सकें। कन्वेंशन के अनुच्छेद 24 के अनुसार, सभी स्कूलों को भौतिक और सूचना-संचार दोनों स्तरों पर सुलभ बनाना आवश्यक है। साथ ही, ब्रेल, सांकेतिक भाषा, वैकल्पिक संचार माध्यम, और शिक्षकों का प्रशिक्षण भी इस विशेष शिक्षा के अंग हैं।

अंतरराष्ट्रीय कानूनों का विशेष शिक्षा विकास में योगदान

- मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण: UNCRPD जैसी अंतरराष्ट्रीय संधियाँ दिव्यांग बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा और संवर्द्धन के लिए एक कानूनी रूपरेखा प्रदान करती हैं, जिससे अलगाव आधारित शिक्षा से समावेशी शिक्षा की ओर बदलाव हुआ है। इससे शिक्षा की नीतियाँ और कानूनी ढांचे दिव्यांग बच्चों के समग्र विकास के लिए अनुकूल हुए हैं।
- शिक्षा तक समान पहुंच: इन कानूनों और संधियों ने दिव्यांग बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा में शामिल करने के लिए आवश्यक नीतिगत समर्थन दिया है, जिससे विशेष शिक्षा की गुणवत्ता और समावेशिता बढ़ी है।
- शिक्षकों और संस्थानों का प्रशिक्षण: अंतरराष्ट्रीय कानून दिव्यांगता जागरूकता, समावेशी शिक्षा विधियों और उपयुक्त शिक्षण तकनीकों में शिक्षकों के प्रशिक्षण को समर्थन देते हैं, जो कि विशेष शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण है।
- सहायता तकनीक और संसाधन: ये कानून विशेष उपकरणों और संसाधनों के उपयोग को प्रोत्साहित करते हैं, जैसे कि ब्रेल, तकनीकी सहायक उपकरण, और वैकल्पिक शिक्षण माध्यम, जो विशेष शिक्षा को प्रभावी बनाने में सहायक हैं।

6.5 विशेष शिक्षा के विकास में प्रमुख अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं का योगदान

6.5.1 UNESCAP (संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग, एशिया प्रशांत)

संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग, एशिया और प्रशांत क्षेत्र के लिए (United Nations Economic and Social Commission for Asia and the Pacific - UNESCAP) संयुक्त राष्ट्र की एक क्षेत्रीय संस्था है, जिसकी स्थापना 1947 में हुई थी। इसका मुख्यालय बैंकॉक, थाईलैंड में स्थित है। UNESCAP का मुख्य उद्देश्य एशिया-प्रशांत क्षेत्र के 53 सदस्य देशों और 9 सहयोगी देशों के आर्थिक और सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करना है। यह आयोग सतत विकास, गरीबी उन्मूलन, सामाजिक समावेशन, शांति और सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों का सामना करने के लिए क्षेत्रीय सहयोग और नीतिगत मार्गदर्शन प्रदान करता है। UNESCAP विभिन्न सामाजिक व आर्थिक क्षेत्रों में नीतिगत सलाह, तकनीकी सहायता और क्षमता निर्माण के कार्यक्रम संचालित करता है। यह आयोग 2030 के सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) के क्रियान्वयन में भी अहम भूमिका निभा रहा है, विशेषकर "कोई भी पीछे न छोटे" (Leaving no one behind) के सिद्धांत को लागू करने में जो दिव्यांग और वंचित वर्गों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करता है।

UNESCAP का विशेष शिक्षा के विकास में योगदान

☐ समावेशी नीतियों का समर्थन

UNESCAP दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों और उनके सामाजिक समावेशन के लिए व्यापक नीतिगत समर्थन देता है। यह आयोग क्षेत्रीय स्तर पर समावेशी शिक्षा की नींव रखने और दिव्यांग बच्चों के लिए समतुल्य शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए सरकारों और संगठनों को मार्गदर्शन करता है।

☐ इंचियोन स्ट्रेटेजी (Incheon Strategy)

UNESCAP ने एशिया-प्रशांत क्षेत्र में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए "इंचियोन स्ट्रेटेजी" को लागू करने में नेतृत्व किया है, जो 2013-2022 तक का एक कार्ययोजना थी। इस रणनीति का उद्देश्य विकलांगों के सशक्तिकरण के लिए शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, और सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में सुधार करना है। इस नीति के तहत विशेष शिक्षा को उन्नत कर दिव्यांग बच्चों की विविध जरूरतों को पूरा किया जाता है।

☐ क्षमता निर्माण और तकनीकी सहायता

UNESCAP सदस्य देशों को विशेष शिक्षा के क्षेत्र में योजना बनाना, कार्यक्रम लागू करना और मॉनिटरिंग करने के लिए तकनीकी सहायता प्रदान करता है। यह शिक्षक प्रशिक्षण और शैक्षिक संसाधनों के विकास में सहयोग करता है, ताकि समावेशी शिक्षा के मानक पूरे हो सकें।

☐ समाज में समावेशन को बढ़ावा

UNESCAP दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देता है, जिससे विशेष शिक्षा केवल स्कूलों तक सीमित न रहकर सामाजिक जीवन के हर पहलू में समान अवसर प्रदान करे। यह जागरूकता अभियानों के माध्यम से भेदभाव और बाधाओं को कम करने का कार्य करता है।

6.5.2 UNICEF (संयुक्त राष्ट्र बाल कोष)

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (United Nations International Children's Emergency Fund - UNICEF) की स्थापना 11 दिसंबर 1946 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा बच्चों के अधिकारों और उनकी सुरक्षा के लिए की गई थी। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क, अमेरिका में स्थित है। UNICEF का उद्देश्य बच्चों को जीवन के प्रारंभिक चरण में पोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, बचपन की सुरक्षा, और अधिकार प्रदान करना है। यह संस्था दुनिया भर के बच्चों, विशेष रूप से दिव्यांग और वंचित बच्चों के लिए काम करती है, ताकि सभी बच्चों को समान अवसर प्राप्त हों।

UNICEF का कार्यक्षेत्र व्यापक और वैश्विक है, जो स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा, बाल अधिकार, बाल सुरक्षा, और आपदा राहत के क्षेत्रों में फैला हुआ है। यह संस्था बच्चों की आवश्यकता के अनुसार नीतियों, कार्यक्रमों और सेवाओं का विकास, कार्यान्वयन और समर्थन करती है। UNICEF का मानना है कि हर बच्चे को एक समुचित और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अधिकार है, जिसमें विशेष रूप से दिव्यांग बच्चे भी शामिल हैं।

UNICEF का विशेष शिक्षा के विकास में योगदान

☐ समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना

UNICEF ने समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) के सिद्धांत को वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय बनाया है, जिसमें दिव्यांग बच्चों को मुख्यधारा के स्कूलों में शामिल करने और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने पर जोर दिया जाता है। यह संस्था स्कूलों को भौतिक, सामाजिक और शैक्षिक दोनों रूपों में सुलभ बनाने के लिए कार्यक्रम चलाती है।

☐ शिक्षक प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण

UNICEF शिक्षकों और शिक्षा कर्मचारियों को विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षण विधियों के प्रशिक्षण प्रदान करता है। इसका उद्देश्य शिक्षकों को दिव्यांग बच्चों की विविध जरूरतों को समझने और उनका समर्थन करने के लिए सशक्त बनाना है।

☐ शैक्षिक सामग्री और तकनीकी सहायता

यह संस्था विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए उपयुक्त शैक्षिक सामग्री, सहायक उपकरण, और तकनीकी संसाधनों का विकास करती है, जैसे ब्रेल किताबें, एडीए (ADA) अनुरूप उपकरण, और अन्य सहायक तकनीकें। ये संसाधन बच्चों को अपनी सीखने की प्रक्रिया में सहायता प्रदान करते हैं।

☐ नीति निर्माण में समर्थन

UNICEF विभिन्न देशों की सरकारों को नीतिगत समर्थन और सलाह देता है ताकि वे विशेष शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी और संवेदनशील नीतियाँ बना सकें। यह नीति विकास में बच्चों के अधिकारों के संरक्षण की दिशा में काम करता है।

☐ सामाजिक जागरूकता और बाल अधिकारों की रक्षा

UNICEF ने दिव्यांग बच्चों के अधिकारों के प्रति समाज में जागरूकता बढ़ाई है, जिससे समाज में भेदभाव कम हो और बच्चे सामाजिक सुरक्षा और सम्मान के साथ जीवन यापन कर सकें। यह बाल अधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ भी सक्रियता से काम करता है।

☐ आपदा और संकट के समय सहायता

आपदा और युद्ध जैसे संकट में UNICEF दिव्यांग बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और संरक्षण के लिए विशेष कार्यक्रम संचालित करता है, जिससे ये बच्चे सबसे कमजोर परिस्थितियों में भी शिक्षा से वंचित न ना हों।

6.5.3. WHO (विश्व स्वास्थ्य संगठन)

विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization - WHO) संयुक्त राष्ट्र की एक प्रमुख विशेष एजेंसी है, जिसकी स्थापना 7 अप्रैल 1948 को हुई थी। इसका मुख्यालय जिनेवा, स्विट्जरलैंड में स्थित है। WHO का मुख्य उद्देश्य वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करना, स्वास्थ्य सेवाओं को

बेहतर बनाना, रोगों की रोकथाम और नियंत्रण करना, और सभी लोगों के लिए स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित करना है। WHO स्वास्थ्य से जुड़ी नीतियों, मानकों, और तकनीकी दिशानिर्देशों का विकास करता है और देशों को स्वास्थ्य कार्यक्रम लागू करने में सहायता प्रदान करता है।

WHO का कार्यक्षेत्र स्वास्थ्य के व्यापक पहलुओं को समेटता है, जिसमें पुनर्वास, मानसिक स्वास्थ्य, दिव्यांगता विश्लेषण और नियंत्रण भी शामिल हैं। विशेष शिक्षा के संदर्भ में WHO की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह संस्था स्वास्थ्य और शिक्षा के बीच समन्वय स्थापित करती है ताकि दिव्यांग बच्चों को संपूर्ण विकास के अवसर प्रदान किए जा सकें।

WHO (विश्व स्वास्थ्य संगठन) का विशेष शिक्षा के विकास में योगदान

☐ दिव्यांगता की परिभाषा और मॉडल

WHO ने दिव्यांगता की व्यापक परिभाषा प्रस्तुत की है जो शारीरिक, मानसिक, संवेदी और बौद्धिक प्रतिबंधों को सम्मिलित करती है। उसने "इंटरनेशनल क्लासिफिकेशन ऑफ फंक्शनिंग, डिसेबिलिटी एंड हेल्थ" (ICF) मॉडल विकसित किया, जो दिव्यांगता को केवल चिकित्सा समस्या के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक पहलुओं सहित देखा जाता है। इस मॉडल ने विशेष शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी और व्यक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण को मजबूती दी।

☐ स्वास्थ्य और पुनर्वास सेवाओं का समन्वय

WHO ने दिव्यांग बच्चों के लिए चिकित्सा, चिकित्सीय एवं पुनर्वास सेवाओं के महत्व को उजागर किया है, जो विशेष शिक्षा के सफल कार्यान्वयन के लिए आवश्यक हैं। यह संस्था पुनर्वास तकनीकों, सहायक उपकरणों और सहायता सेवाओं के विकास और उपयोग को प्रोत्साहित करती है ताकि बच्चों की शिक्षा योग्यता बढ़े।

☐ मानसिक स्वास्थ्य और जैव-मानसिक विकास

WHO ने मानसिक स्वास्थ्य से जुड़े दिव्यांगताओं का आधिकारिक तौर पर मान्यता दी है, जिससे विशेष शिक्षा कार्यक्रमों को मानसिक दिव्यांग बच्चों के लिए समुचित सहायता देने में मदद मिली। इसके द्वारा मानसिक स्वास्थ्य को विशेष शिक्षा का अभिन्न हिस्सा माना गया है।

☐ वैश्विक नीतियों के विकास में योगदान

WHO ने दिव्यांगता और विशेष शिक्षा के लिए विभिन्न अंतरराष्ट्रीय नीतिगत दिशा-निर्देश और मानक विकसित किए हैं, जो देशों को दिव्यांग बच्चों के अधिकारों और सेवाओं को बेहतर बनाने में मार्गदर्शन देते हैं।

☐ अनुसंधान और डाटा संग्रह

WHO विशेष शिक्षा और दिव्यांगता से संबंधित डेटा संग्रह, शोध और सुरक्षा मानकों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका उद्देश्य सर्वेक्षण, रिपोर्ट और नीति निर्माण के लिए वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध कराना है।

☐ समावेशी शिक्षा के लिए स्वास्थ्य सहायता का समर्थन

WHO, UNESCO और अन्य अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के साथ मिलकर संयुक्त प्रयास करता है ताकि शिक्षा प्रणालियों में स्वास्थ्य सहयोग शामिल हो, जिससे दिव्यांग बच्चों को उचित स्वास्थ्य देखभाल के साथ शिक्षा मिल सके।

6.5.4 UNDP (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम)

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (United Nations Development Programme - UNDP) का स्थापना 1965 में हुई थी। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क शहर, संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थित है। UNDP का उद्देश्य विश्वभर के देशों में गरीबी उन्मूलन, सतत विकास, लोकतंत्र को बढ़ावा देना, और सामाजिक समावेशन सुनिश्चित करने के लिए काम करना है। यह संगठन विकासशील देशों को आर्थिक, सामाजिक, और पर्यावरणीय क्षेत्रों में बेहतर नीतियाँ बनाने और लागू करने का समर्थन प्रदान करता है।

UNDP विभिन्न कार्यक्रमों और पहल के माध्यम से वैश्विक स्तर पर सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता, और समावेशी विकास को प्रोत्साहित करता है, जिससे सभी व्यक्तियों, विशेष रूप से विकलांगों सहित, के लिए एक समान और न्यायसंगत समाज सुनिश्चित हो सके।

UNDP का विशेष शिक्षा के विकास में योगदान

☐ समावेशी विकास के लिए नीति समर्थन

UNDP दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों और समेकित सामाजिक विकास की दिशा में नीति निर्माण और कार्यान्वयन में सरकारों को मार्गदर्शन और तकनीकी सहायता प्रदान करता है। यह विशेष शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी नीतियों को विकसित करने और कार्यान्वित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

☐ सामाजिक समावेशन और अधिकारों का सशक्तिकरण

UNDP दिव्यांग और वंचित समूहों के सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देता है, जिससे वे शिक्षा सहित जीवन के सभी क्षेत्रों में बराबरी का अधिकार प्राप्त कर सकें। यह जागरूकता कार्यक्रम, क्षमता विकास, और समुदायिक भागीदारी को प्रोत्साहित करता है जो विशेष शिक्षा के विकास के लिए आवश्यक हैं।

☐ संस्थानिक क्षमता निर्माण

UNDP देशों में शिक्षा संस्थानों, सरकारी एजेंसियों, और समुदायों की क्षमता निर्माण में सहायता करता है ताकि वे विशेष शिक्षा सेवाओं को बेहतर तरीके से संचालित और प्रबंधन कर सकें।

☐ सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) में योगदान

UNDP सतत विकास लक्ष्य 4 (सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा) सहित, अन्य लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्रिय है। यह विशेष शिक्षा को प्राथमिकता देता है ताकि दिव्यांग बच्चों तक शिक्षा की पहुंच में कोई बाधा न हो।

☐ वित्तीय और तकनीकी सहायता

UNDP विशेष शिक्षा परियोजनाओं के लिए वित्तीय संसाधन जुटाने और तकनीकी विशेषज्ञता प्रदान करता है, जिससे विकासशील देशों में विशेष शिक्षा के कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से लागू किया जा सके।

☐ अंतरराष्ट्रीय सहयोग को मजबूत करना

UNDP अन्य संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों, गैर-सरकारी संगठनों, और विकास भागीदारों के साथ मिलकर विशेष शिक्षा की गुणवत्ता और पहुंच को बढ़ाने के लिए सहयोग करता है।

6.5.5 सतत विकास लक्ष्य 4 (SDG 4)

सतत विकास लक्ष्य 4 (Sustainable Development Goal 4 - SDG 4) संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2015 में स्वीकार किए गए 17 सतत विकास लक्ष्यों में से एक है, जिसका उद्देश्य 2030 तक सभी लोगों के लिए समावेशी, न्यायसंगत और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना है और जीवनभर सीखने के अवसर प्रदान करना है। SDG 4 शिक्षा के क्षेत्र में समानता लाने, शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने और सभी के लिए शिक्षा की पहुंच बढ़ाने पर केंद्रित है। यह लक्ष्य न केवल बच्चों और युवाओं के लिए प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा निशुल्क और समान रूप से उपलब्ध कराने का वादा करता है, बल्कि व्यावसायिक और उच्च शिक्षा तक पहुंच को भी बढ़ावा देता है। SDG 4 ईश्वरीय समावेशन की अवधारणा से प्रेरित है, जिससे दिव्यांग, लड़कियों, पिछड़े वर्गों और अन्य वंचित समूहों को शिक्षा में प्राथमिकता दी जाती है।

सतत विकास लक्ष्य 4 (SDG 4) का विशेष शिक्षा में योगदान

☐ समावेशी और समान शिक्षा का प्रावधान

SDG 4 समावेशी शिक्षा का समर्थन करता है, जिसमें सभी प्रकार के दिव्यांग और विशेष जरूरतों वाले बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा में समान अवसर दिए जाते हैं। इसका उद्देश्य शिक्षा व्यवस्था को इस तरह विकसित करना है कि कोई भी बच्चा, चाहे वह किस भी क्षमता का हो, शिक्षा से वंचित न रहे।

☐ शिक्षा की गुणवत्ता सुधारना

SDG 4 के अंतर्गत विशेष शिक्षा के अंतर्गत गुणवत्तापूर्ण शिक्षण विधियाँ, समर्पित शिक्षक प्रशिक्षण, सहायक तकनीकों और संसाधनों का विकास किया जाता है ताकि दिव्यांग बच्चों को उनकी शिक्षा में सर्वश्रेष्ठ अवसर मिले।

☐ प्राथमिकता प्राप्त समूहों के लिए पहुँच बढ़ाना

यह लक्ष्य विशेष रूप से उन समूहों को शिक्षा के अवसर प्रदान करता है जिन्हें सामाजिक, आर्थिक या भौतिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। दिव्यांग बच्चे इस श्रेणी में आते हैं, और SDG 4 के माध्यम से उनकी शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित की जाती है।

□ जीवनभर सीखने के अवसरों का प्रोत्साहन

SDG 4 शिक्षा को केवल प्रारंभिक तक सीमित नहीं रखता, बल्कि जीवनभर सीखने के अवसर प्रदान करने पर जोर देता है, जिससे दिव्यांग व्यक्तियों को निरंतर विकास और कौशल विकास के अवसर मिलते हैं।

□ नीतिगत सुधार और अंतरराष्ट्रीय सहयोग

SDG 4 की प्राप्ति के लिए देशों को नीतिगत सुधार करने और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहयोग बढ़ाने की प्रेरणा मिलती है। इसके अंतर्गत समावेशी शिक्षा को लागू करने के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता उपलब्ध कराई जाती है।

□ विश्वविद्यालय और व्यावसायिक शिक्षा में समावेशन

SDG 4 उच्च शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण तक विकलांगों की पहुँच को बढ़ावा देता है, जिससे वे रोजगार के बेहतर अवसर प्राप्त कर सकें और समाज में आत्मनिर्भर बनें।

6.6 सारांश

विशेष शिक्षा के क्षेत्र में अंतराष्ट्रीय संस्थाओं और कानूनों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। प्रारंभिक काल में जहाँ दिव्यांग व्यक्तियों को दया और कल्याण की दृष्टि से देखा जाता था, वहीं अंतराष्ट्रीय स्तर पर बने कानूनों और संगठनों ने इस सोच को अधिकार-आधारित दृष्टिकोण में परिवर्तित किया। संयुक्त राष्ट्र (United Nations) और उसकी विभिन्न संस्थाओं जैसे UNESCO, UNICEF, WHO, UNDP, UNESCAP ने विश्व स्तर पर विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) की अवधारणा को स्थापित किया।

UNESCO द्वारा पारित “शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध सम्मेलन, 1960” ने यह सुनिश्चित किया कि किसी भी बालक को जाति, लिंग, भाषा, धर्म या दिव्यांगता के आधार पर शिक्षा से वंचित न किया जाए। वहीं, संयुक्त राष्ट्र का दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन (UNCRPD), 2006 ने दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को अंतराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दी और शिक्षा में समान अवसर तथा समावेशिता को कानूनी स्वरूप प्रदान किया। इसी प्रकार, WHO ने स्वास्थ्य और पुनर्वास कार्यक्रमों के माध्यम से विशेष आवश्यकता वाले व्यक्तियों के सशक्तिकरण में योगदान दिया, जबकि UNICEF ने बच्चों के अधिकारों और शिक्षा तक उनकी पहुँच सुनिश्चित की। UNESCAP ने एशिया-प्रशांत क्षेत्र में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को मजबूत करने के लिए Incheon Strategy (2012) जैसी पहलें कीं। UNDP ने शिक्षा,

समान अवसर और रोजगार के माध्यम से सतत विकास को प्रोत्साहन दिया। साथ ही, सतत विकास लक्ष्य (SDG) 4 ने सभी के लिए समावेशी और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को वैश्विक प्राथमिकता बनाया। इन सभी प्रयासों ने विशेष शिक्षा को केवल दया या कल्याण का विषय नहीं रहने दिया, बल्कि इसे मानवाधिकार का अभिन्न अंग बना दिया। आज विशेष शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा के समान अवसर देना और “Leave No One Behind” के सिद्धांत को साकार करना है।

6.7 शब्दावली

1. UNESCAP (संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग, एशिया प्रशांत) — जो क्षेत्रीय स्तर पर दिव्यांगता और विकास से संबंधित कार्यक्रम चलाता है।
 2. UNDP (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम) — जो गरीबी उन्मूलन, शिक्षा और समान अवसरों के लिए कार्य करता है।
 3. SDG 4 (सतत विकास लक्ष्य 4) — “सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना।”
 4. Discrimination (भेदभाव) - किसी व्यक्ति के साथ लिंग, जाति, भाषा, धर्म या दिव्यांगता के आधार पर असमान व्यवहार करना।
-

6.8 सन्दर्भग्रन्थ

1. UNESCO (1960). Convention Against Discrimination in Education.
 2. United Nations (2006). Convention on the Rights of Persons with Disabilities (UNCRPD).
 3. WHO (World Health Organization) Reports on Disability and Education.
 4. UNICEF (2020). Inclusive Education Reports.
 5. UNESCAP (2012). Incheon Strategy to Make the Right Real for Persons with Disabilities in Asia and the Pacific.
 6. United Nations (2015). Sustainable Development Goals (SDG 4).
 7. United Nations (2015). Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development.
 8. पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 (Rehabilitation Council of India Act, 1992).
 9. शर्मा, आर. एन. (2019). विशेष शिक्षा के सिद्धांत और व्यवहार. नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिकेशन।
-

6.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. विशेष शिक्षा के विकास में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
2. UNCRPD (2006) के प्रमुख उद्देश्यों और शिक्षा के क्षेत्र में इसके योगदान को स्पष्ट कीजिए।
3. UNESCO द्वारा पारित "शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध सम्मेलन, 1960" की विशेषताओं और महत्व को समझाइए।
4. विशेष शिक्षा के क्षेत्र में WHO, UNICEF और UNDP की भूमिका का विश्लेषण कीजिए।
5. SDG 4 (Sustainable Development Goal 4) का विशेष शिक्षा से संबंध स्पष्ट कीजिए।
6. विशेष शिक्षा में अंतर्राष्ट्रीय कानूनों और संस्थाओं की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता का वर्णन कीजिए।

इकाई-7

विशेष शिक्षा के विकास में भारतीय कानूनों का योगदान

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 विशेष शिक्षा के विकास में भारतीय कानूनों का योगदान

7.3.1 भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 (Rehabilitation Council of India Act, 1992)

7.3.2 दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 (Persons with Disabilities Act, 1995)

7.3.3 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 (National Trust Act, 1999)

7.3.4 शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (Right to Education Act, 2009)

7.3.5. RPWD अधिनियम, 2016 (Introduction of RPWD Act 2016)

7.4 सारांश

7.5 शब्दावली

7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.7 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत में दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा और पुनर्वास का इतिहास स्वतंत्रता के बाद से विकसित हुआ है। प्रारंभ में, दिव्यांग व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा से अलग रखा जाता था और उनकी शिक्षा को केवल धर्मार्थ संस्थाओं के भरोसे छोड़ दिया जाता था। हालांकि, संवैधानिक प्रावधानों और अंतर्राष्ट्रीय दबाव के कारण, भारत सरकार ने विभिन्न कानूनों और नीतियों के माध्यम से दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को सुनिश्चित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21A (शिक्षा का अधिकार), अनुच्छेद 41 (कार्य, शिक्षा और सार्वजनिक सहायता का अधिकार), और अनुच्छेद 46 (कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा) ने दिव्यांग व्यक्तियों के लिए विशेष कानून बनाने की नींव रखी। पिछले तीन दशकों में, पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992, PWD अधिनियम 1995, राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999, RTE अधिनियम 2009, और RPWD अधिनियम 2016 जैसे महत्वपूर्ण कानूनों ने विशेष शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए हैं।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- भारत में विशेष शिक्षा से संबंधित विभिन्न कानूनों और अधिनियमों के ऐतिहासिक विकास को समझना एवं उनका तुलनात्मक अध्ययन करना।
- पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992, PWD अधिनियम 1995, RPWD अधिनियम 2016, राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999 तथा RTE अधिनियम 2009 के प्रमुख प्रावधानों, लक्ष्यों और महत्व का विश्लेषण करना।
- विशेष शिक्षा में इन कानूनी प्रावधानों के व्यावहारिक कार्यान्वयन की चुनौतियों एवं प्रभाव का मूल्यांकन करना।
- दिव्यांग छात्रों के लिए व्यक्तिगत शैक्षिक योजना (IEP) तैयार करने और समावेशी कक्षाओं के निर्माण में कानूनी ज्ञान का प्रयोग करना।
- समावेशी एवं अधिकार-आधारित दृष्टिकोण अपनाकर दिव्यांग व्यक्तियों के शैक्षिक अधिकारों की रक्षा करना।
- सकारात्मक दृष्टिकोण, सामाजिक न्याय और समानता के मूल्यों को आत्मसात करते हुए दिव्यांगजनों के प्रति संवेदनशीलता और जागरूकता बढ़ाना।

7.3 विशेष शिक्षा के विकास में भारतीय कानूनों का योगदान

दिव्यांगजनों की शिक्षा और पुनर्वास भारत में एक महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दा रहा है। स्वतंत्रता के बाद से भारत सरकार ने दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा और उनके सर्वांगीण विकास के लिए कई महत्वपूर्ण कानून बनाए हैं। ये कानून विशेष शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने में सहायक सिद्ध हुए हैं। इसके अंतर्गत हम पाँच प्रमुख कानूनों का विस्तृत अध्ययन करेंगे जो विशेष शिक्षा के विकास में मील का पत्थर साबित हुए हैं।

7.3.1. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 (Rehabilitation Council of India Act, 1992)

भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) की स्थापना 1986 में एक पंजीकृत संस्था के रूप में की गई थी। सितंबर 1992 में संसद द्वारा आरसीआई अधिनियम पारित किया गया और 22 जून 1993 को यह एक सांविधिक निकाय बन गया। इस अधिनियम को और व्यापक बनाने के लिए संसद द्वारा 2000 में इसमें

संशोधन किया गया। आरसीआई को दिव्यांगजनों को दी जाने वाली सेवाओं का विनियमन और निगरानी, पाठ्यक्रमों का मानकीकरण और पुनर्वास एवं विशेष शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत सभी योग्य पेशेवरों और कर्मियों का एक केंद्रीय पुनर्वास रजिस्टर बनाए रखने का कार्य सौंपा गया है। अधिनियम में दिव्यांगजनों को सेवाएं प्रदान करने वाले अयोग्य व्यक्तियों के विरुद्ध दंडात्मक कार्रवाई का भी प्रावधान है।

7.3.1.1 मुख्य प्रावधान

मानकीकरण और विनियमन:

- पुनर्वास और विशेष शिक्षा के पाठ्यक्रमों का मानकीकरण
- प्रशिक्षण संस्थानों को मान्यता प्रदान करना
- पाठ्यक्रमों और परीक्षाओं का विनियमन

पंजीकरण प्रणाली:

- पुनर्वास पेशेवरों का केंद्रीय पंजीकरण
- योग्य पेशेवरों को प्रमाणपत्र जारी करना
- अयोग्य व्यक्तियों द्वारा सेवा प्रदान करने पर रोक

पेशेवर श्रेणियाँ:

परिषद निम्नलिखित पेशेवरों को मान्यता देती है:

- विशेष शिक्षक (दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित, मानसिक मंदता, शारीरिक दिव्यांगता)
- स्पीच थेरेपिस्ट और ऑडियोलॉजिस्ट
- क्लिनिकल साइकोलॉजिस्ट
- फिजियोथेरेपिस्ट और ऑक्यूपेशनल थेरेपिस्ट
- प्रोस्थेटिक और ऑर्थोटिक इंजीनियर

7.3.1.2 विशेष शिक्षा में योगदान

गुणवत्ता नियंत्रण: RCI ने विशेष शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता के मानक स्थापित किए। इससे प्रशिक्षण की गुणवत्ता में सुधार हुआ और दिव्यांग बच्चों को बेहतर शिक्षा मिलने लगी।

व्यावसायिकता: इस अधिनियम ने विशेष शिक्षा को एक पेशेवर क्षेत्र के रूप में स्थापित किया। पंजीकृत पेशेवरों की आवश्यकता ने क्षेत्र में व्यावसायिकता को बढ़ावा दिया।

प्रशिक्षण संस्थानों का विस्तार: मान्यता प्रणाली के कारण देश भर में प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या में वृद्धि हुई, जिससे अधिक प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता सुनिश्चित हुई।

7.3.2 दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 (Persons with Disabilities Act, 1995)

यह अधिनियम भारत में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा हेतु बनाया गया पहला समग्र कानून है। यह अधिनियम 7 फरवरी 1996 से लागू हुआ।

भारत ने संयुक्त राष्ट्र के “Full Participation and Equality of People with Disabilities (1993)” घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद यह कानून बनाया।

7.3.2.1 दिव्यांग व्यक्तियों अधिनियम, 1995 के उद्देश्य (Objectives of the PWD Act, 1995)

1 दिव्यांगता की रोकथाम, अधिकारों की सुरक्षा, तथा चिकित्सा देखभाल, शिक्षा, प्रशिक्षण, रोजगार और पुनर्वास के लिए राज्य की जिम्मेदारी को स्पष्ट करना।

(To spell out the responsibility of the State towards prevention of disability, protection of rights, and provisions of medical care, education, training, employment and rehabilitation of persons with disabilities.)

2 बाधा-मुक्त (Barrier-Free) वातावरण का निर्माण करना, ताकि दिव्यांग व्यक्ति स्वतंत्र रूप से समाज में भाग ले सकें।

(To create a barrier-free environment.)

3 दिव्यांग व्यक्तियों के साथ किसी भी प्रकार के उत्पीड़न या शोषण की स्थिति को रोकना और उनके विरुद्ध होने वाले अन्याय का प्रतिकार करना।

(To counteract any situation of abuse and exploitation of persons with disabilities.)

4 दिव्यांग व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए विशेष प्रावधान करना।

(To make special provision for the integration of persons with disabilities into the social mainstream.)

5 दिव्यांग व्यक्तियों के समग्र विकास एवं सशक्तिकरण हेतु योजनाओं और कार्यक्रमों को बढ़ावा देना।

(To promote overall development and empowerment of persons with disabilities through suitable policies and programmes.)

6 दिव्यांग व्यक्तियों को समान अवसर, सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा प्रदान करना।

(To ensure equal opportunities, social justice, and dignity for persons with disabilities.)

7.3.3.2 अधिनियम में मान्य दिव्यांगताओं के प्रकार (Categories of Disabilities Covered) इस अधिनियम में 7 प्रकार की दिव्यांगताओं को मान्यता दी गई है:

- अंधत्व (Blindness)
- अल्प दृष्टि (Low Vision)
- कुष्ठ रोग से मुक्त व्यक्ति (Leprosy Cured)
- श्रवण बाधित (Hearing Impairment)
- चलन दिव्यांगता (Locomotor Disability)
- मानसिक मंदता (Mental Retardation)
- मानसिक रोग (Mental Illness)

7.3.3.3 प्रमुख प्रावधान (Major Provisions)

शिक्षा संबंधी प्रावधान

समावेशी शिक्षा का प्रावधान:

- दिव्यांग बच्चों को 18 वर्ष की आयु तक निःशुल्क शिक्षा का अधिकार
- समुचित सरकार द्वारा समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने की जिम्मेदारी
- सभी सरकारी स्कूलों में दिव्यांग बच्चों के प्रवेश की व्यवस्था

विशेष स्कूलों की स्थापना:

- गंभीर दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए विशेष स्कूलों की स्थापना
- गृह-आधारित शिक्षा कार्यक्रमों का प्रावधान
- व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था

छात्रवृत्ति और वित्तीय सहायता:

- दिव्यांग छात्रों के लिए छात्रवृत्ति योजना
- पुस्तकें, उपकरण और अन्य शैक्षिक सामग्री के लिए सहायता
- परिवहन भत्ता

बाधा-मुक्त वातावरण:

- स्कूलों में रैंप, लिफ्ट और सुलभ शौचालयों की व्यवस्था
- सहायक उपकरणों की उपलब्धता
- ब्रेल पुस्तकें और अन्य सुविधाएँ

आरक्षण प्रावधान

-
- शैक्षणिक संस्थानों में 3% आरक्षण
 - सरकारी नौकरियों में 3% आरक्षण
 - पदोन्नति में आरक्षण का प्रावधान

7.3.3.4 प्रभाव और उपलब्धियाँ

जागरूकता में वृद्धि: इस अधिनियम ने समाज में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाई।

शैक्षिक संस्थानों में परिवर्तन: स्कूलों और कॉलेजों में दिव्यांग छात्रों के लिए बुनियादी ढांचे में सुधार हुआ।

नीतिगत बदलाव: सरकारी नीतियों में दिव्यांग व्यक्तियों को प्राथमिकता मिलने लगी।

7.3.3 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 (National Trust Act, 1999)

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 भारत सरकार द्वारा विशेष रूप से उन व्यक्तियों के कल्याण के लिए बनाया गया था, जो ऑटिज़्म, सेरेब्रल पाल्सी, मानसिक मंदता (intellectual disability) और मल्टीपल डिसेबिलिटीज (multiple disabilities) से प्रभावित हैं। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य इन व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना, उनके अधिकारों की रक्षा करना तथा उन्हें समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित करना है।

PWD Act, 1995 के बाद भी, कुछ विशेष दिव्यांगता समूह जैसे ऑटिज़्म और सेरेब्रल पाल्सी को पर्याप्त रूप से कवर नहीं किया गया था। इस कमी को दूर करने के लिए भारत सरकार ने 30 दिसंबर 1999 को “National Trust for the Welfare of Persons with Autism, Cerebral Palsy, Mental Retardation and Multiple Disabilities Act” पारित किया।

7.3.3.1 उद्देश्य (Objectives)

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य हैं:

- ☐ स्वावलंबन और सामाजिक समावेशन (Empowerment & Inclusion): दिव्यांग व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाना और उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाना।
- ☐ संरक्षण एवं देखभाल (Guardianship & Care): जिन विशेष व्यक्तियों के माता-पिता या परिवारजन नहीं हैं, उनके लिए वैधानिक अभिभावक (legal guardian) की व्यवस्था करना।
- ☐ कल्याण सेवाएँ (Welfare Services): पुनर्वास, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना।

-
- ☐ संस्थागत सहायता (Institutional Support): NGOs और अन्य संगठनों के माध्यम से सेवाएँ प्रदान करना।
 - ☐ अधिकारों की सुरक्षा (Protection of Rights): विशेष रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के हितों की रक्षा करना।

7.3.3.2 मुख्य विशेषताएँ

अभिभावकता (Guardianship):

माता-पिता की मृत्यु या असमर्थता की स्थिति में कानूनी अभिभावकता की व्यवस्था

स्थानीय स्तरीय समिति (Local Level Committee) का गठन

संपत्ति और व्यक्तिगत देखभाल के लिए अभिभावक नियुक्ति

पंजीकृत संगठन:

स्वैच्छिक संगठनों का पंजीकरण

सेवा प्रदाताओं को मान्यता और सहायता

गुणवत्तापूर्ण सेवाओं के लिए मानक निर्धारण

वित्तीय सहायता योजनाएँ:

परिवारों को वित्तीय सहायता

संस्थाओं को अनुदान

उपकरण और सहायक सामग्री के लिए सहायता

शैक्षिक योगदान

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए कार्यक्रम:

दीनदयाल दिव्यांग पुनर्वास योजना (DDRS):

विशेष स्कूलों को सहायता

समुदाय-आधारित पुनर्वास कार्यक्रम

घर-आधारित शिक्षा सेवाएँ

सहयोग योजना:

परिवारों को दैनिक देखभाल और शिक्षा में सहायता

कौशल विकास प्रशिक्षण

सामुदायिक जीवन में भागीदारी

प्रारंभिक हस्तक्षेप केंद्र:

0-6 वर्ष के बच्चों के लिए प्रारंभिक उत्तेजना और शिक्षा

माता-पिता परामर्श और प्रशिक्षण

व्यावसायिक चिकित्सा और स्पीच थेरेपी

सामाजिक समावेश

जागरूकता अभियान:

ऑटिज्म और अन्य दिव्यांगताओं के बारे में जागरूकता

सामुदायिक स्वीकृति को बढ़ावा

कलंक और भेदभाव को कम करना

क्षमता निर्माण:

शिक्षकों और देखभालकर्ताओं का प्रशिक्षण

अभिभावकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम

पेशेवरों का कौशल उन्नयन

7.3.3.3 प्रमुख योजनाएँ (Important Schemes under the Trust)

राष्ट्रीय न्यास द्वारा समय-समय पर कई योजनाएँ चलाई जाती हैं, जैसे:

GHARAUNDA – दीर्घकालीन देखभाल गृह (Long-term care homes)

SAMARTH – डे केयर सेंटर (Day care for persons with disabilities)

DISHA – प्रारंभिक हस्तक्षेप केंद्र (Early intervention centres)

NIRAMAYA – स्वास्थ्य बीमा योजना (Health insurance scheme)

SAHYOGI – केयरगिवर प्रशिक्षण योजना (Caregiver training)

PRERNA – रोजगार एवं स्वरोजगार प्रोत्साहन (Incentives for employment)

7.3.4. शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (Right to Education Act, 2009)

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009”, भारत में बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का संवैधानिक अधिकार सुनिश्चित करता है। यह अधिनियम 1 अप्रैल 2010 से लागू हुआ। यह अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 21(क) (Article 21A) के अंतर्गत बनाया गया है, जिसमें कहा गया है कि “6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को राज्य निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा।”

7.3.4.1 विशेष शिक्षा में महत्व

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (Right to Education Act – RTE, 2009) भारत में सभी बच्चों को 6 से 14 वर्ष की आयु तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की संवैधानिक गारंटी देता है।

यह अधिनियम विशेष रूप से समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है, जहाँ सामान्य और विशेष जरूरतों वाले बच्चों (Children with Disabilities) को एक साथ समान अवसर के साथ शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है।

समावेशी शिक्षा का अधिकार:

RTE Act की धारा 3 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि दिव्यांग बच्चों को भी समान रूप से निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार है।

समावेशी शिक्षा की परिभाषा:

RTE अधिनियम ने यह सुनिश्चित किया कि दिव्यांग बच्चों को समाज की मुख्यधारा से अलग न किया जाए।

इन बच्चों को सामान्य विद्यालयों में अन्य बच्चों के साथ समान रूप से पढ़ने का अवसर दिया गया है।

7.3.4.2. प्रमुख प्रावधान

प्रवेश और भेदभाव निषेध:

किसी भी बच्चे को प्रवेश से इनकार नहीं किया जा सकता

प्रवेश के समय स्क्रीनिंग टेस्ट या साक्षात्कार प्रतिबंधित

दिव्यांगता के आधार पर भेदभाव पर रोक

शिक्षक की जिम्मेदारियाँ:

सभी बच्चों को समान महत्व देना

व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण

सकारात्मक और गैर-भेदभावपूर्ण वातावरण बनाना

विद्यालय का दायित्व:

सुलभ बुनियादी ढांचा

प्रशिक्षित शिक्षक

उचित शिक्षण सामग्री और संसाधन

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए प्रावधान

गृह-आधारित शिक्षा:

गंभीर दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए घर पर शिक्षा की व्यवस्था

विशेष शिक्षक की नियुक्ति
 नियमित निगरानी और मूल्यांकन
 सहायक उपकरण और प्रौद्योगिकी:
 श्रवण यंत्र, व्हीलचेयर आदि की व्यवस्था
 ब्रेल किट और टॉकिंग बुक्स
 सहायक प्रौद्योगिकी उपकरण
 परिवहन सुविधा:
 स्कूल तक पहुँच सुनिश्चित करना
 विशेष परिवहन व्यवस्था
 सुलभ वाहन

7.3.5. RPWD अधिनियम, 2016 (Introduction of RPWD Act 2016)

भारत सरकार द्वारा "दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016" (The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016) को दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा और उन्हें समान अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया। यह अधिनियम "दिव्यांग व्यक्तियों का समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा एवं पूर्ण सहभागिता अधिनियम, 1995 (PWD Act 1995)" का स्थान लेता है। यह नया अधिनियम 27 दिसंबर 2016 को पारित हुआ और 19 अप्रैल 2017 से पूरे भारत में लागू किया गया।

7.3.5.1 अधिनियम के उद्देश्य (Objectives of the Act)

दिव्यांग व्यक्तियों को समाज में समान अवसर और सम्मान प्रदान करना
 शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, परिवहन एवं सामाजिक जीवन में उनकी सहभागिता सुनिश्चित करना।
 भेदभाव, शोषण और उपेक्षा से सुरक्षा प्रदान करना।
 दिव्यांग व्यक्तियों के सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना।

7.3.5.2. RPWD Act 2016 के अंतर्गत मान्यता प्राप्त 21 प्रकार की दिव्यांगताएँ (21 Recognized Disabilities under RPWD Act 2016)

पूर्ण दृष्टिहीनता (Blindness)
 कम दृष्टि (Low Vision)
 कुष्ठ रोग मुक्त व्यक्ति (Leprosy Cured Person)
 श्रवण बाधित (Hearing Impairment – Deaf & Hard of Hearing)

शारीरिक दिव्यांगता (Locomotor Disability)

बौनापन (Dwarfism)

बौद्धिक दिव्यांगता (Intellectual Disability)

मानसिक रोग (Mental Illness)

स्वलीनता या आत्मकेंद्रित विकार (Autism Spectrum Disorder)

प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात (Cerebral Palsy)

मांसपेशीय दुर्बलता (Muscular Dystrophy)

दीर्घकालिक न्यूरोलॉजिकल स्थितियाँ (Chronic Neurological Conditions)

विशिष्ट अधिगम अक्षमता (Specific Learning Disability)

मल्टिपल स्क्लेरोसिस (Multiple Sclerosis)

वाणी और भाषा विकार (Speech and Language Disability)

थैलेसीमिया (Thalassemia)

हीमोफीलिया (Haemophilia)

सिकल सेल रोग (Sickle Cell Disease)

बहु-दिव्यांगता जिसमें बधिर-अंधता शामिल है (Multiple Disabilities including Deaf-Blindness)

एसिड अटैक पीड़ित (Acid Attack Victims)

पार्किंसन रोग (Parkinson's Disease)

7.3.5.3. अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ (Key Features of the RPWD Act 2016)

दिव्यांगताओं की संख्या 7 से बढ़ाकर 21 की गई।

सरकारी नौकरियों में आरक्षण 3% से बढ़ाकर 4% किया गया।

उच्च शिक्षा संस्थानों में 5% आरक्षण का प्रावधान।

समान अवसर नीति (Equal Opportunity Policy) का प्रावधान।

प्रत्येक राज्य में मुख्य आयुक्त और राज्य आयुक्त की नियुक्ति।

शिक्षा, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा और न्याय तक समान पहुँच सुनिश्चिता।

भेदभाव और उत्पीड़न से सुरक्षा के लिए दंडात्मक प्रावधान।

7.4 सारांश

भारत में विशेष शिक्षा के विकास में अनेक कानूनों ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रारंभिक काल में दिव्यांग व्यक्तियों को दया और कल्याण की दृष्टि से देखा जाता था, परंतु भारतीय संविधान और विशेष अधिनियमों के माध्यम से यह दृष्टिकोण अधिकार-आधारित (Rights-Based) बन गया। विशेष शिक्षा के सशक्त विकास के लिए कई कानूनी पहलें की गईं। पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 का उद्देश्य विशेष शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत पेशेवरों को प्रशिक्षित करना, उनके पंजीकरण और प्रशिक्षण संस्थानों की मान्यता सुनिश्चित करना तथा पाठ्यक्रमों का मानकीकरण करना था, जिससे विशेष शिक्षा की गुणवत्ता और पेशेवर दक्षता को बल मिला। इसके बाद दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 भारत का पहला व्यापक कानून था, जिसने दिव्यांगों को समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा और पूर्ण सहभागिता का अधिकार दिया। इसमें 3% आरक्षण, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा के अधिकारों का प्रावधान किया गया, जिससे शिक्षा नीति में सुधार हुआ। राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 ने गंभीर दिव्यांगता जैसे ऑटिज्म, सेरेब्रल पाल्सी, मानसिक मंदता और बहु-दिव्यांगता से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए अभिभावकता, सामुदायिक जीवन और पुनर्वास की व्यवस्था सुनिश्चित की, जिससे ऐसे व्यक्तियों की दीर्घकालिक सुरक्षा और आत्मनिर्भरता को बल मिला। शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 ने अनुच्छेद 21A के अंतर्गत 6 से 14 वर्ष के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार प्रदान किया तथा दिव्यांग बच्चों को समावेशी शिक्षा, समान अवसर, और उचित सुविधाएँ देने का प्रावधान किया। अंततः RPWD अधिनियम, 2016 ने 1995 के अधिनियम को प्रतिस्थापित करते हुए दिव्यांगताओं की संख्या 7 से बढ़ाकर 21 की, और शिक्षा, रोजगार तथा राजनीतिक भागीदारी में समान अवसरों की गारंटी दी। इसने भेदभाव निषेध और सुलभता के सिद्धांतों को लागू कर दिव्यांग बच्चों को समावेशी व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की दिशा में ठोस कदम उठाया। इस प्रकार, इन सभी अधिनियमों ने मिलकर भारत में विशेष शिक्षा को कल्याण-आधारित दृष्टिकोण से अधिकार-आधारित दृष्टिकोण में परिवर्तित कर दिया तथा दिव्यांग व्यक्तियों को शिक्षा, समानता और सशक्तिकरण का अधिकार प्रदान किया।

7.5 शब्दावली

- पुनर्वास (Rehabilitation)-दिव्यांग व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाने की प्रक्रिया
- समावेशन (Inclusion)-सभी बच्चों को सामान्य विद्यालयों में समान अवसर देना
- न्यास (Trust)- सरकारी संस्था जो विशेष उद्देश्यों के लिए बनाई जाती है
- अधिनियम (Act)- संसद द्वारा पारित विधिक प्रावधान

-
- सशक्तिकरण (Empowerment)- व्यक्ति को अपने अधिकारों के प्रयोग के योग्य बनाना
-

7.6 सन्दर्भग्रन्थ

1. The Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act, 1995, Ministry of Social Justice and Empowerment, Government of India.
2. National Sample Survey Organisation, Survey of Disabled Person in India, 1991
3. पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 – भारत सरकार, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय
4. दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 – भारत सरकार राजपत्र
5. राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 – The Gazette of India
6. शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 – शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

7.7 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारतीय संविधान एवं कानूनों के माध्यम से विशेष शिक्षा के विकास की व्याख्या कीजिए।
2. पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992 की प्रमुख विशेषताएँ एवं इसके शिक्षा क्षेत्र में योगदान पर चर्चा कीजिए।
3. दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 और RPWD अधिनियम, 2016 में अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 के उद्देश्यों और विशेष प्रावधानों की विवेचना कीजिए।
5. शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 ने विशेष बच्चों के लिए कौन से अवसर प्रदान किए?
6. विशेष शिक्षा के विकास में भारतीय कानूनों का समग्र योगदान स्पष्ट कीजिए।
7. समावेशी शिक्षा के सन्दर्भ में RPWD अधिनियम, 2016 की प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिए।

इकाई-8

विभिन्न राष्ट्रीय आयोगों और शिक्षा नीतियों की समीक्षा

- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 उद्देश्य
- 8.3 विभिन्न राष्ट्रीय आयोगों, शिक्षा आयोगों की समीक्षा (एनईपी 1986, एनईपीई1992, एनईपी 2020)
 - 8.3.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई), 1986
 - 8.3.2 पीओए 1992
 - 8.3.3 एनईपी 2020
 - 8.3.4 राष्ट्रीय शैक्षिक नियामक प्राधिकरण (NERA)
 - 8.3.5 दिव्यांग व्यक्तियों से संबंधित राष्ट्रीय रणनीतियों की समीक्षा (2006)
 - 8.3.6 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय (2022) नीति के मसौदे पर दृष्टिकोण का अवलोकन
- 8.4 दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम की समीक्षा
 - 8.4.1 माध्यमिक स्तर पर विकलांगों के लिए समावेशी शिक्षा (आईईडीएसएस)
 - 8.4.2 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी)
 - 8.4.3 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए)
 - 8.4.4 समग्र शिक्षा अभियान (एसएसए)
 - 8.4.5 राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
- 8.5 सारांश
- 8.6 अभ्यास प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

भारत में शिक्षा पर राष्ट्रीय आयोगों और नीतियों के अवलोकन में राष्ट्र की शैक्षिक उन्नति पर उनके महत्वपूर्ण प्रभाव को स्वीकार किया जाना चाहिए। विभिन्न समयों पर गठित इन नीतियों और आयोगों ने शिक्षा के विभिन्न पहलुओं, जैसे पहुँच और समानता, पाठ्यक्रम नवाचार, और शिक्षक तैयारी, से निपटने का प्रयास किया है। शिक्षा हमेशा से ही राष्ट्रों की उन्नति और सामाजिक सुधार का आधार रही है। वर्षों से, भारतीय शिक्षा प्रणाली के मूल्यांकन, सुधार और मार्गदर्शन के लिए कई राष्ट्रीय आयोग और नीतिगत ढाँचे बनाए गए हैं। ये पहल समुदाय की बदलती सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक

और तकनीकी माँगों के अनुरूप अपने शैक्षिक उद्देश्यों को संशोधित करने के प्रति राष्ट्र के समर्पण को दर्शाती हैं।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- विभिन्न राष्ट्रीय आयोगों और शैक्षिक नीतियों के माध्यम से भारत में शिक्षा के ऐतिहासिक विकास को समझना।
- नीतियों और आयोगों में प्रचलित साझा विषयों और समग्र लक्ष्यों की पहचान करना (जैसे, समानता, गुणवत्ता, पहुंच, राष्ट्रीय एकीकरण)।
- शिक्षा सुधारों के विकास का परीक्षण कीजिए क्योंकि वे बदलती राष्ट्रीय माँगों और विश्वव्यापी मुद्दों के अनुरूप ढलना।
- भारत में शिक्षा के संगठन, सार और कार्यान्वयन पर इन नीतियों के प्रभाव का आकलन करना।
- राष्ट्र निर्माण, सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक प्रगति पर शिक्षा के प्रभाव की समझ को बढ़ावा देना।
- एक निष्पक्ष और लोकतांत्रिक समाज के निर्माण में समावेशी और समतामूलक शिक्षा के महत्व पर विचार करना।
- भारत में शिक्षा पर राष्ट्रीय आयोगों और नीतियों की समीक्षा करते हुए, छात्रों को प्रमुख उद्देश्यों पर ध्यान केंद्रित करना, जैसे कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की स्थापना, पहुंच और गुणवत्ता में सुधार, समानता को बढ़ावा देना और शिक्षा को राष्ट्रीय लक्ष्यों के साथ संरेखित करना।
- इसमें पूर्व-प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक विभिन्न शैक्षिक चरणों में रूपरेखा और पाठ्यक्रम को एकीकृत करना।
- यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक बच्चे को, चाहे उनकी पृष्ठभूमि कुछ भी हो, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर मिले।
- समग्र शिक्षण अनुभव को बेहतर बनाने के लिए शिक्षक प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम विकास और शैक्षणिक दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करना।

8.3 विभिन्न राष्ट्रीय आयोगों, शिक्षा नीतियों की समीक्षा (एनईपी 1986, पीओए 1992, एनईपी 2020)

8.3.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई), 1986

भारतीय संसद द्वारा पारित, 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) का उद्देश्य देश भर में असमानताओं को दूर करना और शिक्षा के अवसरों को समान बनाना था। इसमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य हाशिए पर पड़े समूहों पर विशेष ध्यान दिया गया था, जिसका उद्देश्य शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन के उत्प्रेरक के रूप में स्थापित करना था। नीति में एक समान ढाँचे (10+2+3) वाली राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली और अनुकूलनीय तत्वों वाले एक साझा मुख्य पाठ्यक्रम का भी सुझाव दिया गया था।

सामान्य उद्देश्य

- समाज के हर वर्ग के लिए शिक्षा में निष्पक्षता और सुलभता सुनिश्चित कर।
- असमानताओं को समाप्त करना और समान शिक्षा के अवसर प्रदान करना।
- महिलाओं, हाशिए पर पड़े समुदायों, अल्पसंख्यकों और दिव्यांग लोगों के लिए शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालें।
- शिक्षा प्रणाली के ढाँचे और क्षमता को बढ़ाएँ।

प्रमुख विशेषताएँ

असमानताओं का उन्मूलन और संभावनाओं का संतुलन:

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 ने ऐतिहासिक और सामाजिक असमानताओं से निपटने की आवश्यकता को स्वीकार किया, जो विशिष्ट समूहों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच में बाधा डालती थीं।
- वंचित आबादी पर ध्यान केंद्रित करना:

महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और समाज में शैक्षिक रूप से वंचित अन्य समूहों पर विशेष ध्यान दिया गया।

- सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में शिक्षा:

इस पहल का उद्देश्य महिलाओं को सशक्त बनाने, विकलांगों को समाज में शामिल करने और हाशिए पर पड़े समूहों को ऊपर उठाने के लिए शिक्षा का लाभ उठाना था।

- राष्ट्रीय शैक्षिक ढाँचा:

इसने एक समान संरचना (10+2+3), एक राष्ट्रीय कोर पाठ्यक्रम और स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनुकूलनीय तत्वों वाले एक मानकीकृत ढाँचे का सुझाव दिया।

- प्रारंभिक बचपन देखभाल और शिक्षा:

नीति में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया तथा इसे एकीकृत बाल विकास सेवाओं और बालवाड़ियों जैसी पहलों के साथ शामिल किया गया।

- शिक्षक शिक्षा को सुदृढ़ बनाना:

नीति में बेहतर शिक्षक प्रशिक्षण तथा जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डीआईईटी) जैसी संस्थाओं की स्थापना की आवश्यकता पर बल दिया गया।

विशिष्ट प्रावधान:

- सामान्य कोर पाठ्यक्रम

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचे में एक मुख्य पाठ्यक्रम शामिल था जिसमें भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास, संवैधानिक कर्तव्यों और राष्ट्रीय पहचान के विकास के लिए महत्वपूर्ण घटकों जैसे विषयों को शामिल किया गया था।

- ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड

इस पहल का उद्देश्य प्राथमिक विद्यालयों को महत्वपूर्ण उपकरण और सुविधाएं प्रदान करना, शिक्षक शिक्षा को बढ़ावा देना और शैक्षिक संसाधनों का वितरण करना था।

- नवोदय विद्यालय

इन स्कूलों की स्थापना प्रतिभाशाली छात्रों, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों को उच्च-गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करने और सामाजिक एकीकरण को बढ़ाने के लिए की गई थी।

- वयस्क एवं सतत शिक्षा

एनपीई 1986 ने संगठित पहलों की एक श्रृंखला के माध्यम से वयस्क शिक्षा को बढ़ाने का प्रयास किया।

- विकलांगों के लिए शिक्षा

इस नीति का उद्देश्य शारीरिक और मानसिक रूप से दिव्यांग व्यक्तियों को मुख्यधारा की शिक्षा प्रणाली में शामिल करना और उन्हें आवश्यक सहायता प्रदान करना था।

• एनपीई 1986 एक व्यापक दस्तावेज था जिसे असमानताओं से निपटने, गुणवत्ता बढ़ाने और सभी के लिए शिक्षा सुलभ बनाने के लिए भारतीय शिक्षा प्रणाली में क्रांति लाने के लिए तैयार किया गया था।

8.3.2 पीओए 1992(POA) - 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1992 में पी.वी. नरसिम्हा द्वारा संशोधित किया गया था। राव प्रशासन 2005 में, पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने एक नीति लागू की, जो उनके संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) प्रशासन के "न्यूनतम साझा कार्यक्रम" पर आधारित थी। राष्ट्रीयराष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई), 1986 के एक भाग के रूप में, 1992 में एक एकीकृत प्रवेश परीक्षा के कार्यान्वयन की परिकल्पना की गई थी। देश भर में व्यावसायिक और तकनीकी पाठ्यक्रमों में नामांकन के लिए इंजीनियरिंग और वास्तुकला/योजना कार्यक्रमों में प्रवेश पाने के लिए, भारत सरकार ने 18 अक्टूबर 2001 के एक प्रस्ताव के माध्यम से, तीन परीक्षा संरचना (राष्ट्रीय मानक पर जेईई और एआईईईई) और राज्य स्तरीय इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षा (एसएलईईई) राज्य स्तरीय संस्थानों के लिए - नामांकन के विकल्प के साथ एआईईईई की स्थापना की है। यह इन कार्यक्रमों में अलग-अलग प्रवेश मानदंडों को संबोधित करता है और पेशेवर मानकों को बनाए रखने में सहायता करता है। यह ओवरलैप की समस्याओं का भी समाधान करता है और विभिन्न प्रवेश परीक्षाओं के परिणामस्वरूप छात्रों और उनके परिवारों पर पड़ने वाले शारीरिक, मानसिक और वित्तीय तनाव को कम करता है। पीओए अधिनियम 1992", कार्ययोजना (पीओए) 1992 से संबंधित है, जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 के क्रियान्वयन का विवरण देने वाला एक दस्तावेज है। इसने भारत में शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया, जैसे कि प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना, महिला शिक्षा को बढ़ावा देना और सभी स्तरों पर शिक्षा की गुणवत्ता को ऊपर उठाना।

सामान्य उद्देश्य:

- प्रारंभिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण:

14 वर्ष की आयु तक प्रत्येक बच्चे के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की गारंटी।

- शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाना:

बेहतर बुनियादी ढांचे, संवर्धित संसाधनों और शिक्षक विकास पर जोर देना।

- सामाजिक और क्षेत्रीय असमानताओं से निपटना:

यह सुनिश्चित करना कि सभी को समान शिक्षा के अवसर मिलें, चाहे उनकी सामाजिक स्थिति या निवास स्थान कुछ भी हो।

प्रमुख विशेषताएँ:

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, कार्य योजना (POA) ने कार्यक्रमों और उनके तत्वों को बेहतर बनाने की आवश्यकता पर बल दिया। इसने ECCE पहलों के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों के बीच सहयोगात्मक संचालन का संकेत दिया। इस कार्य योजना में प्रारंभिक बाल्यावस्था और देखभाल पर विशेष बल दिया गया। इसने प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के लिए विशेष प्रशिक्षण (प्रशिक्षण केंद्रों के माध्यम से) का सुझाव दिया।

• प्रारंभिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण – यूईई

पीओए का एक अन्य लक्ष्य यूईई के उद्देश्यों को पूरा करना था। इसने पूर्णकालिक स्कूलों में दाखिला लेने में असमर्थ शिक्षार्थियों के लिए 'अनौपचारिक शिक्षा' जैसे कई नवाचारों और संशोधित कार्यक्रमों का प्रस्ताव रखा। इसके अलावा, इसने 10 राज्यों (शैक्षणिक रूप से वंचित) पर भी ध्यान केंद्रित किया, जहाँ साझा दायित्व केंद्र और राज्य सरकारों के बीच 50:50 के अनुपात में विभाजित किया गया था।

• माध्यमिक शिक्षा

माध्यमिक शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। भारत की अन्य शैक्षिक नीतियों की तरह, राष्ट्रीय शिक्षा नीति का भी उद्देश्य पिछड़े वर्गों की बेहतर भागीदारी सुनिश्चित करना था। फिर भी, 1992 के कार्य योजना (POA) ने माध्यमिक शिक्षा बोर्डों की स्वतंत्रता को बढ़ाया और उनका पुनर्गठन किया।

इस कार्य योजना में छात्रों में डिजिटल साक्षरता और तकनीकी कौशल को बढ़ाने के लिए एक नवीन अवधारणा प्रस्तावित की गई थी। यह दृष्टिकोण भविष्य के लिए लाभदायक था, क्योंकि आज हम व्यापक ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल शिक्षण के अवसर प्रदान करते हैं।

नवोदय विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार

• 1992 के कार्य योजना (POA) में पूरे देश में नवोदय विद्यालयों की स्थापना की योजना बनाई गई थी। इन संस्थानों को उनकी आर्थिक स्थिति की परवाह किए बिना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले छात्रों को सहायता प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया था।

• यह योजना आम जनता के लिए शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने में बहुत मददगार साबित हुई। चूँकि लगभग 40.7% छात्र पहले से ही गरीबी में जी रहे थे।

महिला शिक्षा

• इस कार्ययोजना के अनुसार, महिलाओं की शिक्षा पर भी मुख्य ध्यान दिया गया। इसमें उनके अधिकारों के बारे में कानूनी जागरूकता बढ़ाने पर केंद्रित अतिरिक्त विकास कार्यक्रमों की सिफारिश की गई।

• इसमें लैंगिक असमानता जैसी समस्याओं के समाधान के लिए लिंग और गरीबी जागरूकता पर केंद्रित कार्यक्रमों को लागू करने का प्रस्ताव रखा गया। इसके अलावा, सभी शिक्षकों को महिला सशक्तिकरण के पैरोकार के रूप में कार्य करने हेतु नवीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों से गुजरना था। संगठनों और महिला संस्थानों के माध्यम से, इसमें नए महिला अध्ययन केंद्र स्थापित करने की भी योजना थी।

प्रौढ़ शिक्षा और सूक्ष्म-योजना

अनौपचारिक शिक्षा पहल के अंतर्गत, हितधारकों ने वयस्कों के लिए शैक्षिक संभावनाओं को बढ़ाने का प्रस्ताव रखा। अलग-थलग, ग्रामीण और शहरी समुदायों में रहने वाली छात्राओं के लिए ऑनलाइन शिक्षा और मुक्त विद्यालय प्रणाली जैसी रचनात्मक पहल प्रस्तावित की गईं। आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाली छात्राओं के लिए शैक्षिक सूक्ष्म-योजना का प्रस्ताव रखा गया। इसके अतिरिक्त, निरक्षर वयस्क महिलाओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया गया। सूक्ष्म-योजना के ढांचे के अंतर्गत यह एक उल्लेखनीय कदम था।

कौशल विकास और रोजगारपरकता

साक्षरता के बाद और सतत शिक्षा से जुड़ी पहलों के लिए, कार्य योजना ने नव-साक्षरों में उद्यमशीलता और प्रबंधकीय क्षमताओं को बढ़ावा देने की सिफारिश की। अनौपचारिक क्षेत्र में श्रमिक विद्यापीठों और संगठनों की स्थापना विशेषज्ञों द्वारा सुझाई गई एक महत्वपूर्ण पहल थी। इससे पहले, नीतियों में संस्थानों के भीतर व्यावसायिक प्रशिक्षण जैसे क्षेत्रों पर ध्यान दिया जाता था। हालाँकि, कार्य योजना ने नव-साक्षर व्यक्तियों की रोजगार क्षमता और उत्पादकता बढ़ाने के लिए कौशल को 'संचार', 'जीवित रहने' और 'कार्यात्मक क्षमताओं' में वर्गीकृत किया।

प्रवेश परीक्षा और परीक्षा/मूल्यांकन सुधार

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में सुझाए गए मूल्यांकन सुधारों को सुगम बनाने के लिए, कार्य योजना (POA) ने प्रारंभिक स्तर के लिए एक सतत व्यापक मूल्यांकन (CCE) ढाँचा प्रस्तावित किया है। इसके लिए, शिक्षा विभाग एक अंतर-संस्थागत समिति का गठन करना चाहता है जिसमें NCERT, UGC, AICTE और राज्य-स्तरीय संगठनों के प्रतिनिधि शामिल होंगे। राज्य की संबंधित एजेंसी CCE के लिए एक योजना विकसित करनागी जिसमें छात्र के विकास के संज्ञानात्मक, मनो-गतिशील और भावनात्मक पहलुओं को शामिल किया जाएगा। यह विस्तृत प्रपत्र मूल्यांकन के दस्तावेजीकरण के रूप में कार्य करनागा।

• इस कार्य योजना में उच्च शिक्षा में प्रवेश परीक्षाओं को समर्थन और बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकार और UGC के बीच साझेदारी का प्रस्ताव रखा गया है।

दिव्यांग छात्रों के लिए शिक्षा

-
- समिति ने 12.59 मिलियन दिव्यांग बच्चों के लिए कई प्रमुख उपाय प्रस्तावित किए। विशेष आवश्यकता वाले छात्रों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, शिक्षक प्रशिक्षण को समावेशी कक्षाओं के अनुसार समायोजित किया जाना था। इसी प्रकार, अनौपचारिक और वयस्क शिक्षा कार्यक्रमों को भी पुनर्गठित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया।
 - कार्यकारी समिति ने एक ही दिव्यांगता में प्रशिक्षित शिक्षकों के लिए कुछ विशिष्ट प्रशिक्षण केंद्रों की सिफारिश की। इसने विभिन्न श्रेणियों में विशेष शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए शिक्षकों की इस कमी के लंबित मामलों को दूर करने पर भी जोर दिया। विशेषज्ञों ने विशेष आवश्यकता वाले छात्रों के लिए एनसीईआरटी द्वारा बाल-केंद्रित शिक्षा के लिए दिशानिर्देशों को समन्वित करने की अवधारणा का भी प्रस्ताव रखा।
 - 1992 की कार्ययोजना भारत की शिक्षा प्रणाली को विनियमित करने के चुनौतीपूर्ण लक्ष्य की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम थी। भारत की सभी पिछली शिक्षा नीतियों में, इस नीति ने वैज्ञानिक ज्ञान को बढ़ावा देने पर सबसे अधिक जोर दिया और 21वीं सदी में स्कूली शिक्षा की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान लगाया। इसने हमारी शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण सुधार की मांग की। और उन कारकों पर ध्यान केंद्रित किया जो हमारे उभरते राष्ट्र की प्रगति को प्रभावित कर सकते हैं।

8.3.3 एनईपी 2020 (NEP 2020)

- शिक्षा संपूर्ण मानवीय क्षमता को साकार करने, एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिए आवश्यक है।
- समुदाय और देश की उन्नति को बढ़ावा देना। उच्च-गुणवत्ता वाली शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करना
- आर्थिक विकास, सामाजिक समानता और निष्पक्षता, तकनीकी प्रगति, राष्ट्र में एकता और सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के संबंध में वैश्विक क्षेत्र में भारत के निरंतर उत्थान और अग्रणी स्थान के लिए आवश्यक है।
- व्यापक उच्च-गुणवत्ता वाली शिक्षा हमारे राष्ट्र की प्रचुर प्रतिभाओं और संसाधनों को व्यक्ति, समुदाय, राष्ट्र और विश्व के लाभ के लिए आगे बढ़ाने और अनुकूलित करने का सबसे प्रभावी तरीका है। आने वाले दशक में भारत में वैश्विक स्तर पर युवाओं की सबसे बड़ी आबादी होगी, और उन्हें उत्कृष्ट शैक्षिक अवसर प्रदान करने की हमारी क्षमता हमारे राष्ट्र के भविष्य को आकार देगी।
- एनईपी 2020 (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020) भारत सरकार द्वारा देश में शिक्षा की प्रगति को गति देने के लिए शुरू की गई एक व्यापक रूपरेखा है। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 29 जुलाई 2020 को इसे मंजूरी दी, जो 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1992 में संशोधित) का स्थान लेगी।

एनईपी 2020 की मुख्य विशेषताएं

- स्कूली शिक्षा
- संरचनात्मक परिवर्तन: 5+3+3+4 मॉडल
- पुरानी 10+2 प्रणाली का स्थान लेता है।

नई संरचना:

- आधारभूत चरण: 5 वर्ष (पूर्व-प्राथमिक के 3 वर्ष + कक्षा 1-2)
- प्रारंभिक चरण: 3 वर्ष (कक्षा 3-5)
- मध्य चरण: 3 वर्ष (कक्षा 6-8)
- माध्यमिक चरण: 4 वर्ष (कक्षा 9-12)

3-6 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए प्रारंभिक बचपन में देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई)

- 3-6 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए ईसीसीई तक समावेशी पहुँचा।
- आंगनवाड़ियों और प्रीस्कूलों में संशोधित राष्ट्रीय पाठ्यक्रम अपनाया जाएगा।
- बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मकता पर जोर दें:
कक्षा 3 के अंत तक बुनियादी पठन और गणित कौशल सुनिश्चित करने का लक्ष्य
- बहुभाषावाद:
कम से कम कक्षा 5 तक (आदर्शतः कक्षा 8 तक) मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा को शिक्षण भाषा के रूप में अपनाएँ।
- कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं:
छात्रों के पास विभिन्न धाराओं (कला, विज्ञान, वाणिज्य) से पाठ्यक्रम चुनने का विकल्प है।
- मूल्यांकन सुधार:
परीक्षाओं में रटने के बजाय मूलभूत अवधारणाओं का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

उच्च शिक्षा

- बहुआयामी संगठन:
- 3,000 से अधिक छात्रों वाले बड़े बहु-विषयक विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रयास।
- चार वर्षीय स्नातक कार्यक्रम:
- विभिन्न निकास विकल्पों की विशेषता

-
- एक वर्ष के बाद प्रमाणपत्र
 - दो वर्षों के बाद प्रमाणपत्र
 - तीन वर्षों में प्राप्त उपाधि
 - चार वर्षों के बाद शोध उपाधि

8.3.4 राष्ट्रीय शैक्षिक नियामक प्राधिकरण (NERA):

- उच्चतर माध्यमिक शिक्षा (कानून और चिकित्सा को छोड़कर) के लिए एकमात्र प्राधिकरण। कॉलेजों की स्वतंत्रता:
- कॉलेजों को शैक्षणिक, प्रशासनिक और वित्तीय मामलों में स्वायत्तता होनी चाहिए।
- क्रेडिट स्थानांतरण और शैक्षणिक क्रेडिट बैंक: छात्र आसानी से क्रेडिट स्थानांतरित कर सकते हैं और संस्थान बदल सकते हैं।
- शिक्षक तैयारी एवं निर्देश
- 2030 तक, शिक्षण के लिए बुनियादी आवश्यकता 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. होगी।
- निरंतर व्यावसायिक विकास और प्रदर्शन मूल्यांकन
- शैक्षिक प्रौद्योगिकी
- राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच (NETF) की स्थापना
- शिक्षण, शिक्षा और मूल्यांकन में डिजिटल संसाधनों का समावेश

निष्कर्ष

- व्यापक और अंतःविषयक रणनीति: एनईपी 2020 पाठ्यक्रम में व्यावसायिक, कलात्मक और शारीरिक शिक्षा को शामिल करते हुए, याद करने के बजाय समग्र विकास पर जोर देती है। इसमें बहु-विषयक संस्थानों और अनुकूलनीय स्नातक कार्यक्रमों की वकालत शामिल है।
- यह नीति प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मकता कौशल की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालती है, और आगे की शिक्षा के लिए उनके महत्व को स्वीकार करती है।
- एनईपी 2020 सीखने के अनुभवों को बेहतर बनाने और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच बढ़ाने के लिए शिक्षा में प्रौद्योगिकी को शामिल करने को बढ़ावा देती है।

8.3.5 दिव्यांग व्यक्तियों से संबंधित राष्ट्रीय रणनीतियों की समीक्षा (2006)

भारत सरकार ने फरवरी 2006 में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति की स्थापना की, जिसका उद्देश्य दिव्यांग व्यक्तियों के शारीरिक, शैक्षिक और आर्थिक पुनर्वास को बढ़ावा देना है। इसके अलावा, यह नीति दिव्यांग महिलाओं और बच्चों के पुनर्वास, बाधा-मुक्त वातावरण के निर्माण, सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने, अनुसंधान करने आदि पर जोर देती है।

नीति का केंद्रीय उद्देश्य

•दिव्यांगता की रोकथाम

यह देखते हुए कि दिव्यांगताओं को अक्सर रोका जा सकता है, नीति दिव्यांगताओं की रोकथाम पर जोर देती है। यह दिव्यांगता को जन्म देने वाली बीमारियों की रोकथाम के लिए एक कार्यक्रम की माँग करती है और गर्भावस्था के दौरान और उसके बाद दिव्यांगताओं के निवारक उपायों के बारे में जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर देती है, साथ ही उनकी पहुँच को तीव्र और व्यापक बनाने का प्रयास भी करती है।

पुनर्वास के उपाय

- पुनर्वास कार्यों को तीन अलग-अलग समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है:
- शारीरिक पुनर्वास में प्रारंभिक पहचान और हस्तक्षेप, परामर्श और चिकित्सा उपचार के साथ-साथ सहायक उपकरणों की आपूर्ति भी शामिल है। इसमें पुनर्वास विशेषज्ञों की उन्नति भी शामिल होगी।
- पुनर्वास के लिए शिक्षा जिसमें नौकरी प्रशिक्षण और समुदाय में सम्मानजनक जीवनयापन के लिए आर्थिक सुधार शामिल है

दिव्यांग महिलाएं

दिव्यांग महिलाओं को शोषण और दुर्व्यवहार से सुरक्षा की आवश्यकता है। दिव्यांग महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, शिक्षा, रोजगार के अवसर और अतिरिक्त पुनर्वास सेवाओं के लिए विशेष कार्यक्रम बनाए जाएँगे। विशेष शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण की सुविधाएँ स्थापित की जाएँगी। उपेक्षित दिव्यांग महिलाओं/लड़कियों के पुनर्वास के लिए पहल शुरू की जाएँगी, उन्हें परिवारों में शामिल करने, आवास सहायता प्रदान करने और उन्हें लाभदायक रोजगार कौशल के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। सरकार उन पहलों को बढ़ावा देगी जहाँ कुल लाभार्थियों में से कम से कम पच्चीस प्रतिशत दिव्यांग महिलाएँ हों।

दिव्यांग बच्चे

-
- दिव्यांग बच्चे सबसे ज्यादा जोखिम वाली आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं और उन्हें विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है।
 - दिव्यांग बच्चों के लिए देखभाल, संरक्षण और सुरक्षा की गारंटी।
 - बच्चों को अपने अधिकारों का प्रयोग करने, समान अवसरों तक पहुँचने और विभिन्न नियमों के अनुसार पूर्ण रूप से भाग लेने का अवसर प्रदान करने वाले वातावरण को बढ़ावा देकर सम्मान और समानता के साथ विकास के अधिकार की गारंटी।
 - दिव्यांग बच्चों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और विशेष पुनर्वास सेवाओं तक पहुँच और समावेशन की गारंटी।
 - गंभीर रूप से दिव्यांग बच्चों की विशेष आवश्यकताओं, देखभाल और सुरक्षा को मान्यता देते हुए विकास के अधिकार की गारंटी।

बाधा - मुक्त वातावरण

- एक सुलभ वातावरण, दिव्यांग व्यक्तियों को निर्मित परिवेश में उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग करते हुए सुरक्षित और स्वतंत्र रूप से आवागमन करने की अनुमति देता है। बाधा-मुक्त डिज़ाइन का उद्देश्य एक ऐसा वातावरण बनाना है जो व्यक्तियों को स्वतंत्र रूप से कार्य करने में सक्षम बनाए, जिससे वे बिना किसी सहायता के दैनिक गतिविधियों में संलग्न हो सकें। इस प्रकार, जहाँ तक संभव हो, सार्वजनिक उपयोग के लिए बनाई गई इमारतों, स्थानों और परिवहन प्रणालियों को बिना किसी बाधा के सुलभ बनाया जाएगा।

दिव्यांगता प्रमाण पत्र जारी करना

- भारत सरकार ने दिव्यांगता मूल्यांकन और प्रमाणन प्रक्रिया के लिए नियमों की घोषणा की है। सरकार यह सुनिश्चित करनागी कि दिव्यांग व्यक्तियों को सरल, पारदर्शी और उपयोगकर्ता-अनुकूल प्रक्रियाओं को लागू करके शीघ्र और बिना किसी चुनौती के उनके दिव्यांगता प्रमाणपत्र प्राप्त हों।

सामाजिक सुरक्षा

दिव्यांग व्यक्तियों, उनके परिवारों और देखभाल करने वालों को दैनिक जीवन की गतिविधियों, स्वास्थ्य सेवा, परिवहन, सहायक उपकरणों आदि के लिए अतिरिक्त लागतों का सामना करना पड़ता है। इसलिए, उन्हें विभिन्न तरीकों से सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना आवश्यक है। केंद्र सरकार दिव्यांग व्यक्तियों और उनके देखभाल करने वालों को कर लाभ प्रदान करती रही है। राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश प्रशासन बेरोजगारी लाभ या दिव्यांगता पेंशन प्रदान करते रहे हैं। राज्य सरकारों से दिव्यांग व्यक्तियों के लिए एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा नीति बनाने का आग्रह किया जाएगा।

गैर सरकारी संगठन (एनजीओ) को बढ़ावा देना राष्ट्रीय नीति, एनजीओ क्षेत्र को किफायती सेवाएँ प्रदान करने हेतु एक महत्वपूर्ण संस्थागत ढाँचे के रूप में स्वीकार करती है जो सरकार के प्रयासों का समर्थन करती हैं। गैर-लाभकारी क्षेत्र गतिशील और विस्तारित है। दिव्यांग व्यक्तियों को सेवाएँ प्रदान करने में यह महत्वपूर्ण रहा है। कई एनजीओ मानव संसाधन विकास और अनुसंधान पहलों में भी संलग्न हैं। सरकार उन्हें नीतियों के निर्माण, योजना, क्रियान्वयन, निगरानी में शामिल कर रही है और दिव्यांग व्यक्तियों से संबंधित कई मामलों पर उनके सुझाव मांग रही है। नियोजन, नीति विकास और क्रियान्वयन से संबंधित दिव्यांगता से संबंधित विभिन्न विषयों पर एनजीओ के साथ सहयोग में सुधार किया जाएगा। एनजीओ के बीच सहयोग, सूचना साझाकरण और सर्वोत्तम प्रथाओं के आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया जाएगा और उनका समर्थन किया जाएगा। वंचित और दुर्गम क्षेत्रों में कार्यरत एनजीओ को समर्थन और प्राथमिकता देने के लिए उपाय लागू किए जाएँगे। प्रसिद्ध एनजीओ को भी इन क्षेत्रों में परियोजनाएँ शुरू करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

दिव्यांग व्यक्तियों पर नियमित जानकारी का संग्रह

दिव्यांग व्यक्तियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति से संबंधित आंकड़ों का नियमित संग्रह, संकलन और विश्लेषण आवश्यक है। 1981 से, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (NSSO) हर दस साल में दिव्यांग व्यक्तियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर आंकड़े एकत्र करता आ रहा है। जनगणना 2001 के बाद से, जनगणना ने दिव्यांग व्यक्तियों पर आंकड़े एकत्र करना शुरू कर दिया है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन को कम से कम हर पाँच साल में दिव्यांग व्यक्तियों पर आंकड़े एकत्र करने होंगे। दोनों एजेंसियों द्वारा प्रयुक्त परिभाषाओं में अंतर को संतुलित किया जाएगा।

अनुसंधान

दिव्यांग व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार हेतु, उनके सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भों, दिव्यांगता के कारणों, प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा तकनीकों, सुलभ सहायक उपकरणों के निर्माण, और दिव्यांगता से संबंधित सभी मुद्दों पर अनुसंधान के लिए सहायता प्रदान की जाएगी, जिससे उनके जीवन और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने की समाज की क्षमता में उल्लेखनीय सुधार हो सके। जहाँ भी दिव्यांग व्यक्ति अनुसंधान हस्तक्षेपों में भाग लेते हैं, वहाँ उनसे या उनके परिवार के सदस्य या देखभालकर्ता से सहमति प्राप्त करना अनिवार्य है।

खेल, मनोरंजन और सांस्कृतिक जीवन

• चिकित्सा और सामुदायिक जुड़ाव पर खेलों का प्रभाव निर्विवाद है। दिव्यांग व्यक्तियों को खेल, मनोरंजन और सांस्कृतिक स्थलों तक पहुँच का अधिकार है। सरकार उन्हें विभिन्न खेल, मनोरंजन और सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने का अवसर प्रदान करने के लिए आवश्यक उपाय लागू करना।

8.3.6 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय (2022) नीति के मसौदे पर दृष्टिकोण का अवलोकन

2022 की राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति (एनपीपीडी) एक समावेशी समाज के निर्माण के महत्व पर प्रकाश डालती है जहाँ दिव्यांगजन (पीडब्ल्यूडी) समान अवसरों के साथ सम्मानजनक जीवन जी सकें। यह संयुक्त राष्ट्र दिव्यांगजन अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरपीडी) और दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के सिद्धांतों पर आधारित है। यह नीति शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, सुगम्यता और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों पर जोर देती है और दिव्यांगजनों के अधिकारों पर आधारित दृष्टिकोण अपनाने का प्रयास करती है।

मुख्य उद्देश्य

अधिकार-आधारित दृष्टिकोण:

पिछली 2006 की नीति के विपरीत, 2022 का मसौदा दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (यूएनसीआरपीडी), इंचियोन रणनीति और भारत के आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम (2016) के अनुरूप है, जो अधिकार-आधारित, समावेशी ढाँचे पर जोर देता है।

शीघ्र हस्तक्षेप अवसंरचना

प्रत्येक जिले में क्रॉस डिसेबिलिटी अलर्नी इंटरवेंशन सेंटर (सीडीईआईसी) स्थापित करने का सुझाव दिया गया है, जिन्हें स्क्रीनिंग, निदान और पुनर्वास के लिए "वन-स्टॉप" सुविधाओं के रूप में डिज़ाइन किया गया है जो माता-पिता-केंद्रित सेवाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

उन्नत डेटा तंत्र

नीति निर्माण, आउटरीच और मूल्यांकन में सहायता के लिए सक्रिय वास्तविक समय दिव्यांगता डेटा प्रणालियों के विकास पर प्रकाश डाला गया।

लिंग और भेद्यता पर ध्यान केंद्रित

इस बात पर बल दिया गया कि दिव्यांग महिलाओं और लड़कियों को अधिक जोखिम का सामना करना पड़ता है और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने पर केंद्रित एक अनुभाग की वकालत की गई।

समावेशन और भागीदारी अधिदेश

इसका उद्देश्य दिव्यांगजनों की भागीदारी बढ़ाना, सहायक प्रौद्योगिकियों के स्थानीय उत्पादन (आत्मनिर्भर भारत) के माध्यम से उनकी स्वतंत्रता को बढ़ावा देना और नीति निर्माण में दिव्यांगजनों की आवाज को बुलंद करना है।

8.4 दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम की समीक्षा:

9.4.1 माध्यमिक स्तर पर विकलांगों के लिए समावेशी शिक्षा (आईईडीएसएस)

आईईडीएसएस (माध्यमिक स्तर पर दिव्यांगजनों के लिए समावेशी शिक्षा) एक भारतीय सरकारी कार्यक्रम है जिसे मुख्यधारा के स्कूलों में दिव्यांग बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। शैक्षणिक वर्ष 2009-10 में शुरू की गई इस पहल ने दिव्यांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (आईईडीसी) कार्यक्रम का स्थान लिया है। वर्तमान में इसे राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) में शामिल किया गया है, जिसका उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच बढ़ाना और उसकी गुणवत्ता में सुधार करना है।

उद्देश्य

- पहुँच प्रदान करना: दिव्यांग बच्चों को आठ साल की प्राथमिक शिक्षा के बाद चार साल की माध्यमिक शिक्षा (कक्षा IX-XII) में भाग लेने की अनुमति दें।
- समावेशी वातावरण: दिव्यांग छात्रों के लिए मुख्यधारा के स्कूलों में एक समावेशी और सहायक वातावरण बनाएँ।
- सहायता सेवाएँ: सफल शिक्षण सुनिश्चित करने के लिए सहायक उपकरण और सुविधाएँ जैसी आवश्यक सहायता सेवाएँ प्रदान करना।

इस कार्यक्रम का घटक

इस कार्यक्रम में दिव्यांग छात्रों की सहायता के लिए कई तत्व शामिल हैं:

- छात्रों पर केंद्रित सहायता:
- स्वास्थ्य और शैक्षणिक मूल्यांकन
- पाठ्यपुस्तकें, लेखन सामग्री और स्कूल पोशाक
- परिवहन और पाठक परमिट
- युवा महिलाओं के लिए धन
- सहायक उपकरण और उपचार सेवाएँ

-
- आवास और भोजन सेवाएँ
 - संस्थागत सहायता
 - विशेष शिक्षा प्रशिक्षकों की नियुक्ति
 - शिक्षक तैयारी और मार्गदर्शन
 - संसाधन कक्षों का निर्माण
 - सुगम बुनियादी ढाँचे की आपूर्ति

पात्रता

- अंधापन और कम दृष्टि
- श्रवण दोष
- चलन संबंधी दिव्यांगता
- मानसिक रोग और मानसिक दिव्यांगता
- ऑटिज्म और सेरेब्रल पाल्सी
- कुष्ठ रोग का उपचार
- भाषण दिव्यांगता और अधिगम दिव्यांगता

कार्यान्वयन और वित्त पोषण

कार्यान्वयन एजेंसियाँ

यह पहल राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों के स्कूल शिक्षा विभागों द्वारा संचालित की जाती है। इनमें दिव्यांग बच्चों की शिक्षा में विशेषज्ञता रखने वाले गैर-सरकारी संगठन भी शामिल हो सकते हैं।

वित्तीय सहायता

- कार्यक्रम में शामिल प्रत्येक मद के लिए केंद्र की ओर से पूर्ण सहायता प्रदान की जाती है।
- राज्य सरकारों को प्रत्येक दिव्यांग बच्चे के लिए प्रतिवर्ष ₹600 की छात्रवृत्ति सुनिश्चित करनी होगी।

लड़कियों पर विशेष ध्यान

यह कार्यक्रम दिव्यांग लड़कियों पर केंद्रित है, ताकि माध्यमिक शिक्षा में उनके नामांकन, ठहराव और सफलता में सुधार हो सके। इसमें शिक्षा प्रणाली में उनकी भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए अतिरिक्त सहायता सेवाएँ और प्रोत्साहन प्रदान करना शामिल है।

निगरानी और मूल्यांकन

सफल क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए, योजना केंद्र, राज्य, जिला और ब्लॉक स्तर पर निगरानी तंत्र स्थापित करती है। इन तंत्रों का कार्य इनपुट एकत्र करना, प्रदर्शन का आकलन करना और यह सुनिश्चित करना है कि योजना के लक्ष्य प्राप्त हों।

9.4.2 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के लिए दिशानिर्देश अप्रैल 1993 में विकसित किए गए थे; उसके बाद, डीपीईपी के विकास में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। दिसंबर 1993 में, मंत्रिमंडल ने इस पहल को अपनी संकल्पना के रूप में अनुमोदित किया: जनवरी 1994 में, संपूर्ण योजनाडीपीईपी को आयोग द्वारा केंद्र प्रायोजित योजना के रूप में अनुमोदित किया गया। जिला परियोजनाएँ सात राज्यों - असम, हरियाणा, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और केरल - के 42 जिलों में विकसित की गईं।

उद्देश्य

- प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता को अविकसित जिलों में बढ़ाना और मानकीकृत करना
- प्राथमिक शिक्षा तक पहुंच को व्यापक बनाना और उसकी गुणवत्ता को बढ़ाना, विशेष रूप से अविकसित जिलों में, वंचित और हाशिए पर पड़े समुदायों पर विशेष ध्यान देते हुए

सार्वभौमिक पहुंच

- 6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे के लिए बुनियादी शिक्षा सुनिश्चित करना।
- स्कूल छोड़ने वालों की संख्या में कमी और धारण क्षमता एवं सीखने के परिणामों में सुधार।
- जिला-स्तरीय विकेन्द्रीकृत शैक्षिक योजना।
- वंचित आबादी पर ध्यान केंद्रित करना, जिसमें शामिल हैं:
- अनुसूचित जातियाँ (SC) और अनुसूचित जनजातियाँ (ST)
- युवा महिलाएँ
- दिव्यांग बच्चे

प्रमुख घटक

- शिक्षकों की भर्ती और प्रशिक्षण
- विद्यालय सुविधाओं (संरचनाएँ, शिक्षण स्थल, शौचालय) का संवर्धन
- पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक संशोधन
- ग्राम शिक्षा समितियों (वीईसी) के माध्यम से सामुदायिक भागीदारी

समावेशी शिक्षा पहल

- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (सीडब्ल्यूएसएन) की पहचान
- शिक्षकों को समावेशी तरीकों से शिक्षित करना
- दिव्यांग बच्चों के लिए सहायक उपकरण/उपकरण उपलब्ध कराना

उपलब्धि

- पलब्धता में वृद्धि
- प्राथमिक विद्यालयों में, विशेष रूप से लड़कियों और वंचित समुदायों के लिए, नामांकन दर में वृद्धि।
- संवर्धित बुनियादी ढाँचा:

-
- हज़ारों नए कक्षाकक्ष और विद्यालय बनाए गए।
 - शिक्षक उन्नयन
 - व्यापक सेवाकालीन प्रशिक्षण पहलों ने शिक्षक कौशल में वृद्धि की।
 - विकेंद्रीकरण
 - स्थानीय संगठनों को सक्षम बनाया और सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा दिया।
 - समावेशी शिक्षा का उन्नयन
 - दिव्यांग बच्चों को नियमित शिक्षा व्यवस्था में व्यवस्थित रूप से शामिल करने की प्रारंभिक महत्वपूर्ण पहल

चुनौतियाँ और सीमाएँ

- गुणवत्ता पिछड़ी रही
- कई जिलों में शैक्षिक उपलब्धियाँ लगातार कमज़ोर रहीं।
- कार्यान्वयन में असमानता
- राज्यों और जिलों में सफलता के अलग-अलग स्तर।
- शिक्षकों की कमी।
- कई स्कूल एक ही शिक्षक के सहारे चल रहे थे।
- समावेशी शिक्षा में समस्याएँ।
- कई शिक्षकों को विशेष शिक्षा में पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं मिला।
- दिव्यांग बच्चों के लिए भौतिक बुनियादी ढाँचा अक्सर पहुँच से बाहर रहा।
- निगरानी और मूल्यांकन की कमियाँ।
- वास्तविक शिक्षण प्रगति और दिव्यांग बच्चों पर पड़ने वाले प्रभावों की निगरानी के लिए अपर्याप्त प्रणालियाँ।

प्रभाव

- डीपीईपी ने 2001 में शुरू किए गए सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) की नींव रखी, जिसने देश भर में डीपीईपी के कई घटकों का विस्तार किया।
- समावेशी और निष्पक्ष शिक्षा से संबंधित आगामी नीतियों को प्रभावित किया।
- शिक्षा में जिला-स्तरीय योजना और डेटा-आधारित दृष्टिकोण स्थापित करने में सहायता की।

निष्कर्ष

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम भारत के शैक्षिक सुधार प्रयासों में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुआ। हालाँकि इसने शैक्षिक पहुँच को प्रभावी ढंग से व्यापक बनाया और समावेशी शिक्षा पर ज़ोर दिया,

लेकिन गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और दिव्यांग बच्चों के पूर्ण समावेशन पर इसका प्रभाव प्रणालीगत और कार्यान्वयन संबंधी बाधाओं के कारण सीमित रहा।

सर्व शिक्षा अभियान(एसएसए)

सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) भारत सरकार द्वारा 2001 में एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम शुरू किया गया, जिसका लक्ष्य 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध कराना है। इसका उद्देश्य 2010 में सभी बच्चों को शिक्षा देना मुख्य रूप से शामिल करना था।

सर्व शिक्षा अभियान के प्रमुख लक्ष्य

- सार्वभौमिक शिक्षा
- 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को शिक्षा देना।
- उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा।
- शिक्षा की गुणवत्ता को बेहतर करना और अध्ययन के परिणामों को सुधारना।
- सामाजिक न्याय।
- लड़कियों और वंचित समूहों पर ध्यान केंद्रित करते हुए सामाजिक, क्षेत्रीय और लैंगिक असमानताओं को कम करना।
- समुदाय की संलग्नता।
- शिक्षा के क्षेत्र में समुदाय की सक्रिय रूप से भागीदारी को सुनिश्चित करना।
- संरचना का उत्थान।
- स्कूलों में जरूरी मूलभूत सुविधाएं (जैसे, क्लासरूम, टॉयलेट, पीने का पानी) प्रदान करना।
- शिक्षक का ज्ञान।
- शिक्षकों को ट्रेनिंग देना और शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ावा देना।
- सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत किए गए प्रयास।
- नए विद्यालय स्थापित करना।
- उन स्थानों पर जहां विद्यालय मौजूद नहीं हैं, नए विद्यालय स्थापित करना।
- वर्तमान विद्यालयों का सशक्तिकरण।
- स्कूलों में अतिरिक्त कक्ष, शौचालय, (potable) पानी की सुविधा आदि प्रदान करना।
- शिक्षण संसाधन और वर्दी
- बच्चों को निःशुल्क शैक्षणिक सामग्री और यूनिफॉर्म देना।
- शिक्षक प्रशिक्षण
- शिक्षकों का प्रशिक्षण करना और उनकी क्षमताओं को विकसित करना।
- समुदाय का सहयोग

-
- समुदाय को शिक्षा के महत्व के प्रति सजग करना और उन्हें शिक्षा प्रक्रिया में भागीदार बनाना

9.4.3 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए)

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) भारत सरकार द्वारा मार्च 2009 में शुरू किया गया एक केंद्र-वित्तपोषित कार्यक्रम था जिसका उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच बढ़ाना और उसकी गुणवत्ता में सुधार करना था। इसके मुख्य उद्देश्यों में प्रत्येक बस्ती के निकट एक माध्यमिक विद्यालय की स्थापना, विद्यालयों की संख्या में वृद्धि और नामांकन दर में वृद्धि शामिल थी। इसके बाद, बालिका छात्रावास, व्यावसायिक प्रशिक्षण और दिव्यांग व्यक्तियों के लिए समावेशी शिक्षा जैसे विभिन्न कार्यक्रमों को इसमें शामिल किया गया।

आरएमएसए के उद्देश्य

- माध्यमिक शिक्षा की वैश्विक उपलब्धता।
- शैक्षिक गुणवत्ता में सुधार और छात्रों के स्कूल छोड़ने की दर में कमी
- माध्यमिक शिक्षा में लैंगिक, सामाजिक-आर्थिक और दिव्यांगता संबंधी बाधाओं को दूर करना।
- माध्यमिक विद्यालयों में सुविधाओं (कक्षाएँ, प्रयोगशालाएँ, शौचालय, आदि) में सुधार।
- शिक्षकों के लिए निर्देश और पाठ्यक्रम में अद्यतनीकरण प्रदान करना।

मुख्य विशेषता

- नए स्कूलों के निर्माण या मौजूदा स्कूलों के सुधार के लिए धन।
- प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों और कंप्यूटर सुविधाओं की आपूर्ति।
- शिक्षक प्रशिक्षण और शैक्षिक सहायता के लिए धन।
- निष्पक्षता और समावेशिता पर ध्यान केंद्रित करना—विशेषकर लड़कियों, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक और आर्थिक रूप से वंचित छात्रों के लिए।
- कुछ राज्यों में छात्रवृत्तियाँ और प्रोत्साहन उपलब्ध हैं

आरएमएसए एकीकरण:

2018 में, आरएमएसए को समग्र शिक्षा अभियान में शामिल कर लिया गया, जिसमें वर्तमान में निम्नलिखित शामिल हैं:

- प्राथमिक (कक्षा 1-5)
- उच्च प्राथमिक (कक्षा 6-8)
- माध्यमिक (कक्षा 9-10)
- उच्च माध्यमिक (कक्षा 11-12)

यह एकीकरण एक ही ढाँचे के भीतर व्यापक विकास और एक सुसंगत शैक्षिक नीति सुनिश्चित करने के लिए लागू किया गया था।

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) माध्यमिक शिक्षा में बेहतर पहुँच, बेहतर गुणवत्ता और समानता की विरासत के साथ समाप्त हो रहा है, भले ही बुनियादी ढाँचे, शिक्षक प्रशिक्षण और गहरी सामाजिक-आर्थिक असमानताओं से निपटने में लगातार समस्याएँ बनी हुई हैं। हालाँकि इस पहल ने नामांकन में उल्लेखनीय वृद्धि की है, खासकर वंचित क्षेत्रों में, और सुविधाओं में सुधार हुआ है, लेकिन भारत की बढ़ती युवा जनसांख्यिकी के लिए सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निरंतर समायोजन, अतिरिक्त संसाधनों और बेहतर कार्यान्वयन की आवश्यकता के कारण इसकी प्रभावशीलता सीमित है।

9.4.4 समग्र शिक्षा अभियान (एसएसए)

समग्र शिक्षा अभियान (SMSA) भारत में स्कूली शिक्षा के लिए एक व्यापक पहल है जिसका उद्देश्य प्री-स्कूल से लेकर कक्षा 12 तक प्रत्येक बच्चे को गुणवत्तापूर्ण और समावेशी शिक्षा प्रदान करना है। 2018 में शुरू की गई इस पहल में तीन पूर्व पहलों: सर्व शिक्षा अभियान (SSA), राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA), और शिक्षक शिक्षा (TE) को शामिल किया गया है। इस पहल का उद्देश्य हर स्तर पर शिक्षा तक समान पहुँच सुनिश्चित करना, शैक्षिक गुणवत्ता में सुधार करना और लैंगिक असमानता को समाप्त करना है।

उद्देश्य

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020) के सुझावों को क्रियान्वित करने में राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों की सहायता करना।
- निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम, 2009 के क्रियान्वयन में राज्यों की सहायता करना;
- प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा के महत्व पर बल देना।
- बुनियादी साक्षरता और अंकगणित पर ध्यान केंद्रित करना।
- छात्रों को 21वीं सदी के कौशल से सुसज्जित करने के लिए एक समग्र, एकीकृत, समावेशी और गतिविधि-उन्मुख पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र पर बल देना।
- उच्च-गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना और छात्रों के अधिगम परिणामों में सुधार करना;
- शैक्षिक परिवेश में सामाजिक और लैंगिक असमानताओं को समाप्त करना;
- शैक्षणिक संस्थानों के प्रत्येक स्तर पर निष्पक्षता और प्रतिनिधित्व की गारंटी देना
- शिक्षक प्रशिक्षण के लिए केंद्रीय प्राधिकरण के रूप में कार्य करने हेतु राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषदों (एससीईआरटी)/राज्य शिक्षा संस्थानों और जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थानों (डीआईईटी) को सुदृढ़ और बेहतर बनाना।

• शैक्षिक पेशकशों में बुनियादी मानकों के साथ-साथ एक सुरक्षित, संरक्षित और सहायक शिक्षण वातावरण की गारंटी

• शिक्षा के व्यावसायीकरण को प्रोत्साहित करना

मुख्य उद्देश्य

• प्री-स्कूल से कक्षा 12 तक समावेशी और निष्पक्ष गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की गारंटी।

• हर स्तर पर शैक्षिक परिणामों में सुधार।

• सुविधाओं (कक्षाएँ, शौचालय, प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय) के लिए सहायता।

• डिजिटल शिक्षा और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पर ध्यान केंद्रित।

• लड़कियों, दिव्यांग बच्चों (सीडब्ल्यूडी) और आर्थिक रूप से वंचित समुदायों पर विशेष जोर।

• शिक्षकों और स्कूल प्रशासकों का प्रशिक्षण और व्यावसायिक विकास।

• तकनीकी प्रशिक्षण और एथलेटिक गतिविधियों को प्रोत्साहित करना।

एसएसए की प्रमुख विशेषता

• स्कूली शिक्षा के सभी स्तरों (पूर्व-प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक तक) को शामिल करता है।

• एक ही ढाँचे में शिक्षा के लिए एकीकृत बजट और योजना।

• प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा और देखभाल (ईसीसीई) पर जोर।

• सीखने में सुधार, सुधारात्मक निर्देश के लिए कार्यक्रम।

• टीआईसी एन स्कूल: बुद्धिमान, डिजिटल पिज़्ज़ा।

• अलग-थलग क्षेत्रों में बच्चों के लिए परिवहन और पर्यवेक्षण सेवाएँ।

• एनईपी 2020 के उद्देश्यों के एक घटक के रूप में आधारभूत साक्षरता और संख्यात्मकता (एफएलएन)

निष्कर्ष

समग्र शिक्षा अभियान भारत के शिक्षा सुधार में एक महत्वपूर्ण प्रगति का प्रतीक है, जो पूर्व-प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक स्तर (प्री-के से 12वीं कक्षा तक) तक स्कूली शिक्षा के लिए एक व्यापक और एकीकृत पद्धति प्रदान करता है। एसएसए, आरएमएसए और शिक्षक शिक्षा जैसे पूर्ववर्ती कार्यक्रमों को एकीकृत करके, इसने एक समेकित शिक्षा प्रणाली स्थापित करने के लिए वित्त पोषण, योजना और कार्यान्वयन को अनुकूलित किया है जो अधिक प्रभावी, समावेशी और परिणामों पर केंद्रित है। समानता, पहुँच, गुणवत्ता और नवाचार पर जोर देते हुए, यह मिशन छात्रों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करता है—विशेषकर लड़कियों, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों और हाशिए के समूहों के व्यक्तियों की। यह पहल राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के उद्देश्यों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है, विशेष रूप से बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मकता को बढ़ाने, डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देने, व्यावसायिक प्रशिक्षण को आगे बढ़ाने और शिक्षक क्षमता निर्माण में।

9.4.5 राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) भारत सरकार का एक स्वशासी निकाय है, जिसकी स्थापना 1989 में हुई थी। इसका मुख्य उद्देश्य सभी वर्गों के लिए स्नातक स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना और राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप निःशुल्क एवं लचीली शिक्षा को प्रोत्साहित करना है। एनआईओएस विश्व स्तर पर सबसे बड़ी मुक्त विद्यालयी शिक्षा प्रणालियों में से एक है और माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा स्तरों के लिए प्रमाणन परीक्षाएँ आयोजित करता है।

उद्देश्य

शिक्षा का सार्वभौमिकरण

समाज के हर वर्ग, विशेष रूप से हाशिए पर पड़े समूहों को शिक्षा प्रदान करना, जैसे

- स्नातक होने से पहले स्कूल छोड़ने वाले छात्र
- ग्रामीण क्षेत्रों के शिक्षार्थी
- महिलाएँ और युवतियाँ
- दिव्यांग व्यक्ति
- नौकरीपेशा व्यक्ति

लचीलापन और समावेशी शिक्षा

निम्नलिखित के संबंध में अनुकूलनीय शिक्षण विकल्प प्रदान करना

- विकल्प चयन
 - सीखने की गति
 - शिक्षा का स्थान और अवधि
 - यह विभिन्न शिक्षण आवश्यकताओं और व्यक्तिगत स्थितियों को संबोधित करने में सहायता करता है
- मुक्त और दूरस्थ शिक्षा को बढ़ावा देना
- औपचारिक शिक्षा प्रणाली के पूरक के रूप में अनौपचारिक, मुक्त और दूरस्थ शिक्षा को प्रोत्साहित करना।

- सुदूरवर्ती, ग्रामीण और विकासशील क्षेत्रों के छात्रों से जुड़ना

कौशल विकास और व्यावसायिक शिक्षा

- करियर और व्यक्तिगत विकास पाठ्यक्रम प्रदान करना जो नौकरी की तत्परता, स्वतंत्रता और व्यावसायिक स्वामित्व को बढ़ावा देते हैं।
 - सीखने और रोजगार के लिए तैयार होने के बीच के अंतर को खत्म करना
- दिव्यांग व्यक्तियों के लिए एनआईओएस और शिक्षा

• कई दिव्यांग बच्चे कठोर व्यवस्था, अप्रशिक्षित शिक्षकों और दुर्गम वातावरण के कारण मुख्यधारा के स्कूल छोड़ देते हैं।

• एनआईओएस व्यक्तिगत आवश्यकताओं, सीखने की प्राथमिकताओं और शारीरिक या संज्ञानात्मक कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए अनुकूलित शिक्षा प्रदान करता है।

• यह प्रत्येक छात्र के लिए शिक्षा को एक विशेषाधिकार के बजाय एक अधिकार के रूप में स्थापित करने की वकालत करता है।

एनआईओएस दिव्यांग व्यक्तियों की सहायता कैसे करता है

लचीला सीखने का माहौल

• कोई अनिवार्य उपस्थिति, निर्धारित आयु या समय प्रतिबंध नहीं।

• शिक्षार्थी अपनी गति और स्थान के अनुसार प्रगति कर सकते हैं, जो गतिशीलता या स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं वाले व्यक्तियों के लिए एकदम सही है।

विशेष शिक्षण सामग्री

एनआईओएस दिव्यांग छात्रों के लिए सरल, सुलभ और संशोधित शिक्षण संसाधन प्रदान करता है।

सामग्री निम्नलिखित भाषाओं में उपलब्ध है:

• दृष्टिबाधित छात्रों के लिए ब्रेल लिपि।

• श्रवणबाधित छात्रों के लिए सांकेतिक भाषा में वीडियो।

• ऑडियो प्रारूप, बड़े प्रिंट प्रकाशन और सरलीकृत लेखन।

विशेष आवश्यकताओं के लिए मान्यता प्राप्त संस्थान (एआई)

• एनआईओएस विशेष विद्यालयों और गैर सरकारी संगठनों के साथ सहयोग करता है जो दिव्यांग शिक्षार्थियों के लिए अध्ययन केंद्र (एआई) के रूप में कार्य करते हैं।

• ये सुविधाएँ ट्यूशन, परामर्श और सलाह सहित सहायता प्रदान करती हैं।

परीक्षा में लचीलापन

• मूल्यांकन के दौरान स्क्राइब, अतिरिक्त समय और सहायक उपकरणों का उपयोग।

• ऑन-डिमांड परीक्षण का विकल्प, जिससे छात्र अपनी सुविधानुसार परीक्षा दे सकें।

• परीक्षण केंद्र आमतौर पर आसानी से पहुँच योग्य होते हैं और आरामदायक वातावरण प्रदान करते हैं।

व्यावसायिक और जीवन कौशल

स्व-रोज़गार और स्वायत्तता को प्रोत्साहित करने के लिए मोमबत्ती निर्माण, कंप्यूटर कौशल, सिलाई आदि जैसे क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करता है।

दैनिक जीवन कौशल के माध्यम से जीवन को बेहतर बनाने वाले कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित करना।

मान्यता और प्रमाणीकरण

- एनआईओएस प्रमाणपत्रों को सरकारी एजेंसियों, विश्वविद्यालयों और नियोक्ताओं द्वारा मान्यता प्राप्त है।
- एनआईओएस के बाद, छात्र सीबीएसई या राज्य बोर्ड के सहपाठियों की तरह उच्च शिक्षा या नौकरी प्राप्त कर सकते हैं।

निष्कर्ष

एनआईओएस समावेशी शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी है। दिव्यांग व्यक्तियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करके, यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक छात्र को शामिल किया जाए। अपनी अनुकूलनीय संरचना, अनुकूलित संसाधनों और रोजगार के अवसरों का उपयोग करके, एनआईओएस दिव्यांग व्यक्तियों को शिक्षा, आत्मनिर्भरता और सम्मान प्राप्त करने में सक्षम बनाता है - जो शिक्षा के अधिकार (आरटीई) और यूएनसीआरपीडी (दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन) के उद्देश्यों के अनुरूप है।

8.6 सारांश

शैक्षिक समावेशन की दिशा में भारत का मार्ग निरंतर सुधार दर्शाता है एनईपी 1986/पीओए 1992 ने समावेशन के लिए बुनियादी सिद्धांत स्थापित किए। एनईपी 2020 स्पष्ट रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के लिए समावेशी शिक्षण विधियों और सुविधाओं की वकालत करती है। 2006 की दिव्यांगता नीति एक महत्वपूर्ण आधार के रूप में कार्य करती थी, लेकिन अब पुरानी हो चुकी है; 2021/22 की मसौदा नीति अधिकारों पर अधिक केंद्रित है और अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप है, फिर भी इसमें क्रियान्वयन और राजनीतिक भागीदारी का अभाव है। आईडीएसएस और समग्र शिक्षा जैसी पहल, एनआईओएस के साथ मिलकर, सभी शैक्षिक स्तरों पर संगठित सहायता प्रदान करती हैं, जो प्रभावी समावेशन की ओर बदलाव का संकेत देती हैं। यद्यपि नीतिगत ढाँचे उत्तरोत्तर अंतर्राष्ट्रीय मानकों और समावेशी सिद्धांतों के अनुरूप ढल रहे हैं, फिर भी ठोस प्रगति पर्याप्त धन, कार्यान्वयन क्षमता, राजनीतिक और सामाजिक भागीदारी, और विभिन्न क्षेत्रों के बीच समन्वय पर निर्भर करती है। तभी भारत की समावेशी, सार्वभौमिक शिक्षा की आकांक्षा सभी के लिए, विशेष रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के लिए, उपलब्ध हो पाएगी।

8.6 अभ्यास प्रश्न

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 1986, पीओए 1992 और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 पर ध्यान केंद्रित करते हुए भारत में शैक्षिक नीतियों के विकास की रूपरेखा तैयार कीजिए। समावेशी शिक्षा की ओर संक्रमण पर जोर दीजिए?

-
2. राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति (2006) और राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति (2022) के मसौदे का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए ये नीतियाँ शैक्षिक समावेशन को किस प्रकार संबोधित करती हैं?
 3. जाच कीजिए कि आईडीसी, सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए), राष्ट्रीय शिक्षा अभियान (आरएमएसए) और समग्र शिक्षा जैसी प्रमुख राष्ट्रीय पहल दिव्यांग बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा को आगे बढ़ाने में किस प्रकार योगदान देती हैं?
 4. भारत में समावेशी शिक्षा नीतियों के क्रियान्वयन में प्रमुख बाधाएँ क्या हैं? सफल क्रियान्वयन के लिए रणनीतियाँ प्रस्तावित कीजिए?
 5. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में उल्लिखित उपायों का विस्तृत विवरण दीजिए। ये नीतियाँ किस प्रकार वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुरूप हैं?
 6. दिव्यांग बच्चों के लिए शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने में एनआईओएस की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए। यह किन तरीकों से पारंपरिक शिक्षा प्रणाली को बेहतर बनाता है।
-

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf
 2. <https://www.india.gov.in/official-website-sarva-shiksha-abhiyan-0>
 3. <https://rusa.nic.in/>
 4. <https://www.education.gov.in/rmsa>
 5. <https://www.education.gov.in/en/national-education-policy>
 6. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/document-reports/POA_1992.pdf
 7. <https://depwd.gov.in/en/policy/national-policy/>
 8. <https://depwd.gov.in/en/national-fund-under-pwds/>
 9. <https://niepid.nic.in/>
 10. <https://www.education.gov.in/>
 11. <https://www.india.gov.in/district-primary-education-programme-ministry-human-resource-development>
 12. <https://www.nios.ac.in/>
-

8.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. सूझ अधिगम सिद्धान्त तथा इसके शैक्षिक निहितार्थ की व्याख्या कीजिए।
2. गेस्टाल्ट अधिगम सिद्धान्त के प्रमुख नियमों को लिखिए तथा उसका शैक्षिक अभिप्रेतार्थ भी बतलाइए।
3. टालमैन के चिन्ह अधिगम सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए तथा इसके शैक्षिक निहितार्थ का वर्णन कीजिए।
4. टालमैन के अनुसार अधिगम के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
5. कर्ट लेविन के क्षेत्र अधिगम सिद्धान्त की विवेचना कीजिए। इसके शैक्षिक अभिप्रेतार्थ का भी वर्णन कीजिए।
6. अधिगम की प्रक्रिया में सूझ के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए। इस सम्बन्ध में किये गये कुछ प्रयोगों का भी वर्णन कीजिए।

इकाई-9

विशेष शिक्षा के लिए विभिन्न सरकारी योजनाएं और प्रावधान

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 दिव्यांग व्यक्तियों के कल्याण के लिए सरकारी योजना
 - 9.3.1 प्रारंभिक हस्तछेप और डे केयर
 - 9.3.2 प्रारंभिक सहायता और स्कूल की तैयारी (DISHA तत्व)
 - 9.3.3 सामाजिक संपर्क और आत्मनिर्भर संचालन में सुधार करना।
 - 9.3.4 सामाजिक संपर्क और आत्मनिर्भर संचालन में सुधार करना।
 - 9.3.5 दिव्यांगजनों का समग्र विकास
 - 9.3.6 निवासी और राहत देखभाल
 - 9.3.7 स्वास्थ्य सहायक सहायता और बीमा
 - 9.3.8 सरकारी सहायता कार्यक्रम
 - 9.3.9 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए बीमा
- 9.4 विकलांगों के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय संस्थानों के योगदान की समीक्षा
- 9.5 दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को बढ़ावा देने में गैर सरकारी संगठनों की वृद्धि और भूमिका: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
 - 9.5.1 ऐतिहासिक संदर्भ
 - 9.5.2 गैर सरकारी संगठनों की वर्तमान भूमिका
- 9.6 अभ्यास प्रश्न
- 9.7 संदर्भ

9.1 प्रस्तावना

भारत में दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम(1995) और अधिक व्यापक दिव्यांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम अधिनियम) 2016 जैसे ढांचे बनाकर विशेष शिक्षा में उल्लेखनीय प्रगति हासिल की है, जिसने दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को मजबूत किया, जिसमें विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं वाले लोग शामिल हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 समावेशी और व्यक्तिगत शिक्षा के प्रति समर्पण को मजबूत करती है, जो विशेष जरूरतों वाले बच्चों के लिए प्रारंभिक पहचान और अनुकूलनीय, अनुकूलित समर्थन पर प्रकाश डालती है। समग्र शिक्षा योजना एक प्रमुख कार्यक्रम है जो नियमित स्कूलों में दिव्यांग छात्रों की सहायता करके समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देता है, सहायक उपकरण, रैंप, विशेष शिक्षक प्रदान करता है

और गंभीर या एकाधिक दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए घर-आधारित शिक्षा के विकल्पों का विस्तार भी करता है। सुगम्य भारत अभियान (सुलभ भारत अभियान) का उद्देश्य स्कूल पहुंच में सुधार के लिए बुनियादी ढांचे को बढ़ाना है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

- भारत में दिव्यांगजनों (PwDs) की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन की गई प्रमुख सरकारी पहलों और उपायों की पहचान और रूपरेखा तैयार करना।
- जाँच करना कि ये सरकारी पहल दिव्यांगजनों के लिए शिक्षा की पहुँच, निष्पक्षता और गुणवत्ता में सुधार लाने में कितनी सफल रही हैं।
- दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण और शिक्षा में प्रमुख राष्ट्रीय संगठनों (जैसे NIEPID, NIEPVD, NIMHANS, आदि) की भूमिकाओं का परीक्षण करना।
- दिव्यांगजनों के लिए शैक्षिक अवसरों की ऐतिहासिक प्रगति को समझें, महत्वपूर्ण मील के पथर, विनियमों और कानूनी ढाँचों (जैसे, RCI अधिनियम, PWD अधिनियम 1995, RPWD अधिनियम 2016, NEP 2020) की पहचान करना।
- दिव्यांगजनों के लिए समावेशी शिक्षा, वकालत, जागरूकता, क्षमता विकास और सेवा प्रावधान को बढ़ावा देने में गैर-सरकारी संगठनों के प्रभाव और महत्व का आकलन करना।
- समावेशी शिक्षा को आगे बढ़ाने में सरकारी एजेंसियों, राष्ट्रीय संगठनों और गैर-सरकारी संगठनों के बीच प्रभावी साझेदारी के केस स्टडी या उदाहरणों की समीक्षा करना।
- मौजूदा प्रणाली में मौजूद बाधाओं और कमियों का विश्लेषण करना और दिव्यांगता शिक्षा में भविष्य की प्रगति के लिए संभावित सुधारों का प्रस्ताव करना।
- यदि आपको इसे अधिक सरल प्रारूप में या पाठ योजना के रूप में विस्तृत रूप में चाहिए, तो मुझे सूचित करना।

9.3 दिव्यांग व्यक्तियों के कल्याण के लिए सरकारी योजना

भारत में दिव्यांग बच्चों के लिए आवश्यक केंद्रीय सरकारी कार्यक्रमों की सूची, जो शैक्षिक सहायता, समावेशन, पुनर्वास और सशक्तिकरण पर केंद्रित है:

9.3.1 प्रारंभिक हस्तछेप और डे केयर

1. दिशा

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा जिला स्तर पर संबंधित सांसद के नेतृत्व में जिला विकास समन्वय एवं निगरानी समितियों (दिशा) की स्थापना की गई है। ये समितियाँ स्थानीय स्तर पर केंद्र सरकार की महत्वपूर्ण योजनाओं और कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन की निगरानी के लिए उत्तरदायी हैं। दिशा का उद्देश्य जिलों के प्रभावी, समावेशी और समयबद्ध विकास के लिए निर्वाचित अधिकारियों और सरकारी कर्मचारियों के बीच सहयोग को बढ़ाना है। इसी प्रकार, राज्य/केंद्र शासित प्रदेशों में उच्चतम स्तर पर समाधान की आवश्यकता वाले मुद्दों के समाधान हेतु संबंधित मुख्यमंत्री के नेतृत्व में राज्य विकास समन्वय एवं निगरानी समितियों का गठन किया गया है।

दीक्षा, भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा शुरू किया गया एक राष्ट्रव्यापी स्कूली शिक्षा मंच है। इसका उद्देश्य निम्नलिखित प्रदान करना है:

- शिक्षार्थियों और शिक्षकों के लिए निःशुल्क ऑनलाइन शैक्षिक संसाधन।
- वीडियो, पीडीएफ और प्रश्नोत्तरी जैसी आकर्षक शैक्षिक सामग्री।
- शिक्षकों की व्यावसायिक उन्नति के लिए पाठ्यक्रम।
- एनसीईआरटी/सीबीएसई और राज्य बोर्ड के पाठ्यक्रम के अनुसार सामग्री।

2. विकास

विकास डे केयर योजना, भारत सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के दिव्यांगजन सशक्तिकरण विभाग द्वारा शुरू की गई एक अभूतपूर्व योजना है। 10 वर्ष और उससे अधिक आयु के दिव्यांग बच्चों की सहायता के लिए शुरू किया गया यह कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण परिवर्तन काल के दौरान उनकी सामाजिक और रोजगार संबंधी क्षमताओं को बेहतर बनाने का प्रयास करता है। पंजीकृत संगठनों (आरओ) द्वारा संचालित विकास केंद्र, व्यापक डे केयर सेवाएँ प्रदान करते हैं जिनमें देखभाल सहायता, परामर्श और कौशल विकास गतिविधियाँ शामिल हैं, जिससे परिवार के सदस्यों को अपनी अन्य जिम्मेदारियाँ पूरी करने के लिए आवश्यक समय भी मिलता है।

- डेकेयर कार्यक्रम, जिसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक और रोजगार संबंधी क्षमताओं में सुधार लाना है।
- इसका मुख्य उद्देश्य दिव्यांग व्यक्तियों को देखभाल सहायता प्रदान करना है।
- दिव्यांग व्यक्तियों के परिवार के सदस्यों को दिन भर अन्य जिम्मेदारियों के लिए समय निकालने में सहायता करता है।
- दिव्यांग व्यक्तियों के लिए डेकेयर केंद्र प्रतिदिन कम से कम 6 घंटे सेवाएँ प्रदान करते हैं, जिसमें उनकी आयु के अनुसार गतिविधियाँ शामिल हैं।
- पंजीकृत संस्था को कम आय वर्ग (बीपीएल सहित) और उससे ऊपर के दिव्यांग व्यक्तियों के लिए 1:1 अनुपात बनाए रखना होगा।
- समूह में 30 दिव्यांग व्यक्ति शामिल हैं।

-
- यह योजना पूरे देश में उपलब्ध होगी।

3. दिशा सह विकास योजना

यह एक संयुक्त डे-केयर पहल है जो पंजीकृत संगठनों (आरओ) के लिए दिशा और विकास कार्यक्रमों की भूमिकाओं को मिलाती है, जो दोनों स्वतंत्र रूप से चल रहे थे। मार्च 2018 में बोर्ड की स्वीकृति मिलने के बाद, यह संयुक्त योजना 1 अप्रैल, 2018 से प्रभावी है। दिशा सह विकास योजना राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 के अंतर्गत एक समेकित डे-केयर पहल है, जिसका उद्देश्य दिव्यांग व्यक्तियों (PwDs) को सहायता सेवाएँ प्रदान करना है—विशेषकर उन लोगों को जो:

- ऑटिज्म
- सेरेब्रल पाल्सी
- संज्ञानात्मक अक्षमता (बौद्धिक अक्षमताएँ)
- विभिन्न दिव्यांगताएँ

9.3.2 प्रारंभिक सहायता और स्कूल की तैयारी (DISHA तत्व)

- विकासात्मक देरी (विशेषकर 0-10 वर्ष की आयु के) से जूझ रहे बच्चों को प्रारंभिक सहायता सेवाएँ प्रदान करना।
- बच्चों को संज्ञानात्मक, गतिक, संचार और सामाजिक क्षमताओं के विकास में सहायता करना।
- उन्हें भविष्य में नियमित या विशिष्ट स्कूलों में नामांकन के लिए तैयार करना।
- उन्हें भविष्य में नियमित या विशिष्ट स्कूलों में नामांकन के लिए तैयार करना।

9.3.3 बाल देखभाल और कौशल संवर्धन (विकास तत्व)

- दिव्यांग व्यक्तियों (आमतौर पर 10 वर्ष और उससे अधिक आयु के) के लिए संगठित दिन के समय देखभाल सेवाएँ प्रदान करना।
- उन्हें व्यावसायिक चिकित्सा, कौशल विकास गतिविधियों और जीवन कौशल प्रशिक्षण में शामिल करना।

9.3.4 सामाजिक संपर्क और आत्मनिर्भर संचालन में सुधार करना।

- परिवारों और देखभालकर्ताओं को अल्पकालिक राहत प्रदान करना, जिससे उन्हें नौकरी या निजी कार्यों के लिए समय मिल सके, जबकि उनके आश्रितों की देखभाल की जा रही हो।
- दिव्यांगजनों के संचार और सामाजिक कौशल को बढ़ाकर उन्हें मुख्यधारा के समाज में शामिल करने को बढ़ावा दें।
- सामुदायिक सहभागिता और भागीदारी के अवसर प्रदान करना।

9.3.5 दिव्यांगजनों का समग्र विकास

- संगठित पहलों के माध्यम से शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास को सुगम बनाना।

- एक सुरक्षित, प्रेरक और उत्थानकारी वातावरण स्थापित करना।

9.3.6 निवासी और राहत देखभाल

निवासी देखभाल, दिव्यांगजनों के लिए स्थायी या दीर्घकालिक आवास प्रदान करने वाली सुविधाओं से संबंधित है, और उन्हें निम्नलिखित सुविधाएँ प्रदान करती है:

- चौबीसों घंटे निगरानी और सहायता
- आवास और भोजन
- स्वास्थ्य और व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए सहायता
- कैरियर या दैनिक जीवन कौशल शिक्षा
- भावनात्मक और सामाजिक विकास

उद्देश्य

- उन दिव्यांगजनों के लिए एक सुरक्षित और व्यवस्थित रहने की जगह प्रदान करना जो घर पर देखभाल प्राप्त करने में असमर्थ हैं।
- दीर्घकालिक सहायता और पुनर्वास प्रदान करना।
- यथासंभव आत्मनिर्भर जीवन को बढ़ावा देना।

मुख्य योजना

1. समर्थ कार्यक्रम (राष्ट्रीय न्यास का एक अंग)

- 10 वर्ष और उससे अधिक आयु के दिव्यांग व्यक्तियों के लिए
- उन व्यक्तियों के लिए जिनके परिवार सहायता प्रदान करने में असमर्थ हैं।
- इसमें कुशल कर्मियों के साथ आवासीय सुविधाएँ शामिल हैं।

2. घरौंदा कार्यक्रम (वयस्क समूह आवास)

- दिव्यांग व्यक्तियों (18 वर्ष और उससे अधिक) के लिए।
- स्थायी आवास, सहायता और समुदाय-समावेशी जीवन पर ज़ोर।
- पेशेवर सहायता के साथ स्वायत्त या अर्ध-स्वायत्त समूह आवास व्यवस्था प्रदान करता है।

9.3.7 स्वास्थ्य सहायक सहायता और बीमा

भारत में दिव्यांग व्यक्तियों (PwDs) के लिए स्वास्थ्य सहायता, सहायता एवं उपकरण, तथा बीमा कार्यक्रम सुलभ हैं - विशेष रूप से राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 (ऑटिज्म, सेरेब्रल पाल्सी, बौद्धिक दिव्यांगता और बहु दिव्यांगता के लिए) के अंतर्गत संरक्षित व्यक्तियों के लिए।

स्वास्थ्य क्षेत्र में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सहायता

स्वास्थ्य सहायता में चिकित्सा उपचार, पुनर्वास और चिकित्सीय सहायता शामिल है जो दिव्यांग व्यक्तियों को उनकी स्थिति से निपटने और उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए दी जाती है। आवश्यक तत्व:

- नियमित स्वास्थ्य परीक्षण
- उपचार (शारीरिक चिकित्सा, वाक् चिकित्सा, व्यावसायिक चिकित्सा)
- मानसिक स्वास्थ्य के लिए सहायता
- पोषण सहायता
- पुनर्वास सहायता सेवाएँ

9.3.8 सरकारी सहायता कार्यक्रम:

1. समग्र क्षेत्रीय केंद्र (सीआरसी):

- दिव्यांगजनों के लिए निदान, उपचार और परामर्श सहायता प्रदान करते हैं।
- दिव्यांगजन सशक्तिकरण विभाग (डीईपीडब्ल्यूडी) द्वारा संचालित।

2. जिला दिव्यांगता सहायता केंद्र (डीडीएसी):

जिला स्तर पर निःशुल्क स्वास्थ्य शिविर, चिकित्सा सत्र और सहायक उपकरणों का वितरण प्रदान करते हैं।

3. सहायक प्रौद्योगिकियाँ और उपकरण

ये ऐसे उपकरण हैं जो दिव्यांगजनों को ऐसे कार्य करने में सहायता करते हैं जिन्हें अन्यथा पूरा करने में उन्हें कठिनाई हो सकती है, जिससे उनकी स्वतंत्रता और गतिशीलता में वृद्धि होती है।

- इस्तेमाल होने वाले सहायक उपकरण और उपकरण:
- गतिशीलता कुर्सियाँ
- श्रवण उपकरण
- हड्डी और कृत्रिम अंग उपकरण
- अद्वितीय शैक्षिक पैकेज
- ब्रेल सेट
- संचार उपकरण (ऑटिज़्म के लिए AAC)
- अनुकूलनशीलता के लिए डिज़ाइन किया गया फ़र्नीचर और गतिशीलता सहायता

मुख्य योजना:

एडीआईपी कार्यक्रम (दिव्यांगजनों को सहायक उपकरण प्राप्त करने/स्थापित करने हेतु सहायता)

- प्रबंधक: सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय
- प्राप्तकर्ता: 40% या उससे अधिक दिव्यांगता वाले व्यक्ति

-
- आय सीमा: वार्षिक आय ₹2.5 लाख से कम होनी चाहिए।
 - निःशुल्क या कम कीमत वाले सहायक उपकरण प्रदान करता है।
 - एएलआईएमसीओ (भारतीय कृत्रिम अंग निर्माण निगम) के माध्यम से उपकरण प्रदान किए जाते हैं।

9.3.9 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए बीमा

दिव्यांग व्यक्तियों के चिकित्सा खर्चों को वहन करने के लिए स्वास्थ्य बीमा आवश्यक है। इस श्रेणी के लिए विशेष कार्यक्रम उपलब्ध हैं।

निरमाया स्वास्थ्य बीमा कार्यक्रम (राष्ट्रीय न्यास के अंतर्गत)

विशेषताएँ:

- ऐसे व्यक्तियों को कवर करता है जो:
- ऑटिज्म, सेरेब्रल पाल्सी, बौद्धिक दिव्यांगता (आईडी) अनेक दिव्यांगताएँ

- चिकित्सा परीक्षण आवश्यक नहीं
- मौजूदा स्थितियों से इनकार नहीं

बीमा पॉलिसी सीमा: ₹1 लाख प्रति वर्ष कवर करता है

- ओपीडी लागत (डॉक्टर के दौरे, चिकित्सा सत्र, दवाएँ)
- अस्पताल में भर्ती देखभाल पुनर्निर्माण प्रक्रियाएँ
- निरंतर दिव्यांगता प्रबंधन

इस योजना का लाभ कैसे उठाएँ

- राष्ट्रीय न्यास से संबद्ध किसी स्थानीय पंजीकृत संगठन (आरओ) में नामांकन कराएँ
- दस्तावेज़ उपलब्ध कराएँ
- दिव्यांगता प्रमाणपत्र
- पहचान और आय का सत्यापन
- नए पासपोर्ट की तस्वीरें
- योजना के लिए विशिष्ट फ़ॉर्म भरे (जैसे, निरामय फ़ॉर्म, ऑनलाइन या ऑफलाइन)।
- एडीआईपी के लिए: एएलआईएमसीओ/आरओ द्वारा आयोजित चिकित्सा शिविरों में भाग लें या किसी स्थानीय एनजीओ/डीडीआरसी के माध्यम से आवेदन जमा करें।

आवश्यक दस्तावेज़ (सामान्य सूची):

- दिव्यांगता प्रमाण पत्र ($\geq 40\%$)
- आधार कार्ड
- पासपोर्ट आकार की तस्वीरें
- आय प्रमाण पत्र (सब्सिडी वाली योजनाओं के लिए)

-
- बैंक विवरण (प्रतिपूर्ति के लिए)
-

9.4 विकलांगों के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय संस्थानों के योगदान की समीक्षा

राष्ट्रीय संस्थाएँ व्यापक सेवाएँ प्रदान करके, उन्नत प्रशिक्षण और पुनर्वास पहलों को लागू करके, सहायक तकनीक विकसित करके और जागरूकता बढ़ाकर दिव्यांगजनों को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनके प्रमुख योगदानों में राष्ट्रीय महत्व के संस्थानों की स्थापना, कौशल विकास को बढ़ावा देना, रोजगार के अवसर पैदा करना और दिव्यांगजन सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार जैसे सम्मानों के माध्यम से व्यक्तिगत और संस्थागत उत्कृष्टता को मान्यता देना शामिल है। ये संस्थाएँ सामुदायिक सहभागिता, सामाजिक समावेशन और दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 जैसी नीतियों के क्रियान्वयन को भी बढ़ावा देती हैं।

राष्ट्रीय संस्थाओं का प्रमुख योगदान

- व्यापक सेवाएँ

राष्ट्रीय संस्थान विभिन्न सेवाएँ प्रदान करते हैं, जिनमें शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, पुनर्वास, तथा फिजियोथेरेपी, व्यावसायिक चिकित्सा, तथा प्रोस्थेटिक्स और ऑर्थोटिक्स जैसे क्षेत्रों में तकनीकी निर्देश शामिल हैं।

- मानव संसाधन विकास

संगठन दिव्यांगता क्षेत्र में कुशल विशेषज्ञों को तैयार करने के लिए प्रशिक्षण और कार्यक्रम प्रदान करते हैं, जिससे कुशल सेवा प्रावधान में वृद्धि होती है।

- सेवा व्यवस्था

वे विभिन्न प्रकार की सेवाएँ प्रदान करते हैं, जैसे कि प्रारंभिक हस्तक्षेप, फिजियोथेरेपी, व्यावसायिक चिकित्सा, चिकित्सा मूल्यांकन और पूर्ण पुनर्वास कार्यक्रम।

- अनुसंधान और विकास

ये संगठन अनुसंधान करते हैं और नए देखभाल मॉडल, सेवाओं को बढ़ाने के लिए नवीन रणनीतियाँ, और दिव्यांग पेशेवरों और व्यक्तियों दोनों के लिए सुलभ संसाधन बनाते हैं।

- सुलभ उपकरण और प्रौद्योगिकियाँ

एनआईडीपीआईडी जैसे संगठनों ने व्यावसायिक प्रथाओं को अनुकूलित करने और पहुंच में सुधार करने के लिए दिशा मंच सहित प्रभावी उपकरण बनाए और साझा किए हैं।

- क्षमता निर्माण

वे पेशेवरों और समुदायों के लिए क्षमता निर्माण पहलों में भाग लेते हैं, उन्हें दिव्यांगता प्रबंधन और सशक्तिकरण में वर्तमान ज्ञान और व्यावहारिक कौशल प्रदान करते हैं।

- सूचना का प्रसार
-

माता-पिता और देखभाल करने वालों को जानकारी देने के लिए कार्यशालाओं और प्रश्नोत्तर सत्रों का आयोजन किया जाता है, जिससे उन्हें यूडीआईडी योजना जैसे सरकारी कार्यक्रमों को समझने में सहायता मिलती है और उन्हें अपने बच्चों का सक्रिय रूप से समर्थन करने के लिए सशक्त बनाया जाता है।

भारत में दिव्यांगजनों के कल्याण और स्वायत्तता में सुधार लाने के लिए दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण हेतु समर्पित राष्ट्रीय निकाय अत्यंत महत्वपूर्ण रहे हैं। अपने केंद्रित प्रशिक्षण, पुनर्वास सेवाओं और शैक्षणिक उत्कृष्टता के लिए इन्हें अत्यधिक सम्मान प्राप्त है। फिर भी, मूल्यांकन यह भी दर्शाते हैं कि परिसर के वातावरण, स्नातकों के लिए रोजगार स्थिरता और सुविधाओं के आधुनिकीकरण सहित कुछ विशिष्ट पहलुओं में सुधार आवश्यक है। दिव्यांगजनों के निरंतर समावेशन और सशक्तिकरण के लिए सतत नीतिगत समर्थन, सामुदायिक भागीदारी और इन मुद्दों से निपटना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

9.5 दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को बढ़ावा देने में गैर सरकारी संगठनों की वृद्धि और भूमिका ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए गैर-लाभकारी संगठन (एनजीओ) कार्य कर रहे हैं। राज्य और राज्य-केंद्रित राष्ट्रीय संगठनों की अपर्याप्तता को देखते हुए, यह तर्क दिया जाता है कि दिव्यांग व्यक्तियों से संबंधित कार्यक्रमों और नीतियों के क्रियान्वयन के लिए विकेन्द्रीकृत, अनुकूलनीय, समुदाय-आधारित प्रतिक्रियाएँ आवश्यक हैं। परिणामस्वरूप, दिव्यांगता के मामलों में गैर-सरकारी संगठनों की भागीदारी महत्वपूर्ण मानी जाती है। सशक्तिकरण के मुद्दों में दक्षता और लोकतांत्रिक सिद्धांतों के उद्देश्य से सशक्तिकरण। गैर-सरकारी संगठनों की कार्यवाहियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मुद्दों को पहचानने, एजेंडा निर्धारित करने, नीतियाँ बनाने और संस्थाओं के निर्माण में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। प्रत्यक्ष सेवा प्रदाता, विशिष्ट शिक्षण संस्थान और सशक्त पैरोकार के रूप में कार्य करके, गैर-सरकारी संगठन दिव्यांगता शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण बन गए हैं। ये भूमिकाएँ ऐतिहासिक रूप से सरकारी निष्क्रियता और अनुकूलित सहायता की माँग के कारण उभरी हैं। वे सुलभता संबंधी कमियों को दूर करते हैं, शिक्षकों और छात्रों के लिए लक्षित प्रशिक्षण प्रदान करते हैं, समावेशी शिक्षण संसाधन तैयार करते हैं, और समावेशिता को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण जागरूकता पहल करते हैं। यह भागीदारी उन विशिष्ट संसाधनों और विधियों की आवश्यकता से उत्पन्न हुई है जिनकी सरकारी स्कूलों में अक्सर कमी होती है, जिससे गैर-सरकारी संगठनों को दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा में महत्वपूर्ण कमियों को दूर करने के लिए प्रेरित किया गया है।

9.5.1 ऐतिहासिक संदर्भ

प्रारंभिक पहल

दिव्यांगता शिक्षा में गैर-सरकारी संगठनों की भागीदारी में वृद्धि मानक प्रणालियों में अपर्याप्त समर्थन के कारण हुई है। गैर-सरकारी संगठन शुरुआत में अलग-थलग वातावरण में बुनियादी देखभाल और शिक्षा प्रदान करते थे, और अक्सर अपर्याप्त या अनुपस्थित सरकारी हस्तक्षेप के कारण उत्पन्न कमियों को दूर करते थे।

विशिष्ट आवश्यकताओं पर ध्यान केंद्रित करना

दिव्यांगता की बढ़ती समझ के साथ, गैर-सरकारी संगठनों ने अनुकूलित दृष्टिकोणों की आवश्यकता को पहचाना। उन्होंने दिव्यांग बच्चों के लिए उपयुक्त शिक्षा प्रदान करना शुरू किया और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनुकूलित कार्यक्रम तैयार किए।

समावेशन की ओर बदलाव

बाद में, अलग-अलग परिवेशों से हटकर, नियमित स्कूलों में समावेशी शिक्षा को प्रोत्साहित करने पर जोर दिया गया। गैर-सरकारी संगठनों ने सुलभता की कमियों को दूर करने और दिव्यांग बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा में शामिल करने के लिए प्रयास शुरू किए।

9.5.2 गैर सरकारी संगठनों की वर्तमान भूमिका

1. सेवा व्यवस्था

गैर-सरकारी संगठन विशिष्ट शैक्षणिक संस्थान चलाते हैं या दिव्यांग बच्चों को शामिल करने के लिए नियमित स्कूलों के साथ सहयोग करते हैं। वे वाक् चिकित्सा, व्यावसायिक चिकित्सा और व्यवहार प्रबंधन रणनीतियों जैसी महत्वपूर्ण सहायता प्रदान करते हैं।

2. शिक्षक और संसाधन विकास

उन्हें समावेशी शिक्षा के लिए आवश्यक कौशल प्रदान करना।

3. जागरूकता

नीतिगत सुधारों को बढ़ावा देने, दिव्यांगता अधिकारों और समावेशन के बारे में सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाने और शैक्षिक पहुँच बढ़ाने के लिए संसाधन जुटाने में गैर सरकारी संगठन आवश्यक हैं।

4. अंतरालों को पाटना

गैर सरकारी संगठन प्रायः सरकारी पहलों को समुदायों से जोड़ने वाले मध्यस्थ के रूप में कार्य करते हैं, तथा यह सुनिश्चित करते हैं कि नीतियां और कार्यक्रम प्रभावी रूप से अपने लक्षित लाभार्थियों तक पहुंचें।

5. व्यावसायिक एवं कौशल विकास

वे दिव्यांग युवाओं को रोजगार योग्य कौशल प्रदान करने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण पहल की पेशकश करते हैं, जिससे आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा मिलता है।

दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा में बदलाव लाने में गैर-सरकारी संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है— उपेक्षित दान लाभार्थियों से लेकर अधिकार प्राप्त शिक्षार्थियों तक। परंपरागत रूप से, उन्होंने राज्य द्वारा

उत्पन्न कमियों को दूर किया है, समावेशी प्रथाओं को विकसित किया है और समुदायों को मजबूत बनाया है। वर्तमान में, वे नीतियों के क्रियान्वयन में अधिवक्ता, सेवा प्रदाता, निगरानीकर्ता और सहयोगी बने हुए हैं। व्यापक समावेशी शिक्षा प्राप्त करने के लिए, सरकार, नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठनों के बीच निरंतर समर्थन, वित्त पोषण और सहयोग अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

9.6 अभ्यास प्रश्न

- भारत में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शैक्षिक अवसरों को बढ़ाने हेतु डिज़ाइन की गई प्रमुख सरकारी पहलों और संवैधानिक उपायों का परीक्षण कीजिए। समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने में ये कार्य कितने सफल रहे हैं?
- भारत में दिव्यांग व्यक्तियों के सशक्तिकरण और शिक्षा पर राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रभाव का आकलन कीजिए। उनके योगदान और आने वाली बाधाओं के उदाहरण दीजिए?
- भारत में दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को सुगम बनाने में गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) के ऐतिहासिक विकास का परीक्षण कीजिए। उनका कार्य किस प्रकार दान-उन्मुख से अधिकार-उन्मुख दृष्टिकोण में परिवर्तित हुआ है?
- "दिव्यांग व्यक्तियों के लिए समावेशी शिक्षा के लिए विभिन्न क्षेत्रों में सहयोगात्मक दृष्टिकोण आवश्यक है।" इस कथन को ध्यान में रखते हुए, भारत में दिव्यांगता शिक्षा को आगे बढ़ाने में सरकारी पहलों, राष्ट्रीय संगठनों और गैर-सरकारी संगठनों की भूमिकाओं का आकलन कीजिए?
- भारत में दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा के लिए सरकारी नीतियों और संस्थागत सहायता तंत्रों के विकास का विश्लेषण कीजिए। ऐतिहासिक और वर्तमान दोनों ही दृष्टियों से इन पहलों के समर्थन में गैर-सरकारी संगठनों के योगदान पर जोर दीजिए?
- भारत में दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा को आगे बढ़ाने में गैर-सरकारी संगठनों के विकास और प्रभाव पर चर्चा करते हुए, ऐतिहासिक दृष्टिकोण को शामिल करते हुए एक विस्तृत निबंध लिखें। ये पहल किस प्रकार सरकारी कार्यक्रमों और राष्ट्रीय संस्थागत उद्देश्यों के अनुरूप हैं?

9.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची/सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

- <https://disha.gov.in/>
- <https://pmevidya.education.gov.in/diksha.html>
- <https://nationaltrust.nic.in/vikaas/>
- https://www.egovtschemes.com/vikaas-day-care-scheme-for-person-with-disability-children/?utm_source=chatgpt.com
- <https://nationaltrust.nic.in/disha-cum-vikaas-scheme/>
- <https://nationaltrust.nic.in/samarth-scheme/>

-
- <https://nationaltrust.nic.in/gharaunda-scheme/>
 - <https://depwd.gov.in/en/national-institutes/#:~:text=These%20Institutes%20are%20primarily%20engaged,th,e%20particular%20field%20of%20disability.>
 - <http://etd.lib.jnu.ac.in/TH9933.pdf>
 - <https://ijert.org/papers/IJCRT2405264.pdf>

इकाई 10

दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अवसरों और शिक्षा की समानता Equality of Opportunities and Education for Persons with Disabilities

- 10.1 प्रस्तावना
- 10.2 उद्देश्य
- 10.3 दिव्यांग व्यक्ति और शिक्षा
- 10.4 गैर भेदभाव (Non discrimination)
- 10.5 दिव्यांगों के लिए शिक्षा कानून व अन्य प्रावधान
- 10.6 दिव्यांग व्यक्तियों के परिवारों के सामने आने वाली चुनौतियाँ
- 10.7 नीति और विधायी ढांचा
- 10.8 पारिवारिक, सामुदायिक सहभागिता और साझेदारियाँ
- 10.9 सारांश
- 10.10 स्व मूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
- 10.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
- 10.12 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा के विभिन्न प्रावधानों और शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों के विषय में जानकारी और ज्ञान प्राप्त करेंगे। शिक्षा सशक्तिकरण है क्योंकि यह व्यक्ति की मानसिक क्षमताओं को समृद्ध और विस्तृत करती है। लेकिन यह विडंबना ही है कि कुछ व्यक्ति केवल इसलिए इस सशक्तिकरण से वंचित रह जाते हैं क्योंकि उनकी कुछ या एक शारीरिक क्षमता ठीक से काम नहीं करती। अवसर की समानता के सिद्धांतकारों के लिए दिव्यांगता विशेष समस्याएँ उत्पन्न करती है क्योंकि उनमें से कई योग्यता के आधार पर नौकरियों के आवंटन का समर्थन करते हैं और कई दिव्यांग व्यक्तियों को गैर-दिव्यांग व्यक्तियों की तुलना में सबसे अधिक योग्य बनने में अधिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर कन्वेंशन

(सीआरपीडी) के अनुच्छेद 5 और 24(1) इस बात की पुष्टि करते हैं कि शिक्षा के अधिकार की गारंटी बिना किसी भेदभाव के और अवसर की समानता के आधार पर दी जानी चाहिए। शिक्षा का अधिकार दिव्यांगों सहित सभी नागरिकों को उपलब्ध है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 ने दिव्यांग बच्चों को "बुनियादी स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक नियमित स्कूली शिक्षा प्रक्रिया में पूरी तरह से भाग लेने" में सक्षम बनाने के लिए एक निर्देश जारी किया है।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप-

- दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा के बारे में जान सकेंगे।
- दिव्यांगों व्यक्तियों के लिए शिक्षा से संबंधित कानूनों व अन्य प्रावधानों के बारे में जान पाएंगे।
- दिव्यांग व्यक्तियों के परिवारों के सामने आने वाली चुनौतियों के बारे में जान पाएंगे।
- दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा में पारिवारिक, सामुदायिक सहभागिता और साझेदारियों की भूमिका को जान पायेंगे।

10.3 दिव्यांग व्यक्ति ओर शिक्षा

कहा जाता है कि शिक्षा सशक्तिकरण है क्योंकि यह व्यक्ति की मानसिक क्षमताओं को समृद्ध और विस्तृत करती है। लेकिन यह विडंबना ही है कि कुछ व्यक्ति केवल इसलिए इस सशक्तिकरण से वंचित रह जाते हैं क्योंकि उनकी कुछ या एक शारीरिक क्षमता ठीक से काम नहीं करती। क्या यह ऐसे व्यक्तियों के बुनियादी मानवाधिकारों का हनन नहीं है? दिव्यांग व्यक्ति समाज के सबसे वंचित वर्ग का गठन करते हैं क्योंकि समाज आमतौर पर शारीरिक, संवेदी या मानसिक रूप से दिव्यांग लोगों को बहुत कम या बिल्कुल भी महत्व नहीं देता। परिणामस्वरूप, ऐसे लोग बहिष्कृत हो जाते हैं और समाज की मुख्यधारा में समान रूप से भाग लेने से वंचित रह जाते हैं। उन्हें नियमित रूप से प्रारंभिक, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा, या जीवन-कौशल और व्यावसायिक प्रशिक्षण, या दोनों के समान अवसरों से वंचित रखा जाता है, जो अन्य बच्चों को उपलब्ध हैं। दिव्यांग बच्चों का समावेशन सामाजिक न्याय का विषय है और समाज के भविष्य में एक आवश्यक निवेश है। यह दान या सद्भावना पर आधारित नहीं है, बल्कि सार्वभौमिक मानवाधिकारों की अभिव्यक्ति और प्राप्ति का एक अभिन्न अंग है।

नस्लीय और धार्मिक अल्पसंख्यकों, समलैंगिकों और महिलाओं के साथ-साथ दिव्यांगों को भी लंबे समय से समान अवसर से वंचित रखा गया है।

ऐसा माना जा सकता है कि अवसर की समानता के सिद्धांतकारों के लिए दिव्यांगता विशेष समस्याएँ उत्पन्न करती है क्योंकि उनमें से कई योग्यता के आधार पर नौकरियों के आवंटन का समर्थन करते हैं और कई दिव्यांग व्यक्तियों को गैर-दिव्यांग व्यक्तियों की तुलना में सबसे अधिक योग्य बनने में अधिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि कुछ लोग नौकरियों में प्रदर्शन से संबंधित क्षमताओं के मामले में स्वाभाविक रूप से वंचित होते हैं। दिव्यांगों के साथ गैर-दिव्यांग व्यक्तियों के समान व्यवहार करना हमेशा उनके साथ समान व्यवहार करने के लिए पर्याप्त नहीं होता है, क्योंकि दिव्यांगता कभी-कभी विशेष आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को जन्म देती है। हालाँकि, विभेदक व्यवहार कलंक और विभाजन को जन्म दे सकता है, जो समानता के लिए अभिशाप है। ये विचार दिव्यांग बच्चों को मुख्यधारा के स्कूलों में रखने और वहाँ उनकी शिक्षा जैसे व्यावहारिक निर्णयों के लिए प्रासंगिक हैं।

ऐतिहासिक रूप से, दिव्यांग बच्चों को सामान्य शिक्षा प्रणाली से बाहर रखा जाता रहा है और उन्हें 'विशेष स्कूलों' में रखा जाता रहा है। कुछ मामलों में, उन्हें उनके परिवारों से अलग कर दिया जाता है और दीर्घकालिक आवासीय संस्थानों में रखा जाता है, जहाँ उन्हें समुदाय से अलग-थलग रखा जाता है, अगर उन्हें शिक्षा मिलती भी है। दोनों ही प्रथाएँ कई क्षेत्रों में जारी हैं, उदाहरण के लिए, पूर्वी यूरोप में दुनिया में संस्थागत बच्चों की संख्या सबसे ज्यादा है और एक दिव्यांग बच्चे के अन्य बच्चों की तुलना में संस्थागत होने की संभावना लगभग 17 गुना ज्यादा होती है।

दिव्यांग बच्चों के शुरुआती नामांकन की दर बहुत कम होती है। अगर वे स्कूल जाते भी हैं, तो भी उनके माध्यमिक विद्यालय या उससे आगे की पढ़ाई किए बिना ही स्कूल छोड़ने और स्कूल छोड़ने की संभावना ज्यादा होती है (GCE, Equal right, equal opportunity report, 2014)। दिव्यांग बच्चों को स्कूल में हिंसा और बदमाशी का भी ज्यादा खतरा होता है, जिससे उन्हें शिक्षा के अपने अधिकार का सुरक्षित आनंद लेने से रोका जाता है।

अवसर की समानता की सामान्य रूप से, और साथ ही अवसर की समानता की विशिष्ट अवधारणाओं की, दिव्यांगता को समायोजित करने की क्षमता पर काफ़ी बहस होती है। उदाहरण के लिए, कुछ आलोचकों का दावा है कि न्याय के कई सिद्धांत पारस्परिकता और सहयोग पर अनावश्यक रूप से ध्यान केंद्रित करते हैं, जिससे दिव्यांगों को समान अवसर और न्याय की अन्य माँगों के पात्र होने की पूर्व शर्त के रूप में वंचित रखा जा सकता है। अन्य लोगों का तर्क है कि कल्याण के लिए अवसर की समानता, या अवसर की निष्पक्ष समानता पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय, हमें यह सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति में कुछ निश्चित क्षमताएँ हों। आगे की बहस इस बात पर केंद्रित है कि दिव्यांगता के नुकसान (कम से कम कुछ) किस हद तक दिव्यांगता से अलग हो सकते हैं।

और किस हद तक वे केवल सामाजिक संगठन या सामाजिक दृष्टिकोण के कारण जुड़े हुए हैं, जिन्हें हम बदल सकते हैं और बदलना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि हमारे समाज में संचार के प्रमुख साधन मौखिक के बजाय संकेतों पर आधारित होते, तो शायद गूंगापन और बहरापन दिव्यांगता नहीं माना जाता। इसी प्रकार, जहां ब्रेल अनुवाद आसानी से उपलब्ध हैं, वहां दृष्टिहीनों को पढ़ने में किसी प्रकार की अक्षमता का सामना नहीं करना पड़ता।

ये तथ्य और आँकड़े कई दिव्यांग लोगों द्वारा सामना की जा रही शिक्षा में महत्वपूर्ण निरंतर बाधाओं के प्रभाव को दर्शाते हैं, जिनमें शामिल हैं:

- पहुँच की कमी, शारीरिक रूप से दुर्गम स्कूल भवनों और अनुपयुक्त शिक्षण सामग्री दोनों के संदर्भ में
- भेदभाव और पूर्वाग्रह जो दिव्यांग लोगों को दूसरों के समान शिक्षा प्राप्त करने से रोकते हैं
- मुख्यधारा के स्कूली परिवेशों (जिन्हें 'नियमित स्कूल' भी कहा जाता है) से बहिष्कार या पृथक्करण
- शिक्षा की निम्न गुणवत्ता, जिसमें मुख्यधारा के परिवेश भी शामिल हैं जहाँ दिव्यांग बच्चों को मौजूदा गैर-समावेशी प्रणाली में 'एकीकृत' किया गया है

मानवाधिकार कानून 'समावेशी शिक्षा' के कार्यान्वयन के माध्यम से, दिव्यांग लोगों के शिक्षा के अधिकार का सम्मान, संरक्षण और पूर्ति करने के लिए राज्यों पर दायित्व डालकर इन मुद्दों से सीधे निपटने का प्रयास करता है।

भारत का संविधान, जो मौलिक अधिकारों का एक व्यापक और मजबूत सेट प्रदान करता है, 'दिव्यांगता' को भेदभाव के निषिद्ध आधार के रूप में शामिल नहीं करता है। संविधान में एकमात्र स्थान, जहाँ दिव्यांगता को संदर्भित किया गया है और राज्य की जिम्मेदारी निर्धारित की गई है, वह अनुच्छेद 41 है, जो राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत है। अनुच्छेद 41 राज्य को अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी और दिव्यांगता के मामलों में काम, शिक्षा और सार्वजनिक सहायता के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए प्रभावी प्रावधान करने का निर्देश देता है। विधायी क्षेत्र में, भारत में कुछ कानून हैं, जिनकी चर्चा नीचे की गई है, जो विशेष रूप से दिव्यांग लोगों के संरक्षण, पुनर्वास और विकास के लिए निर्देशित हैं।

दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर कन्वेंशन (सीआरपीडी) के अनुच्छेद 5 और 24(1) इस बात की पुष्टि करते हैं कि शिक्षा के अधिकार की गारंटी बिना किसी भेदभाव के और अवसर की समानता के आधार पर दी जानी चाहिए।

भेदभाव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों रूपों में हो सकता है। प्रत्यक्ष भेदभाव तब होता है जब किसी व्यक्ति के साथ दिव्यांगता के आधार पर कम अनुकूल व्यवहार किया जाता है, उदाहरण के लिए, यदि कोई स्कूल दिव्यांग छात्रों को प्रवेश देने से इनकार कर देता है। अप्रत्यक्ष भेदभाव तब होता है जब कोई प्रथा, नीति या नियम जो सभी पर लागू होता है, दिव्यांग लोगों को नुकसान पहुँचाता है या असमान रूप से प्रभावित करता है, उदाहरण के लिए, यदि माध्यमिक विद्यालय से स्नातक होने के लिए निश्चित आवश्यकताओं को पूरा करना आवश्यक है और इसका प्रभाव दिव्यांग छात्र को स्नातक होने से रोकना है।

भेदभाव शिक्षा के अधिकार के विभिन्न पहलुओं पर प्रभाव डाल सकता है, जिसमें पहुँच और गुणवत्ता दोनों शामिल हैं। उदाहरण के लिए, दिव्यांग छात्रों की पहुँच के लिए सुविधाओं को सुलभ बनाने में विफलता भेदभावपूर्ण है, जबकि दिव्यांग शिक्षार्थी की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम या निर्देश को अनुकूलित करने में विफलता, जिससे उनकी शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है, भी भेदभाव के बराबर हो सकती है।

सीआरपीडी के पक्षकार राज्यों, साथ ही आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा (सीईएससीआर) और बाल अधिकार सम्मेलन (सीआरसी) के पक्षकारों का दिव्यांगता के आधार पर सभी प्रकार के भेदभाव को प्रतिबंधित करने का तत्काल और न्यूनतम मूल दायित्व है और उन्हें सभी दिव्यांग व्यक्तियों को सभी आधारों पर भेदभाव के विरुद्ध समान और प्रभावी सुरक्षा की गारंटी देनी होगी। इसमें नियमित शिक्षा नीति से अस्वीकृत न करने का दायित्व और दिव्यांग छात्रों को उचित सुविधाएँ प्रदान करने का कर्तव्य शामिल है।

सीआरपीडी का अनुच्छेद 6 यह मानता है कि दिव्यांग महिलाओं और लड़कियों के साथ बहुविध भेदभाव होता है और यह प्रावधान करता है कि पक्षकारों राज्यों को उनके अधिकारों का समान उपयोग सुनिश्चित करने के लिए उपाय अपनाने चाहिए। दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर समिति ने सामान्य टिप्पणी 4 में अनुच्छेद 24 की अपनी व्याख्या में प्रावधान किया है कि राज्यों को बाधाओं की पहचान करनी चाहिए और उन्हें दूर करना चाहिए तथा यह सुनिश्चित करने के लिए विशिष्ट उपाय लागू करने चाहिए कि दिव्यांग महिलाओं और लड़कियों के शिक्षा के अधिकार में लिंग और/या दिव्यांगता-आधारित भेदभाव, कलंक या पूर्वाग्रह से बाधा न आए।

अभ्यास प्रश्न

1. संविधान का अनुच्छेद 41 है, जो राज्य के सिद्धांत है।
 2. दिव्यांग बच्चों को सामान्य शिक्षा प्रणाली से बाहर रखा जाता रहा है और उन्हें में रखा जाता रहा है।
-

10.4 गैर भेदभाव (Non discrimination)

दिव्यांग लोग अपनी दिव्यांगता और अन्य आधारों पर भी अंतर-विभाजक भेदभाव का अनुभव कर सकते हैं, जिनमें शामिल हैं, लिंग, धर्म, कानूनी स्थिति, जातीय मूल, आयु, यौन अभिविन्यास, या भाषा लेकिन इन्हीं तक यह सीमित नहीं।

सीआरपीडी समिति इस बात पर जोर देती है कि राज्यों को दिव्यांग शिक्षार्थियों के प्रति संवेदनशील आपात स्थितियों में स्कूल सुरक्षा और संरक्षा के लिए समावेशी आपदा जोखिम न्यूनीकरण रणनीतियाँ अपनानी चाहिए। ऐसे संदर्भों में अस्थायी शिक्षण वातावरण में दिव्यांग लोगों के अधिकारों को सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इसमें सुलभ स्कूल सुविधाएँ और शैक्षिक सामग्री शामिल हैं।

दिव्यांग शिक्षार्थियों को इस आधार पर शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश से वंचित नहीं किया जाना चाहिए कि आपातकालीन स्थितियों में उनका निकलना असंभव होगा, और उन्हें उचित सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

10.5 दिव्यांगों के लिए शिक्षा कानून व अन्य प्रावधान

शिक्षा का अधिकार दिव्यांगों सहित सभी नागरिकों को उपलब्ध है। संविधान के अनुच्छेद 29(2) में प्रावधान है कि किसी भी नागरिक को धर्म, मूलवंश, जाति या भाषा के आधार पर राज्य द्वारा संचालित या राज्य निधि से सहायता प्राप्त किसी भी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा।

संविधान का अनुच्छेद 45 राज्य को सभी बच्चों (दिव्यांगों सहित) को 14 वर्ष की आयु प्राप्त होने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का निर्देश देता है। किसी भी बच्चे को धर्म, मूलवंश, जाति या भाषा के आधार पर राज्य द्वारा संचालित या राज्य निधि से सहायता प्राप्त किसी भी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश से वंचित नहीं किया जा सकता।

दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 के अध्याय V की धारा 25 में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि उपयुक्त सरकार और स्थानीय प्राधिकारी (1) दिव्यांगजनों के लिए आवश्यक उपाय करेंगे, - (क) आसपास के क्षेत्र में, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, अधिसूचित पारिवारिक आय के अधीन, निःशुल्क स्वास्थ्य सेवा प्रदान करेंगे; (ख) सरकारी और निजी अस्पतालों, शैक्षणिक संस्थानों और अन्य स्वास्थ्य सेवा संस्थानों और केंद्रों के सभी हिस्सों में बाधा-मुक्त पहुंच; (ग) उपस्थिति और उपचार में प्राथमिकता। और (2) स्वास्थ्य सेवा को बढ़ावा देने और दिव्यांगता की घटना को रोकने के लिए योजनाएं या कार्यक्रम बनाएं और (क) दिव्यांगता की घटना के कारण के संबंध में सर्वेक्षण, जांच और अनुसंधान करेंगे या करवाएंगे; (ख) दिव्यांगता की रोकथाम के लिए विभिन्न तरीकों को बढ़ावा देंगे;

(झ) प्राकृतिक आपदाओं और जोखिम की अन्य स्थितियों के दौरान स्वास्थ्य सेवा। उपरोक्त उपायों को सुनिश्चित करने के लिए नामित अधिकारियों को प्रतिनियुक्त किया जाना आवश्यक है।

स्वीकार्यता (Acceptability)

स्वीकार्यता का अर्थ है कि शिक्षा का स्वरूप और सार सभी छात्रों को स्वीकार्य होना चाहिए। इसलिए, राज्यों का यह दायित्व है कि वे यह सुनिश्चित करें कि शिक्षा से संबंधित सभी सुविधाएँ, वस्तुएँ और सेवाएँ इस तरह से डिज़ाइन और कार्यान्वित की जाएँ कि दिव्यांग व्यक्तियों की आवश्यकताओं, संस्कृतियों, विचारों और भाषाओं को ध्यान में रखा जाए और उनका सम्मान किया जाए।

शिक्षा सभी छात्रों के लिए स्वीकार्य गुणवत्ता की होनी चाहिए और राज्यों को यह सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक उपाय अपनाने चाहिए कि दिव्यांग छात्रों के लिए भी यह स्वीकार्य हो। इसलिए, समावेशी शिक्षा का उद्देश्य ऐसे शिक्षण वातावरण, संस्कृतियों और पाठ्यक्रमों का विकास करके सभी व्यक्तियों के प्रति सम्मान को बढ़ावा देना होना चाहिए जो विविधता के मूल्य को प्रतिबिंबित करते हों। पाठ्यपुस्तकें मूल्यों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और इसलिए, उनमें हानिकारक रूढ़ियों के बजाय दिव्यांग व्यक्तियों का सकारात्मक प्रतिनिधित्व शामिल होना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

1. संविधान का अनुच्छेद 45 राज्य को सभी बच्चों (दिव्यांगों सहित) को की आयु प्राप्त होने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का निर्देश देता है।

2. शिक्षा सभी छात्रों के लिए स्वीकार्य की होनी चाहिए

10.6 दिव्यांग व्यक्तियों के परिवारों के सामने आने वाली चुनौतियाँ (Challenges faced by the families of disabled persons)

व्यक्तियों में दिव्यांगता उनके परिवारों के लिए अतिरिक्त चुनौतियाँ पैदा करती है क्योंकि दिव्यांग लोगों में दूसरों पर निर्भरता का स्तर अधिक होता है और यह दिव्यांगता के प्रकार, दिव्यांग व्यक्ति के आयु वर्ग और पारिवारिक व्यवस्था के प्रकार पर निर्भर करता है। [18] ऐसे लोगों की देखभाल और उनके परिवारों के लिए भावनात्मक और वित्तीय बोझ जुड़ा होता है जो महामारी के दौरान कई गुना बढ़ जाता है। [19] कई कल्याणकारी संगठनों और नीति-निर्माण निकायों द्वारा दिव्यांग व्यक्ति की शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा का समर्थन करने के लिए कई प्रावधानों के बावजूद, इन सेवाओं और कार्यक्रमों की जानकारी एकत्र करना और ऐसी सेवाओं को प्राप्त करने की पूरी प्रक्रिया परिवारों के सामने आने वाली एक और बड़ी बाधा है। यह एक कठिन काम बन जाता है क्योंकि दिव्यांग व्यक्ति की देखभाल के अलावा परिवारों को कई अन्य ज़िम्मेदारियों को भी पूरा करना होता है। महामारी की स्थिति दिनचर्या में व्यवधान पैदा करती है और दिव्यांगों के साथ-साथ परिवार के सदस्यों की शारीरिक और भावनात्मक ऊर्जा को भी

कम करती है, जिसके कारण वे आसानी से संघर्ष में शामिल हो सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप दिव्यांग व्यक्ति और उनके परिवार दोनों के लिए संघर्ष बढ़ सकता है।

कलंक के साथ जीना (Living with stigma): समुदाय में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए एक चुनौती

दिव्यांग व्यक्तियों को अक्सर समुदाय से लेबलिंग, नाम-पुकार, रूढ़िबद्धता और भेदभाव का सामना करना पड़ता है, और परिणामस्वरूप, उनके परिवार भी सामाजिक कलंक से पीड़ित हो सकते हैं। स्वास्थ्य असमानताएँ दिव्यांग व्यक्तियों द्वारा सामना की जाने वाली अनुचित परिस्थितियों से उत्पन्न होती हैं, जिनमें कलंक, भेदभाव, गरीबी, शिक्षा और रोजगार से बहिष्कार, और स्वास्थ्य प्रणाली में आने वाली बाधाएँ शामिल हैं। दिव्यांगता की विश्व रिपोर्ट ने इस बात पर प्रकाश डाला कि दिव्यांग महिलाओं को लैंगिक भेदभाव के साथ-साथ दिव्यांगता संबंधी समस्याओं का भी सामना करना पड़ा है जो शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य सुविधाओं और सामाजिक भागीदारी में बाधा उत्पन्न करती हैं। उदाहरण के लिए, स्कूलों में, अन्य बच्चों और स्कूल कर्मचारियों का रवैया अक्सर मुख्यधारा के स्कूलों में दिव्यांग बच्चों के समावेश को प्रभावित करता है। रोजगार क्षेत्र में, गलत धारणाएँ हैं कि वे काम में कम उत्पादक और अक्षम हो सकते हैं। पिछली महामारी की स्थिति के दौरान, जब स्कूल ऑनलाइन चल रहे थे, सीडब्ल्यूडी को दृष्टिबाधित होने जैसे मुद्दों का सामना करना पड़ा और भाषण और श्रवण दिव्यांग लोगों को यह समझना अपेक्षाकृत मुश्किल लगा कि क्या शिक्षकों द्वारा पाठ प्रदान करने के उचित उपाय नहीं अपनाए गए थे। समुदाय में दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति नकारात्मक रवैया और कलंक और महामारी संकट उनके पहले से मौजूद स्वास्थ्य स्थितियों के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य के मुद्दों को बढ़ा सकते हैं।

10.7 नीति और विधायी ढांचा (Policy and Legislative Framework)

भारत का संविधान 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए शिक्षा की गारंटी देता है (अनुच्छेद 21 ए)। हालाँकि यह राज्य या राज्य-समर्थित शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के संबंध में "केवल धर्म, नस्ल, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर" (अनुच्छेद 29.2) 14 भेदभाव का निषेध करता है, लेकिन संविधान में शैक्षणिक संस्थानों में दिव्यांग व्यक्तियों के साथ भेदभाव-विरोधी का स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

2007 में सीआरपीडी के अनुसमर्थन के बाद अधिनियमित मुख्य घरेलू कानून समावेशी शिक्षा का समर्थन यद्यपि अलग-अलग स्तर पर करते हैं,

बच्चों का निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिकार अधिनियम 2009 (RTE) "पड़ोस के स्कूल में सभी बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा" को बढ़ावा देने की बात करता है, लेकिन स्कूल में दिव्यांग बच्चों की सहायता के लिए विशिष्ट प्रावधानों, जैसे कि उचित आवास और सहायक उपकरण, आदि के बारे में कुछ नहीं कहता। राज्य-स्तरीय RTE नियम दिव्यांग बच्चों के लिए विशिष्ट हस्तक्षेपों

का प्रावधान करते हैं। लगभग सभी राज्यों द्वारा दिव्यांग बच्चों के लिए परिवहन और समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन में स्कूल प्रबंधन समितियों की भागीदारी की गारंटी दी जाती है। 29 में से केवल 1 राज्य ने विशेष स्कूलों का उल्लेख किया है।

दिव्यांगता और शिक्षा पर मुख्य कानून, नीतियां और कार्यक्रम

अंतर्राष्ट्रीय नीतियों पर सरकार की कार्रवाई अनुसमर्थन

- बाल अधिकार सम्मेलन (1989) 1992
- दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन (2006) 2007
- दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार सम्मेलन वैकल्पिक प्रोटोकॉल (2006) कोई कार्रवाई नहीं
- दिव्यांगता और शिक्षा पर प्रमुख घरेलू कानून और नीतियां
- भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992
- ऑटिज़्म, सेरेब्रल पाल्सी, मानसिक दिव्यांगता से ग्रस्त व्यक्तियों के कल्याण हेतु राष्ट्रीय न्यास 1999
- बच्चों के लिए राष्ट्रीय चार्टर 2003
- दिव्यांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति 2006
- निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का बच्चों का अधिकार अधिनियम 2009
- बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति 2013
- दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम 2016
- समग्र शिक्षा 2018
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

हालांकि समावेशी शिक्षा पर कोई विशिष्ट नीति नहीं है, आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम समावेशी शिक्षा के लिए एक मजबूत विधायी ढांचा प्रदान करता है, और इसे “शिक्षा की एक प्रणाली के रूप में परिभाषित करता है जिसमें दिव्यांग ता वाले और बिना दिव्यांग ता वाले छात्र एक साथ सीखते हैं और शिक्षण और सीखने की प्रणाली को विभिन्न प्रकार के दिव्यांग ता वाले छात्रों की सीखने की जरूरतों को पूरा करने के लिए उपयुक्त रूप से अनुकूलित किया जाता है”

यद्यपि दिव्यांग बच्चों पर ध्यान केंद्रित करना उल्लेखनीय है, फिर भी समावेशी शिक्षा की अवधारणा को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में व्यापक बनाने की अनुशंसा की जाती है जो सभी शिक्षार्थियों

को शामिल करे, न कि केवल दिव्यांगों को। इसके अलावा, कानून दिव्यांगता की एक परिभाषा भी प्रस्तुत करता है जो सीआरपीडी द्वारा समर्थित परिभाषा का संदर्भ देती है।

आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम स्पष्ट रूप से सरकार और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा वित्तपोषित या मान्यता प्राप्त सभी शैक्षणिक संस्थानों को समावेशी शिक्षा प्रदान करने; दिव्यांग बच्चों (6-18 वर्ष की आयु, आरटीई अधिनियम की 14 वर्ष की आयु सीमा से परे) को बिना किसी भेदभाव के प्रवेश देने; उचित आवास प्रदान करने; सुविधाओं, बुनियादी ढांचे और परिवहन की पहुंच सुनिश्चित करने; और आवश्यकता पड़ने पर व्यक्तिगत सहायता प्रदान करने तथा उच्च सहायता की आवश्यकता वाले बच्चों के लिए परिचारक उपलब्ध कराने का आदेश देता है।

समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए विशिष्ट उपाय बताए गए हैं, जिनमें दिव्यांग बच्चों की पहचान करना, शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना करना और प्रणाली के सभी स्तरों पर शिक्षकों, पेशेवरों और कर्मचारियों की क्षमता निर्माण करना, संसाधन केंद्र स्थापित करना, निःशुल्क सहायक शिक्षण सामग्री और उपकरणों तथा संचार के वैकल्पिक तरीकों (जैसे ब्रेल, सांकेतिक भाषा) के उपयोग को बढ़ावा देना और प्रदान करना, छात्रवृत्ति प्रदान करना, तथा पाठ्यक्रम और मूल्यांकन विधियों में संशोधन करना शामिल है।

कानून दिव्यांग बच्चों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए पड़ोस के स्कूल में शिक्षा और विशेष शिक्षा को बढ़ावा देता है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के अनुसार, बहुविध या गंभीर दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए घर पर शिक्षा की सिफारिश की जाती है।

आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम समावेशी शिक्षा को "शिक्षा की एक ऐसी प्रणाली" के रूप में परिभाषित करता है जिसमें दिव्यांग और गैर-दिव्यांग छात्र एक साथ सीखते हैं और शिक्षण-अधिगम प्रणाली को विभिन्न प्रकार के दिव्यांग छात्रों की सीखने की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयुक्त रूप से अनुकूलित किया जाता है"। यह प्रणाली के भीतर नेतृत्व को समावेशी शिक्षा की परिभाषा के अनुरूप अपनी भूमिकाएँ निभाने का निर्देश देता है, जो दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल द्वारा समर्थित है। अधिनियम इस क्षेत्र के नेताओं के लिए उपाय भी प्रदान करता है कि कैसे प्रणाली के विभिन्न स्तरों पर समावेशी शिक्षा को बढ़ावा दिया जा सकता है और सुगम बनाया जा सकता है।

समग्र शिक्षा भारत का प्रमुख शिक्षा कार्यक्रम है जो राज्य/केंद्र शासित प्रदेश स्तर पर एक एकल राज्य कार्यान्वयन समिति के माध्यम से पूरे देश में कार्यान्वित किया जाता है। इसमें तीन पूर्ववर्ती योजनाएँ शामिल हैं:

1. सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए)
2. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान
3. शिक्षक शिक्षा

ये योजनाएँ सतत विकास लक्ष्य 4 के लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में देश की प्राथमिक रणनीतियाँ थीं। शिक्षा मंत्रालय (MoE) सार्वभौमिक पहुँच, समानता और गुणवत्ता के साथ-साथ शिक्षा का व्यवसायीकरण और शिक्षक-शिक्षा संस्थानों को मजबूत बनाने की परिकल्पना करता है। समावेशी शिक्षा, समग्र शिक्षा के अंतर्गत चिन्हित प्रमुख हस्तक्षेपों में से एक है।

समग्र शिक्षा के अंतर्गत शून्य-अस्वीकृति नीति अपनाई गई है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि कोई भी बच्चा पीछे न छूटे। दिव्यांग छात्रों के लिए शैक्षिक विकल्पों, शिक्षण सहायक सामग्री और औजारों, गतिशीलता सहायता और अन्य सहायक सेवाओं की एक श्रृंखला उपलब्ध कराई जा रही है। इसमें मुक्त शिक्षण प्रणाली और मुक्त विद्यालयों के माध्यम से शिक्षा, वैकल्पिक स्कूली शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा, विशेष विद्यालय, जहाँ आवश्यक हो, गृह आधारित शिक्षा, भ्रमणशील शिक्षक मॉडल, उपचारात्मक शिक्षण, अंशकालिक कक्षाएँ, समुदाय आधारित पुनर्वास (सीबीआर) और व्यावसायिक शिक्षा शामिल है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020, समावेशी शिक्षा के संबंध में आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम के प्रावधानों की पुष्टि करती है। यह नीति व्यापक समावेशन के दृष्टिकोण को अपनाती है और इसका उद्देश्य सभी के लिए शिक्षा प्राप्त करना है, विशेष रूप से सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समूहों के बहिष्कार को दूर करना है।

नीति में प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक दिव्यांग बच्चों को शामिल करने के महत्व पर जोर दिया गया है, जिसमें सहायक उपकरण और शिक्षण एवं अधिगम सामग्री का प्रावधान भी शामिल है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 ने दिव्यांग बच्चों को "बुनियादी स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक नियमित स्कूली शिक्षा प्रक्रिया में पूरी तरह से भाग लेने" में सक्षम बनाने के लिए एक निर्देश जारी किया है। यह नीति दिव्यांगता-समावेशी शिक्षण वातावरण विकसित करने के लिए स्कूलों में आवश्यक सहयोग के संबंध में निर्देश और दिशानिर्देश प्रदान करती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में स्कूल क्लस्टरों के विकास के लिए प्रस्तावित संरचना स्कूलों के एक समूह के भीतर अच्छे नेतृत्व और शिक्षण प्रथाओं को साझा करने को प्रोत्साहित करती है, जिससे संभवतः शिक्षकों और दिव्यांग बच्चों को अतिरिक्त सहायता मिल सकती है।

एनईपी 2020 का प्रस्ताव है कि स्कूलों को एक क्लस्टर में संरचित किया जाना चाहिए, जहाँ तक संभव हो, "क्लस्टर में स्कूलों के अधिक प्रभावी कामकाज, समन्वय, नेतृत्व, शासन और प्रबंधन के लिए"। स्कूलों को एक क्लस्टर में संरचित करके, स्कूल संसाधनों और शिक्षण-शिक्षण सामग्री को साझा करने, दिव्यांग बच्चों का समर्थन करने और प्रबंधन और शासन की एक सहभागी और समुदाय-आधारित पद्धति को नियोजित करने में सक्षम होंगे।

10.8 पारिवारिक, सामुदायिक सहभागिता और साझेदारियाँ (Family, Community Engagement and Partnerships)

कुछ नीतियों और कार्यक्रमों में परिवारों और समुदायों की भागीदारी को प्राथमिकता दी जाती है। दिव्यांग बच्चों के परिवारों और उनके समुदायों की सक्रिय भागीदारी और साझेदारी कुछ राष्ट्रीय नीतियों और कार्यक्रमों में मौजूद है।

समग्र शिक्षा, दिव्यांगता और पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना, स्कूल में दिव्यांग बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित करती है तथा सामुदायिक गतिशीलता और अपने बच्चे की देखभाल और शिक्षा प्रदान करने में माता-पिता और परिवारों की क्षमता निर्माण पर जोर देती है।

एनईपी 2020 सभी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने की प्रमुख रणनीतियों की पहचान करती है। यह माध्यमिक स्तर पर दिव्यांगजनों की समावेशी शिक्षा³⁸ और समग्र शिक्षा कार्यक्रमों के साथ मिलकर एकीकरण से समावेशन की ओर संक्रमण की दिशा में कार्य करती है। इन रणनीतियों में आवश्यकता-आधारित शैक्षिक और दिव्यांगता-संबंधी सहायता प्रदान करने में समुदायों के साथ सार्थक साझेदारी बनाना शामिल है। इसके साथ ही, सामान्य समुदाय और शिक्षा एवं स्वास्थ्य हितधारकों के बीच जागरूकता विकसित करने और दिव्यांग बच्चों के समावेशन के लिए एजेंसी और जवाबदेही स्थापित करने की आवश्यकता है।

एनईपी 2020 के मूलभूत सिद्धांतों में से एक भारत के सभी नागरिकों के लिए शिक्षा सुनिश्चित करने हेतु निजी और सामुदायिक भागीदारी में निवेश और सुविधा प्रदान करना है। यह नीति समुदायों को ऐसे शिक्षा कार्यक्रमों में भागीदार बनने के लिए प्रोत्साहित करती है जो शिक्षार्थियों का समर्थन करेंगे, जैसे कि सहकर्मि शिक्षण और साक्षरता एवं संख्यात्मकता परियोजनाओं में स्वयंसेवा।

सरकार की दिव्यांगजन सहायता योजना नागरिक समाज संगठनों (सीएसओ) को वित्त पोषण एजेंसियों के साथ साझेदारी करने और कार्यान्वयनकर्ता के रूप में कार्य करने की अनुमति देती है। परियोजनाएँ दृष्टि, श्रवण, गति, संज्ञानात्मक और बहु-दिव्यांगता वाले व्यक्तियों के लिए सुगम्यता उपकरणों और उपकरणों की खरीद और वितरण पर केंद्रित हैं।

हालाँकि, भागीदारी से संबंधित नीतिगत प्रावधानों का क्रियान्वयन सीमित है, क्योंकि आँकड़े बताते हैं कि दिव्यांग बच्चों और उनके माता-पिता की शिक्षा, नीति नियोजन और कार्यक्रमों में बहुत कम भागीदारी होती है। कुछ मामलों में, नीतियों और कार्यक्रमों में ही बच्चों और परिवार की भागीदारी के बारे में मिश्रित संदेश होते हैं। उदाहरण के लिए, समग्र शिक्षा में कहा गया है कि किसी बच्चे के लिए

उपयुक्त शैक्षिक प्रावधान का निर्धारण करने के लिए डॉक्टरों और विशेषज्ञों की एक पेशेवर टीम द्वारा औपचारिक और कार्यात्मक मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

नागरिक समाज संगठन, दिव्यांग व्यक्तियों के संगठन (ओपीडी) और अन्य विकास साझेदार परिवार और समुदाय की भागीदारी को बढ़ावा देते हैं।

कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विकास संगठन स्थानीय समुदायों और दिव्यांग बच्चों के परिवारों के साथ मिलकर दिव्यांगता-समावेशी कार्यक्रमों और संबंधित सेवाओं में सहयोग करते हैं। भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) और राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के बीच साझेदारी से एक विशेष शिक्षा पाठ्यक्रम का विकास हुआ है जिसे शिक्षक तैयारी कार्यक्रमों में एकीकृत किया गया है। दिव्यांग बच्चों को पढ़ाने के प्रति शिक्षकों की धारणा पर शोध में पाया गया कि उनका नकारात्मक रवैया बच्चों की विविध आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त शिक्षण वातावरण प्रदान करने की उनकी क्षमता की कमी से उपजा है।

यह धारणा कि दिव्यांग बच्चों की विशेष आवश्यकताएं होती हैं जिनके लिए विशेष शिक्षण तकनीकों की आवश्यकता होती है, 'नियमित' शिक्षकों को यह विश्वास करने के लिए प्रोत्साहित करती है कि वे दिव्यांग बच्चों और समावेशी कक्षाओं में सभी प्रकार के शिक्षार्थियों को पढ़ाने में सक्षम नहीं हैं। समावेशी कक्षाओं में दिव्यांग बच्चों को पढ़ाने के नज़रिए में बदलाव के लिए शिक्षक विकास के तरीकों पर अलग नज़रिया अपनाना ज़रूरी होगा। जिन शिक्षकों को प्रासंगिक और प्रभावी प्रशिक्षण के ज़रिए सहयोग दिया जाता है और समावेशी शिक्षा प्रदान करने में भागीदार बनाया जाता है, वे सशक्त शिक्षक होते हैं जो विविध शिक्षार्थियों को पढ़ाने का काम बखूबी कर पाएँगे।

राज्य सरकारों, स्वायत्त निकायों और स्वयंसेवी संगठनों के माध्यम से कार्यान्विता विशेष और सामान्य शिक्षकों के क्षमता निर्माण, शिक्षण सामग्री और सुगम्यता उपकरण, परिवहन और बुनियादी ढाँचे में सुधार के लिए इन एजेंसियों द्वारा पूर्णतः वित्त पोषित और समर्थित कार्य किए गए। 15-18 वर्ष की आयु के दिव्यांग बच्चों की शिक्षा पर पूर्ण अनुदान दिया गया।

10.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा के विभिन्न प्रावधानों ओर शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों के विषय में जानकारी ओर ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे। दिव्यांगों के लिए शिक्षा कानून व अन्य प्रावधान, दिव्यांग व्यक्तियों के परिवारों के सामने आने वाली चुनौतियाँ ओर नीति और विधायी ढांचा साथ ही पारिवारिक, सामुदायिक सहभागिता और साझेदारियों की भूमिका से आप अवगत हो चुके होंगे। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के अनुसार, बहुविध या गंभीर दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए घर

पर शिक्षा की सिफारिश की जाती है। समग्र शिक्षा, दिव्यांगता और पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना, स्कूल में दिव्यांग बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित करती है तथा सामुदायिक गतिशीलता और अपने बच्चे की देखभाल और शिक्षा प्रदान करने में माता-पिता और परिवारों की क्षमता निर्माण पर जोर देती है।

एनईपी 2020 सभी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने की प्रमुख रणनीतियों की पहचान करती है। यह माध्यमिक स्तर पर दिव्यांगजनों की समावेशी शिक्षा³⁸ और समग्र शिक्षा कार्यक्रमों के साथ मिलकर एकीकरण से समावेशन की ओर संक्रमण की दिशा में कार्य करती है। इन रणनीतियों में आवश्यकता-आधारित शैक्षिक और दिव्यांगता-संबंधी सहायता प्रदान करने में समुदायों के साथ सार्थक साझेदारी बनाना शामिल है। इसके साथ ही, सामान्य समुदाय और शिक्षा एवं स्वास्थ्य हितधारकों के बीच जागरूकता विकसित करने और दिव्यांग बच्चों के समावेशन के लिए एजेंसी और जवाबदेही स्थापित करने की आवश्यकता है।

10.10 स्व मूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

10.3 (1) नीति निर्देशक, (2) विशेष स्कूलों

10.5 (1) 14 वर्ष, (2) गुणवत्ता

10.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

- https://www.worldwidejournals.com/paripex/recent_issues_pdf/2015/May/educational-rights-of-persons-with-disabilities-the-indian-scenario_May_2015_0138076845_4010292.pdf
- <https://education.vikaspedia.in/viewcontent/education/parents-corner/guidelines-for-parents-of-children-with-disabilities/legal-rights-of-the-disabled-in-india?lgn=en#section3>
- <https://edeq.stanford.edu/sections/section-3-equality-opportunity-and-education/disability>

-
- <https://www.right-to-education.org/issue-page/marginalised-groups/persons-disabilities>
 - <https://www.right-to-education.org/issue-page/marginalised-groups/persons-disabilities>
 - https://journals.lww.com/ijcm/fulltext/2024/49040/beyond_barriers__addressing_challenges_and.5.aspx
 - <https://www.unicef.org/rosa/media/16996/file/Country%20Profile%20-%20India.pdf>
-

10.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा के विभिन्न प्रावधानों के विषय में आप क्या जानते हैं? विस्तार से बताइये।
2. दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा के लिए बनाई गयी नीतियों और विधायी ढांचों का उल्लेख कीजिये?
3. दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा के लिए पारिवारिक, सामुदायिक सहभागिता और साझेदारियाँ का वर्णन कीजिये?

 इकाई 11

सुगम्यता: आवश्यकता और महत्व

1 प्रस्तावना (Introduction)

11.2 उद्देश्य (Objectives)

11.3 सुगम्यता: आवश्यकता और महत्व (Need and Significance of Accessibility)

11.4 निर्मित वातावरण में सुगम्यता (Accessibility in Built Environment)

11.4.1 कक्षा (Classroom)

11.4.2 प्रयोगशाला (Laboratories)

11.4.3 खेल का मैदान (Playground)

11.4.4 कैंटीन (Canteen)

11.4.5 विद्यालय के अन्य क्षेत्र (Other School Areas)

11.5 संचार, पठन और लेखन में सुगम्यता (Accessibility in Communication, Reading and Writing)

11.6 शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अनुकूलन एवं युक्तिसंगत सुविधा (Adaptation and Reasonable Accommodation in Teaching-Learning Process)

11.7 शिक्षण संसाधन और सहयोग (Learning Resources and Support)

11.7.1 मुद्दे और चुनौतियाँ (Identifying Issues and Challenges)

11.7.2 सहयोगी प्रणाली (Support Systems)

11.8 सारांश (Summary)

11.9 शब्दावली (Glossary)

11.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न (Self-Assessment Questions)

11.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (References)

11.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

11.1 प्रस्तावना

सुगम्यता (Accessibility) एक समावेशी समाज बनाने की महत्वपूर्ण अवधारणा है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि हर व्यक्ति—चाहे उसकी शारीरिक, संवेदी या संज्ञानात्मक क्षमता कैसी भी हो—शिक्षा, रोजगार और सामाजिक जीवन में पूरी तरह भाग ले सके। सुगम्यता का अर्थ केवल भौतिक संरचनाएँ जैसे रैम्प या लिफ्ट नहीं है, बल्कि इसे सूचना,

संचार, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया और डिजिटल प्लेटफार्मों तक भी विस्तारित किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में सुगम्यता की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है, क्योंकि विद्यालय समान अवसरों की नींव होते हैं। यदि सुगम वातावरण उपलब्ध नहीं है तो दिव्यांग बच्चों के लिए सीखने और विकास की प्रक्रिया बाधाओं से भरी हो जाती है। इसलिए, सुगम्यता केवल दान या सहानुभूति का विषय नहीं, बल्कि यह अधिकार और न्याय का प्रश्न है। यह अंतरराष्ट्रीय संधियों जैसे UNCRPD (2006) और भारत के दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम (2016) के अनुरूप है। इस प्रकार, सुगम्यता समावेशी शिक्षा का आधार है, जो हर शिक्षार्थी को गरिमा और स्वतंत्रता के साथ अपनी क्षमताओं को विकसित करने का मौका देती है।

11.2 उद्देश्य

इस अध्याय का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- सुगम्यता (Accessibility) की आवश्यकता और महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
- विद्यालय के विभिन्न क्षेत्रों जैसे कक्षा, प्रयोगशाला, खेल का मैदान, कैंटीन एवं अन्य स्थानों में सुगम्यता की पहचान कर सकेंगे।
- संचार, पठन-लेखन तथा शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में आवश्यक अनुकूलन और युक्तिसंगत सुविधा को समझ सकेंगे।
- शिक्षण संसाधनों, सहायता प्रणालियों तथा सहयोगी कारकों (अभिभावक, शिक्षक, समुदाय, एनजीओ) की भूमिका को जान सकेंगे।
- समावेशी शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु सुगम्यता संबंधी चुनौतियों का विश्लेषण और समाधान सुझा सकेंगे।

11.3 सुगमता: आवश्यकता और महत्व

सुगम्यता (Accessibility) समावेशी शिक्षा का प्रमुख आधार है। यदि शिक्षा को सच में सभी के लिए समान अवसर का माध्यम बनाना है तो यह जरूरी है कि हर बच्चा, चाहे वह दिव्यांग हो या सामान्य, बिना किसी रुकावट के शिक्षा तक पहुँच सके। सुगमता केवल विद्यालय के भवन में रैम्प, रेलिंग या लिफ्ट जैसी सुविधाओं तक नहीं सीमित है, बल्कि यह शैक्षिक सामग्रियों, संचार विधियों, मूल्यांकन प्रक्रियाओं और सामाजिक दृष्टिकोणों को भी शामिल करती है।

सुगमता की आवश्यकता (Need Of Accessibility)

शिक्षा का उद्देश्य तभी पूरा होता है जब सभी बच्चे अपनी क्षमता और आवश्यकताओं के अनुसार सीख सकें। यदि दिव्यांग बच्चों के लिए अनुकूल वातावरण, संसाधन और तकनीक उपलब्ध नहीं होतीं, तो वे शिक्षा से वंचित रह जाएंगे। इसलिए, सुगमता केवल एक सुविधा नहीं, बल्कि एक अधिकार है।

- शिक्षा का सार्वभौमिक अधिकार – सभी बच्चों को शिक्षा का समान अवसर प्राप्त होना चाहिए।
- मुख्यधारा में समावेश – दिव्यांग बच्चे सामान्य बच्चों के साथ पढ़ाई करें और सामाजिक सहभागिता को बढ़ावा दें।
- वंचित होने से रोकना – संसाधनों या बाधाओं की कमी के कारण कोई बच्चा शिक्षा से बाहर न रह जाए।
- आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास – आसान परिवेश बच्चे को स्वावलंबी और आत्मविश्वासी बना देता है।
- समानता और न्यायपूर्ण समाज – सुगमता सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक सिद्धांतों को जीवंत बनाती है।

सुगमता का महत्व (Importance Of Accessibility)

शिक्षा का उद्देश्य तब सफल होता है जब प्रत्येक बच्चा अपनी योग्यता और आवश्यकताओं के अनुसार अध्ययन कर सके। अगर दिव्यांग बच्चों के लिए अनुकूल माहौल, साधन और तकनीक नहीं मिलेंगे तो वे शिक्षा से रह जाएंगे। इसीलिए सुगमता सिर्फ एक सहूलियत नहीं बल्कि एक अधिकार है।

- शिक्षा का अधिकार सार्वभौमिक है – सभी बच्चों को शिक्षा पाने का समान अवसर होना चाहिए।
- मुख्यधारा में समावेश – दिव्यांग बच्चे सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा प्राप्त करें और सामाजिक सहभागिता को बढ़ावा दें।
- वंचित होने से रोकना – संसाधनों या बाधाओं की कमी के कारण कोई बच्चा शिक्षा से न रह जाए।
- आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास – सहज वातावरण बच्चों को स्वतंत्र और आत्मविश्वासी बनाता है।
- समानता और न्यायपूर्ण समाज – सुगमता समाज में न्याय और लोकतांत्रिक सिद्धांतों को मूर्त रूप देती है।

मुख्य तत्व (Essential Elements)

1. भौतिक पहुँच योग्यता (Physical Accessibility): विद्यालय की इमारतों में रैम्प, रेलिंग, लिफ्ट, टैक्टाइल पथ और अवरोध-मुक्त आधारभूत संरचना।
2. डिजिटल पहुँच (Digital Accessibility): स्क्रीन रीडर, ई-बुक्स, ऑडियो-बुक्स, मोबाइल एप्स और एक्सेसिबल वेबसाइटें।
3. शिक्षण सामग्री (Accessible Learning Resources): ब्रेल किताबें, बड़े फॉन्ट वाली पुस्तकें, ध्वनि सामग्री, संकेत भाषा वीडियो।

-
4. संचार की सुगमता (Accessibility of Communication): सांकेतिक भाषा, सुलभ भाषा (Easy-to-Read) सामग्री, सहायक उपकरण।
 5. मूल्यांकन प्रक्रिया (सुगम मूल्यांकन): परीक्षा के लिए अतिरिक्त समय, साइब (सहायक लेखक), वैकल्पिक प्रश्न-पत्र प्रारूप।
 6. सामाजिक दृष्टिकोण (व्यवहारिक पहुँच): शिक्षकों, साथियों और समुदाय में सहानुभूति और सकारात्मक नजरिया विकसित करना।
 7. परिवहन पहुँच (Transport Access): विद्यालय तक पहुँचना सुगम और सुरक्षित परिवहन माध्यम।
 8. नीति और कानूनी सहायता (Policy & Legal Assistance): भारत: दिव्यांग अधिकार अधिनियम 2016 (RPwD अधिनियम 2016), अंतर्राष्ट्रीय: संयुक्त राष्ट्र विकलांगता अधिकार संधि (UNCRPD, 2006) है
 9. समान अवसर (Equitable Opportunities): हर बच्चे को समान रूप से शिक्षा, खेल, सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने का मौका मिले।
 10. स्वाभिमान और आत्मनिर्भरता: सुखद माहौल बच्चों को स्वतंत्र और समाज का मानद हिस्सा बनाता है
- सुगमता केवल तकनीकी या भौतिक सुख-साधन नहीं है, बल्कि यह एक मानवाधिकार है। यदि शिक्षा को वास्तव में समावेशी और समान बनाना है तो हर विद्यालय, शैक्षणिक सामग्री और मूल्यांकन प्रणाली को सहज बनाना आवश्यक है। जब दिव्यांग बच्चे भी बिना किसी रुकावट के सीखेंगे, भागीदारी करेंगे और आत्मनिर्भर बनेंगे, तभी शिक्षा का सही उद्देश्य और समाज का लोकतांत्रिक सपना साकार होगा।
-

11.4 निर्मित वातावरण में सुगम्यता (Accessibility in Built Environment)

विद्यालय का बना हुआ माहौल (Built Environment) शिक्षा की प्रक्रिया का एक आवश्यक अंग है। यदि विद्यालय का भवन और उसकी सुविधाएँ सभी बच्चों, खासकर दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए पहुँचनीय नहीं होंगी, तो समावेशी शिक्षा का विचार अधूरा रह जाएगा। सुगम वातावरण का अर्थ सिर्फ भवन में प्रवेश की सुविधा प्रदान करना नहीं है, बल्कि विद्यालय के हर क्षेत्र को ऐसा बनाना है जहाँ हर बच्चा स्वतंत्र रूप से जा सके, भाग ले सके और सुरक्षित महसूस कर सके।

11.4.1 कक्षा (Classroom):

कक्षा में सुगम्यता का तात्पर्य है— चौड़े दरवाजे, उचित प्रकाश, सही बैठने की व्यवस्था, रैम्प या ढलान, दृष्टिहीन छात्रों के लिए ब्रेल/बड़े अक्षरों में सामग्री, और श्रवण बाधित छात्रों के लिए ऑडियो-विजुअल संसाधन।

कक्षा अध्ययन की बुनियादी इकाई है। यहाँ आसानी का खास ध्यान दिया जाना चाहिए।



दरवाजे और गलियारे इतने विस्तृत हों कि व्हीलचेयर का आना-जाना सरल हो।

पर्याप्त प्राकृतिक रोशनी और वायु संचार उपलब्ध हो।

दृष्टिहीन छात्रों के लिए ब्रेल पुस्तकें, ऑडियो सामग्री और बड़े फॉन्ट में अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई जाए।

श्रवण बाधित छात्रों के लिए इंडक्शन

लूप, उपशीर्षक या संकेत भाषा दुभाषिया उपलब्ध रहें।

फर्नीचर ऐसा होना चाहिए कि वह हल्का और आसानी से हलचल करने योग्य हो, ताकि आवश्यकता पर बैठने की योजना को बदला जा सके।

11.4.2 प्रयोगशालाएँ (Laboratories):

प्रयोगशालाओं में उपकरण इस तरह होने चाहिए कि व्हीलचेयर उपयोगकर्ता उन्हें आसानी से इस्तेमाल कर सकें। टेबल की ऊँचाई उपयुक्त हो और दृष्टिहीन छात्रों के लिए स्पर्शीय (tactile) लेबल बनाए जाएँ।

विज्ञान प्रयोगशालाएँ विद्यार्थियों की प्रायोगिक ज्ञान को बढ़ाती हैं।

- टेबल और कार्यक्षेत्र की ऊँचाई इस प्रकार होनी चाहिए कि व्हीलचेयर उपयोगकर्ता सहजता से काम कर सकें।

- उपकरणों पर स्पर्शीय (Tactile) नामपट और संकेतक लगे हों।

- दृष्टिहीन छात्रों के लिए वाणी वाले उपकरण या ऑडियो मार्गदर्शक का उपयोग किया जाए।



- सुरक्षा यंत्र (जैसे फायर अलार्म) ध्वनि व प्रकाश दोनों तरीकों से संचालित हों।

11.4.3 खेल का स्थान (Play Area):

खेल बच्चों के शारीरिक और सामूहिक विकास के लिए अनिवार्य हैं। स्थान पर अवरोध-मुक्त रास्ते, स्पर्श-संकेत और उचित खेल सामग्री प्रदान की जानी चाहिए।

खेल छात्रों के शारीरिक और सामाजिक विकास के लिए आवश्यक होते हैं।



मैदान तक पहुँचने के लिए बिना रुकावट के रास्ते बनाए जाएँ।

खेल सामग्री ऐसी हो जो सभी बच्चे इस्तेमाल कर सकें, जैसे—स्पर्शीय गेंदें, हल्के उपकरण।

दृष्टिहीन बच्चों के लिए श्रवण

आधारित खेल सामग्री प्रदान की जाए।

मैदान में सुरक्षा हेतु रेलिंग, फर्श पर निशान और गाइड पथ स्थापित किए जाएँ।

11.4.4 कैंटीन (Canteen):

कैंटीन में बैठने की उचित व्यवस्था, रैम्प, विस्तृत मार्ग और सहज भुगतान प्रणाली (जैसे डिजिटल या वॉइस-आधारित सहायता) होनी चाहिए।

कैंटीन छात्रों के लिए एक सामुदायिक स्थान है, जहाँ भोजन और सामाजिक गतिविधियाँ एक साथ होती हैं।

- कैंटीन तक पहुँचने के लिए चौड़े रास्ते और रैम्प उपलब्ध हों।

- बैठने की व्यवस्था कष्टमुक्त और सभी के लिए उपलब्ध हो।

- दृष्टिहीन छात्रों के लिए मेन्यू ब्रेल और ऑडियो स्वरूप में उपलब्ध कराना चाहिए।

- भुगतान की प्रक्रिया डिजिटल और वॉइस-आधारित हो, ताकि यह सभी के लिए आसान हो सके।



11.4.5 विद्यालय के अन्य स्थान:

शौचालय, पुस्तकालय, प्रशासनिक कक्ष, सीढ़ियाँ और गलियारे भी विकलांगता के अनुकूल (barrier-free) होना चाहिए। संकेतक चिन्ह (signage) स्पष्ट, बड़े अक्षरों और ब्रेल में उपस्थित हों।

विद्यालय के अन्य हिस्सों को भी उतना ही सरल बनाना आवश्यक है।

शौचालय – रैंप, चौड़े दरवाजे, सहायक रेलिंग और नॉन-स्लिप फर्श होने चाहिये।

पुस्तकालय – पुस्तकालय में ब्रेल किताबें, ऑडियो किताबें, डिजिटल सामग्री और स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर होने चाहिये।

प्रशासनिक कक्ष – अभिभावकों और छात्रों के लिए निर्बाध प्रवेश और प्रतीक्षा क्षेत्र होने चाहिये।

सीढ़ियाँ और कॉरिडोर – रेलिंग, स्पर्शणीय फर्श संकेतक और पर्याप्त रोशनी आनी चाहिए।

संकेतक (Signage) – बड़े अक्षरों, चिह्नों और ब्रेल में उपलब्ध हों।

निर्मित वातावरण में सुगमता सिर्फ दिव्यांग छात्रों के लिए नहीं, बल्कि सभी विद्यार्थियों, शिक्षकों और अभिभावकों के लिए सहूलियत और सुरक्षा सुनिश्चित करती है। यह शिक्षा के सार्वभौमिक अधिकार को साकार करने का एक आवश्यक उपाय है।

मुख्य तत्व (Essential Elements)

- विद्यालय का भवन और सभी क्षेत्र बिना किसी बाधा के (Barrier-free) होना चाहिए।
- कक्षा में सही बैठने की व्यवस्था, रोशनी, रैम्प और सहायक सामग्री की जरूरत है।
- प्रयोगशालाओं में उपकरण और टेबल दिव्यांग विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप हों।
- खेल का मैदान सुरक्षित और सभी बच्चों के लिए फायदेमंद बनाना चाहिए।
- कैंटीन, शौचालय, पुस्तकालय और अन्य स्थलों पर भी पहुँच सुनिश्चित की जानी चाहिए।

11.5 संचार, पठन और लेखन में सुगम्यता (Accessibility in Communication, Reading and Writing)

संकेतक चिन्ह (Signage) विशाल अक्षरों, चित्रों और ब्रेल में उपलब्ध संचार, पठन और लेखन शिक्षा का मुख्य आधार हैं। अगर विद्यार्थी जानकारी तक पहुँचने और अपने विचार प्रस्तुत करने में दिक्कत महसूस करते हैं, तो वे सीखने की प्रक्रिया का पूरा लाभ नहीं उठा पाते। इसीलिए संचार, पठन और लेखन में उपलब्धता (Accessibility) सुनिश्चित करना बहुत आवश्यक है।

1. संचार (Communication):

संचार केवल भाषा तक नहीं सीमित है, बल्कि यह संकेत, प्रतीक, चित्र और तकनीकी उपकरणों का भी उपयोग करता है। श्रवण बाधित छात्रों के लिए सांकेतिक भाषा दुभाषिया, सबटाइटल, कैप्शन और इंडक्शन लूप प्रणाली महत्वपूर्ण हैं। दृष्टिबाधित छात्रों के लिए स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर, ऑडियो सामग्री और स्पर्शीय आकृतियाँ सहायक होती हैं।



2. लेखन (Writing):

लेखन के जरिए छात्र अपनी समझ, ज्ञान और रचनात्मकता को व्यक्त करते हैं। शारीरिक कठिनाई वाले छात्रों के लिए विशेष पेन, ढलवा बोर्ड या कीबोर्ड की सहायता की जा सकती है। दृष्टिहीन विद्यार्थियों के

लिए ब्रेल स्लेट, ब्रेल टाइपराइटर और डिजिटल उपकरण महत्वपूर्ण होते हैं। इसी तरह, श्रवण-बाधित और भाषण-संबंधी समस्याओं वाले छात्रों के लिए वॉइस-टू-टेक्स्ट सॉफ्टवेयर बहुत सहायक होते हैं।

3. पढ़ाई (Reading):

सभी छात्रों के लिए पठन सामग्री उपलब्ध और आसानी से सुलभ होनी चाहिए। दृष्टिहीन छात्रों के लिए ब्रेल किताबें, बड़े अक्षरों में छपी किताबें और ऑडियो पुस्तकें आवश्यक हैं। डिजिटल पठन सामग्री को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए कि वह स्क्रीन रीडर के अनुकूल हो (Accessible PDF, ePub)।



डिस्ट्रिक्सिया या सीखने में कठिनाई वाले छात्रों के लिए सरल भाषा, बड़े फ्रॉन्ट और चित्रात्मक सामग्री लाभदायक होती है।

संचार, पठन और लेखन में सुगम्यता न केवल दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए, बल्कि सभी के लिए शिक्षा को अधिक प्रभावी और सहभागितापूर्ण बनाती है। यह शिक्षा को समान, न्यायसंगत और समावेशी बनाती है।

मुख्य तत्व (Core Elements)

- संचार की सुविधा के लिए सांकेतिक भाषा, उपशीर्षक, इंडक्शन लूप और स्क्रीन रीडर का उपयोग अनिवार्य है।
- पठन सामग्री ब्रेल, बड़े अक्षरों, ऑडियो और डिजिटल रूप में प्रदान की जानी चाहिए।
- लेखन में सहायता के लिए उपकरणों जैसे ब्रेल स्लेट, खास पेन और वॉइस-टू-टेक्स्ट तकनीक का उपयोग किया जाना चाहिए।
- सुगम संचार, पठन और लेखन के माध्यम से विद्यार्थियों का आत्मविश्वास और भागीदारी में वृद्धि होती है।
- यह प्रक्रिया शिक्षा को वैश्विक और समावेशी बनाने में एक महत्वपूर्ण कदम है।

11.6 शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अनुकूलन एवं युक्तिसंगत सुविधा

समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी प्राप्त किया जा सकता है जब शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया सभी विद्यार्थियों की विविध आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित की जाए। इसका तात्पर्य है कि शिक्षक अपनी विधियों, सामग्री, मूल्यांकन और वातावरण में ऐसे परिवर्तन करें ताकि हर बच्चा सहजता से सीखने की प्रक्रिया में संलग्न हो सके।

अनुकूलन (Adaptation):

अनुकूलन का तात्पर्य है शिक्षण के तरीके और सामग्री को इस तरह संशोधित करना कि यह छात्रों की क्षमताओं और आवश्यकताओं के अनुसार हो। जैसे—

- दृष्टिहीन छात्रों के लिए ब्रेल, श्रव्य और स्पर्श योग्य सामग्री का उपयोग।
- श्रवण विकलांग छात्रों के लिए संकेत भाषा, उपशीर्षक और दृश्य केंद्रित शिक्षा।
- शारीरिक रूप से अक्षम छात्रों के लिए अनुकूलित बैठने की व्यवस्था और सहायक उपकरण।
- सीखने में मुश्किल पेश करने वाले छात्रों के लिए आसान भाषा, ज्यादा चित्र और पुनरावृत्ति पर जोर।

युक्तिसंगत व्यवस्थापन (Reasonable Accommodation):

युक्तिसंगत सुविधा का तात्पर्य है कि सभी विद्यार्थियों को शिक्षा में समान अवसर प्रदान करने के लिए आवश्यक संशोधन करना। यह महंगा या जटिल नहीं होना चाहिए, बल्कि व्यावहारिक और अनिवार्य होना चाहिए। उदाहरण के लिए—

- परीक्षा के लिए और समय प्रदान करना।
- सहायक लेखक (Scribe) या पाठक प्रदान करना।
- असाइनमेंट जमा करने के लिए विकल्प के तौर पर ऑडियो/वीडियो माध्यम की अनुमति।
- तकनीकी उपकरणों जैसे स्क्रीन रीडर, वॉइस-टू-टेक्स्ट या स्पीच सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल।

अनुकूलन और तार्किक साधनों से विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, सक्रिय भागीदारी और समान अवसर की अनुभूति उत्पन्न होती है। यह प्रक्रिया शिक्षा को केवल ज्ञान का साधन नहीं बनाती, बल्कि जीवन कौशल और सामाजिक प्रतिभागिता का अवसर भी प्रस्तुत करती है।

मुख्य बिंदु(Important Points):

अनुकूलन का लक्ष्य छात्रों की विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण सामग्री और विधियों को अनुकूलित करना है।

1. दृष्टिहीन, श्रवणहीन और शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण छात्रों के लिए विशिष्ट औजारों और तरीकों का उपयोग करना जरूरी है।
2. युक्तिसंगत सुविधा का तात्पर्य है शिक्षा में समान अवसर प्रदान करने के लिए आवश्यक और व्यावहारिक समायोजन करना।
3. परीक्षा, असाइनमेंट और मूल्यांकन में लचीलापन बनाए रखना भी समझदारी से किए जाने वाली सुविधा का एक भाग है।
4. इन कदमों से शिक्षा को और अधिक समावेशी, प्रभावी और न्यायपूर्ण बनाया जा सकता है।

11.7 शिक्षण संसाधन और सहयोग (Learning Resources and Support)

समावेशी शिक्षा की सफलता के लिए केवल उपयुक्त वातावरण ही नहीं, बल्कि सही शिक्षण संसाधन और सहयोगी प्रणाली भी जरूरी हैं। शिक्षण संसाधनों का परिचय उन सभी साधनों से है, जिनकी मदद से छात्रों की विभिन्न जरूरतों को पूरा किया जा सके। सहयोग का अर्थ अभिभावकों, शिक्षकों, समुदाय और विभिन्न संगठनों द्वारा प्रदान की जाने वाली मदद से है। इन दोनों का समन्वय ही शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी और सभी के लिए सुलभ बनाता है।

11.7.1 मुद्दे और चुनौतियाँ (Identifying Issues and Challenges)

हालांकि हर बच्चे को शिक्षा का अधिकार समान रूप से मिलता है, फिर भी संसाधनों और सहायता की उपलब्धता में कई बाधाएँ नजर आती हैं।

सीमित संसाधन: अनेक विद्यालयों में ब्रेल किताबें, ऑडियो सामग्री, स्क्रीन रीडर, और सांकेतिक भाषा दुर्भाषियाँ जैसी सुविधाएँ नहीं होतीं।

प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की कमी: अधिकांश शिक्षक विशेष शिक्षण तकनीकों और सहायक संसाधनों के उपयोग में प्रशिक्षित नहीं होते।

आर्थिक चुनौतियाँ: सहायक तकनीक अक्सर लागतदार होती है, जिसे हर परिवार या स्कूल सहन नहीं कर सकता।

जागरूकता की कमी: माता-पिता और समुदाय के लोगों में समावेशी शिक्षा के महत्व और संसाधनों के बारे में जानकारी की कमी होती है।

सामाजिक नजरिया: दिव्यांग छात्रों को प्रायः सहानुभूति या दया के नजरिए से देखा जाता है, जिससे उनके आत्मविश्वास पर नकारात्मक असर होता है।

- इन चुनौतियों को दूर किए बिना समावेशी शिक्षा का लक्ष्य अधूरा रहेगा।

11.7.2 सहयोगी प्रणाली (Support Systems)

सफल समावेशी शिक्षा के लिए कई-तरफ़ीय सहयोग की आवश्यकता होती है।

1. अभिभावक (Parents): बच्चों की आवश्यकताओं को सबसे अच्छे तरीके से अभिभावक पहचानते हैं। वे घर में शैक्षिक संसाधनों का लाभ उठाने, भावनात्मक समर्थन प्रदान करने और स्कूल के साथ लगातार संवाद बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

2. शिक्षक (Teachers): शिक्षक केवल जानकारी देने वाले नहीं, बल्कि मार्गनिर्देशन करने वाले भी होते हैं। वे शिक्षण सामग्री को समायोजित करते हैं, सहायक उपकरणों का इस्तेमाल कराते हैं और कक्षा का माहौल समावेशी बनाते हैं।

3. समुदाय (Community): समुदाय समावेशी शिक्षा हेतु एक सहायक वातावरण बनाता है। स्थानीय संसाधन, स्वैच्छिक सेवाएं और सामाजिक सहयोग बच्चों की शिक्षा को अधिक कारगर बनाते हैं।

4. गैर-सरकारी संगठन (NGOs): अनेक NGOs ब्रेल किताबें, सहायक उपकरण, प्रशिक्षित शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रम प्रदान करते हैं। ये संस्थाएँ सरकार और विद्यालयों के बीच का कड़ी का काम करती हैं।

5. सरकारी और नीतिगत सहायता: सरकारी कार्यक्रम, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016, आरटीई अधिनियम और कई समावेशी शिक्षा प्रयास संसाधनों और सहयोग को औपचारिक ढांचा देते हैं।

शिक्षण संसाधन और सहयोग केवल शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के सहायक तत्व नहीं, बल्कि उसकी नींव हैं। संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित मानव संसाधनों की अनुपस्थिति और सामाजिक दृष्टिकोण जैसी चुनौतियों का समाधान पाने के लिए अभिभावकों, शिक्षकों, समुदाय, NGOs और सरकार की साझेदारी अनिवार्य है। यही सहयोग शिक्षा को वास्तव में समावेशी और न्यायपूर्ण स्थापित करेगा।

मुख्य तत्व (Main Elements)

- शिक्षण सामग्री और सहयोग समावेशी शिक्षा का आधार हैं।
- मुख्य समस्याएँ हैं – संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित अध्यापकों की अनुपलब्धता, वित्तीय कठिनाइयाँ और सामाजिक मान्यताएँ।
- अभिभावक, शिक्षक, स्थानीय समुदाय और गैर सरकारी संगठन संसाधन प्रदान करने और सहयोग करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- सरकारी योजनाएँ और नीतियाँ इस प्रक्रिया को ढाँचा समर्थन देते हैं।
- शिक्षा को प्रभावशाली, न्यायसंगत और समावेशी बनाने के लिए संसाधनों और सहयोग का समन्वय आवश्यक है।

11.8 सारांश (Summary)

इस अध्याय में समावेशी शिक्षा में सुगम्यता और सहयोग की आवश्यकता पर विचार किया गया है। प्रस्तावना में यह बताया गया है कि शिक्षा का अर्थ तब ही होता है जब सभी बच्चे, चाहे वे सामान्य हों या दिव्यांग, समान अवसरों और सुविधाओं के साथ सीखने की प्रक्रिया में भाग ले सकें। इसके बाद उद्देश्यों के माध्यम से विद्यार्थियों को यह मार्गदर्शन किया गया कि वे सुगम्यता की आवश्यकता, विद्यालयी माहौल में उसकी भूमिका, संचार और पठन-लेखन में आसानी, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अनुकूलन और सहयोग प्रणाली के महत्व को समझ सकें।

सुगम्यता की आवश्यकता और महत्व को उजागर करते हुए यह स्पष्ट किया गया कि यह केवल भवनों में रैम्प और लिफ्ट लगाने तक नहीं सीमित है, बल्कि यह शिक्षण सामग्री, संचार उपकरण, तकनीकी संसाधन और सामाजिक दृष्टिकोण तक फैली हुई है। यह आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास और समानता को बढ़ावा देती है तथा शिक्षा को एक अधिकार के रूप में स्थापित करती है। इसके बाद विद्यालय के निर्मित

वातावरण जैसे कक्षा, प्रयोगशाला, खेल का मैदान, कैटीन और अन्य स्थानों में सुगम व्यवस्था की आवश्यकता पर जोर दिया गया, जिससे हर बच्चा सुरक्षित और स्वतंत्र रूप से शिक्षा का हिस्सा बन सके।

संचार, पठन और लेखन में सुगम्यता पर चर्चा करते हुए बताया गया कि दृष्टिहीन विद्यार्थियों के लिए ब्रेल, ऑडियो बुक्स और स्पर्शीय सामग्री, श्रवणविहीन विद्यार्थियों के लिए सांकेतिक भाषा और सबटाइटल जैसी सुविधाएँ आवश्यक हैं, जबकि शारीरिक रूप से अक्षम विद्यार्थियों के लिए सहायक उपकरण जरूरी हैं। इसी तरह, शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में अनुकूलन और युक्तिसंगत सुविधाओं का महत्व समझाया गया, जिसमें ब्रेल पुस्तकों का उपयोग, सहायक लेखक की नियुक्ति, परीक्षा में अतिरिक्त समय देने और वैकल्पिक असाइनमेंट प्रस्तुत करने जैसी व्यवस्थाएँ शामिल हैं।

अध्याय में यह भी बताया गया कि बिना शिक्षण संसाधनों और सहयोग के समावेशी शिक्षा अधूरी रहती है। संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, आर्थिक समस्याएँ और सामाजिक जैसी दृष्टिकोण मुसीबतें इस ओर अवरोध उत्पन्न करती हैं। इन मुसीबतों का हल माता-पिता, शिक्षक, समाज, गैर-सरकारी संस्थाएँ और सरकार की सक्रिय सहभागिता से ही संभव हो सकता है।

अंततः यह स्पष्ट होता है कि सुगम्यता और सहयोग केवल सुविधा नहीं, बल्कि शिक्षा का मूलभूत अधिकार है। जब विद्यालय का माहौल, संचार प्रणाली, शिक्षण तकनीक और सहयोगी तंत्र मिलकर कार्य करते हैं, तभी शिक्षा वास्तव में समावेशी और निष्पक्ष होती है।

11.9 शब्दावली (Glossary)

सुगम्यता (Accessibility): ऐसा वातावरण या व्यवस्था जिसमें प्रत्येक व्यक्ति, विशेषकर दिव्यांगजन, बिना किसी बाधा के भाग ले सके और अपनी आवश्यकताओं के अनुसार सुविधाओं का उपयोग कर सके।

अनुकूलन (Adaptation): शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में किया गया वह परिवर्तन जिससे विविध क्षमताओं वाले विद्यार्थी आसानी से सीख सकें।

युक्तिसंगत सुविधा (Reasonable Accommodation): दिव्यांग विद्यार्थियों को शिक्षा में भाग लेने के लिए दी जाने वाली अतिरिक्त और आवश्यक सुविधा, जैसे—परीक्षा में अतिरिक्त समय या सहायक लेखक।

निर्मित वातावरण (Built Environment): विद्यालय के वे भौतिक स्थान जैसे कक्षा, प्रयोगशाला, खेल का मैदान, कैटीन और भवन की संरचनाएँ, जहाँ विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते हैं।

सहयोगी प्रणाली (Support System): वह प्रणाली जिसमें अभिभावक, शिक्षक, समुदाय, NGOs और सरकार मिलकर दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा को सफल बनाने के लिए सहयोग करते हैं।

ब्रेल (Braille): दृष्टिबाधित व्यक्तियों के लिए स्पर्श से पढ़ी जाने वाली विशेष लिपि।

सांकेतिक भाषा (Sign Language): श्रवण-बाधित व्यक्तियों के लिए हाथ, चेहरे और शरीर की हरकतों से किया जाने वाला माध्यम।

11.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न (Self-Assessment Questions)

1. संचार समावेशी शिक्षा में पहुँच की आवश्यकता क्यों जरूरी है?
2. विद्यालय के स्थापित माहौल में सुगमता सुनिश्चित करने के लिए किन-किन पहलुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए?
3. संचार, पठन और लेखन में सुविधा के लिए कौन-कौन से उपकरण और तकनीकें मददगार हैं?
4. शिक्षण और अधिगम के क्रम में अनुकूलन और तर्कसंगत सुविधाओं की प्रासंगिकता को स्पष्ट करें।

11.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (References)

- Government of India. (2016). The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016. Ministry of Social Justice and Empowerment.
- United Nations. (2006). Convention on the Rights of Persons with Disabilities (CRPD). United Nations General Assembly.
- Booth, T., & Ainscow, M. (2011). Index for Inclusion: Developing Learning and Participation in Schools. Centre for Studies on Inclusive Education (CSIE).
- UNESCO. (2020). Towards Inclusion in Education: Status, Trends and Challenges. UNESCO Publishing.
- Mittler, P. (2012). Working Towards Inclusive Education: Social Contexts. Routledge.

-
- Narayan, J., & Mani, M. N. G. (2017). Inclusive Education for Children with Disabilities. New Delhi: National Council of Educational Research and Training (NCERT).
 - Bernhardt, C. (2023, April 7). How accessible labs can support scientists with disabilities. Life in the Lab.
 - Pixabay. (2025). School canteen vectors and illustrations. Retrieved from <https://pixabay.com/vectors/search/school%20canteen/>
 - Villa, R. A., & Thousand, J. S. (2016). Creating an inclusive classroom: Effective and proven special education strategies. Teaching Tolerance. Retrieved from <https://www.tolerance.org>
 - Interalia. (2018, August 21). Inclusive education and children with special needs. Retrieved from The Kashmir Images website: <https://thekashmirimages.com/2018/08/21/inclusive-education-and-children-with-special-needs/>

11.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. समावेशी शिक्षा में पहुँच के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
2. विद्यालय के बनाए गए माहौल में सुविधा प्रदान करने के उपायों पर विस्तृत चर्चा कीजिए।
3. संचार, पढ़ाई और लेखन में सरलता के उपकरणों और विधियों का अध्ययन कीजिए।
4. शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में अनुकूलन और तार्किक सहूलियत के महत्व पर उदाहरण सहित एक निबंध लिखिए।
5. समावेशी शिक्षा को सफल बनाने के लिए माता-पिता, शिक्षकों, समुदायों और NGOs के सहयोग के महत्व पर गहराई से विचार करें।

इकाई 12
विशेष एवं समावेशी शिक्षा के लिए सहायता प्रणाली एवं संसाधनों की स्थिति

12.1 प्रस्तावना (Introduction)**12.1 उद्देश्य (Objectives)****12.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में सहायता प्रणाली और संसाधनों की स्थिति****12.3.1 मुद्दे और चुनौतियाँ****12.3.2 विविध शिक्षण आवश्यकताओं के लिए आवश्यक सहायता प्रणाली****12.3.3 घर-आधारित शिक्षा के लिए सहायता और संसाधन****12.3.4 सहयोग की आवश्यकता (Parents, Teachers, Community, NGOs)****12.4 सारांश****12.5 शब्दावली****12.6 स्वमूल्यांकन प्रश्न****12.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची****12.8 निबंधात्मक प्रश्न**

12.1 प्रस्तावना

शिक्षा हर व्यक्ति का अधिकार है, चाहे वह सामान्य विकास वाला हो या किसी प्रकार की दिव्यांगता से प्रभावित शिक्षा के जरिए व्यक्ति ज्ञान नहीं केवल अर्जित करता है, बल्कि सामाजिक, भावनात्मक और पेशेवर जीवन में भी सक्रियता से भाग लेता है। विशेष और समावेशी शिक्षा का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी बच्चों, खासकर दिव्यांगता (Children with Special Needs – CWSN) बच्चों, को समान अवसर, उपयुक्त सुविधाएँ और अनुकूल शैक्षिक वातावरण मिले। विशेष और समावेशी शिक्षा में सहायता प्रणाली और संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रत्येक बच्चा विभिन्न प्रकार की सीखने की आवश्यकताओं के साथ आता है, इसलिए उनके लिए विशेष शैक्षिक उपकरण, सहायक तकनीक, प्रशिक्षित शिक्षकों, परामर्शदाताओं, संसाधन कक्षों तथा परिवार और समुदाय का सहयोग आवश्यक है। उदाहरण के लिए, दृष्टिहीन बच्चों के लिए ब्रेल, श्रवणहीन बच्चों के लिए सांकेतिक भाषा, और बौद्धिक दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए सरल भाषा और व्यावहारिक प्रशिक्षण अत्यंत सहायक होते हैं।

आज की शिक्षा केवल विद्यालयों तक नहीं सीमित है, बल्कि घर-आधारित शिक्षा और तकनीकी साधनों के उपयोग ने इसे और विस्तारित किया है। फिर भी, कई बार संसाधनों की कमी, योग्य शिक्षकों की अनुपस्थिति, आर्थिक सीमाएँ, समाज में दृष्टिकोण की कमी और तकनीकी बाधाएँ जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए परिवार, शिक्षक, समुदाय, गैर-सरकारी संगठन और सरकार का सामूहिक सहयोग आवश्यक है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विशेष और समावेशी शिक्षा में सहायता तंत्र और संसाधनों की प्रभावी व्यवस्था न केवल शिक्षा के स्तर को उन्नत करती है, बल्कि दिव्यांग बच्चों (Children with Special Needs – CWSN) के आत्मनिर्भर और सम्मानजनक जीवन की दिशा में भी मार्ग प्रशस्त करती है।

12.2 Objectives (उद्देश्य)

- विशेष एवं समावेशी शिक्षा में आने वाले विभिन्न मुद्दों और चुनौतियों (Issues and Challenges) की पहचान और उनका विश्लेषण कर सकेंगे।
- विविध शिक्षण आवश्यकताओं (Diverse Learning Needs) को पूरा करने के लिए आवश्यक सहायता प्रणाली (Support Systems) को समझ सकेंगे।
- घर-आधारित शिक्षा (Home-based Education) के लिए आवश्यक सहायता और संसाधनों की भूमिका को समझ सकेंगे।
- अभिभावकों, शिक्षकों, समुदाय और गैर-सरकारी संगठनों (Parents, Teachers, Community, NGOs) के बीच सहयोग (Collaboration) को समझ सकेंगे।
- समावेशी शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए सहायता प्रणाली और संसाधनों के समन्वित प्रयोग को समझ सकेंगे।

12.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में सहायता प्रणाली और संसाधनों की स्थिति

समावेशी शिक्षा की उपलब्धि इस पर निर्भर करती है कि विद्यालयों, समुदायों और शैक्षिक संस्थानों में किस प्रकार के सहायता तंत्र (Support System) और संसाधन (Resources) मौजूद हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (Children with Special Needs – CWSN) की शिक्षा केवल पाठ्यक्रम की उपलब्धता से संपन्न नहीं होती, बल्कि इसके लिए भौतिक, शैक्षणिक, सामाजिक और भावनात्मक समर्थन भी आवश्यक है।

12.3.1 मुद्दे और चुनौतियाँ (Issues and Challenges)

विशेष और समावेशी शिक्षा (Special and Inclusive Education) वर्तमान शिक्षा के माहौल का एक अनिवार्य हिस्सा बन चुका है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि हर बच्चा, चाहे उसकी शारीरिक, मानसिक या सामाजिक स्थिति कैसी भी हो, समान शैक्षणिक अवसर प्राप्त कर सके। हालाँकि, इस लक्ष्य को हासिल करने में कई प्रकार की समस्याएँ और चुनौतियाँ मौजूद हैं। ये चुनौतियाँ सिर्फ विद्यालयी ढाँचे और संसाधनों से ही नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण, नीतिगत व्यवस्थाओं और प्रशिक्षित मानव संसाधनों से भी जुड़ी हुई हैं। यहाँ हम प्रमुख मुद्दों और चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत कर रहे हैं—

1. अध्यापकों की कमी- विद्यालयों में विशेष शिक्षा में योग्य शिक्षकों की संख्या अत्यधिक कम है अधिकतम शिक्षक सामान्य शैक्षिक प्रणाली के अनुसार तैयार किए जाते हैं, जबकि विशेष जरूरतों वाले बच्चों के लिए विशेष शिक्षण विधियों की आवश्यकता होती है संसाधन शिक्षकों की संख्या सीमित है, जिससे सभी बच्चों को उचित सहायता नहीं मिल पाती।

2. सरल संसाधनों की कमी- दृष्टिहीन बच्चों के लिए ब्रेल किताबें और स्पर्श चित्र (Tactile Diagrams) अत्यंत सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं श्रवणबाधित बच्चों के लिए सांकेतिक भाषा के दुभाषियों की गंभीर कमी है शारीरिक रूप से दिव्यांग बच्चों के लिए रैम्प, लिफ्ट, और सुलभ शौचालय जैसी सुविधाएँ कई विद्यालयों में उपलब्ध नहीं हैं आईसीटी पर आधारित उपकरण जैसे स्क्रीन रीडर, स्पीच-टू-टेक्स्ट सॉफ्टवेयर और डिजिटल लर्निंग उपकरण बहुत से बच्चों तक नहीं पहुंच पाते हैं।

3. शिक्षकों के प्रशिक्षण से जुड़ी समस्या- मुख्यधारा के शिक्षक समावेशी शिक्षण पद्धति में पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं करते हैं

दिव्यांगता की विभिन्न प्रकारों (जैसे दृष्टिबाधा, श्रवणबाधा, बौद्धिक विकलांगता, ऑटिज्म आदि) को समझकर शिक्षा देने के लिए विशेष योग्यता की आवश्यकता होती है निरंतर शिक्षक प्रशिक्षण की कमी है, जिसके चलते शिक्षक नवीनतम तकनीकों और तरीकों से अनजान रह जाते हैं।

5. जागरूकता का अभाव- कई बार माता-पिता अपने बच्चे की विशेष शैक्षणिक जरूरतों को समझ नहीं पाते समुदाय में विकलांगता के प्रति नकारात्मक नजरिया या सहानुभूति प्रमुख रहती है, जो सामाजिक समावेश में रुकावट उत्पन्न करती है। कुछ शिक्षकों में यह सोच होती है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य शिक्षा में शामिल करना मुश्किल है।

6. सामाजिक दृष्टिकोण (Social Attitude) - समाज में विकलांगता को लेकर अब भी कई तरह के पूर्वाग्रह और मिथक मौजूद हैं। कई अभिभावक अपने बच्चों को स्कूल भेजने से हिचकिचाते हैं, क्योंकि उन्हें चिंता होती है कि बच्चे का उपहास उड़ा जाएगा या वह सामान्य बच्चों के साथ सामंजस्य नहीं बिठा सकेगा। इस तरह का नकारात्मक दृष्टिकोण समावेशी शिक्षा की राह में बड़ी रुकावट बनता है।

7. नीतिगत एवं प्रशासनिक चुनौतियाँ (Policy and Administrative Challenges) - भारत में शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE), समावेशी शिक्षा के लिए समग्र शिक्षा अभियान, और दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम जैसे प्रावधान मौजूद हैं, लेकिन इनके कार्यान्वयन में भिन्नता और लापरवाही देखी जाती है। योजनाओं के लिए निर्धारित बजट का उचित उपयोग नहीं हो पाता और संसाधनों का वितरण भी असंतुलित रहता है।

8. पाठ्यचर्या और मूल्यांकन में कठिनाई (Curriculum and Assessment Challenges) - समान पाठ्यक्रम सभी बच्चों के लिए एक समान मददगार नहीं हो सकता। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए अनुकूलित पाठ्यक्रम, सहायक गतिविधियाँ और वैकल्पिक मूल्यांकन तरीके जरूरी हैं। लेकिन अधिकतर स्कूलों में ऐसी व्यवस्थाएँ उपलब्ध नहीं होतीं। नतीजतन, ये बच्चे परीक्षाओं में अपनी वास्तविक क्षमता नहीं दिखा पाते।

9. घर-आधारित सहयोग का अभाव (Lack of Home-based Support) - घर पर परिवार का समर्थन और जरूरी संसाधनों की उपलब्धता, बच्चे के पूर्ण विकास में महत्वपूर्ण होती है। लेकिन कई परिवारों के पास वित्तीय साधन नहीं होते या उन्हें यह पता नहीं होता कि अपने बच्चे की शिक्षा में कैसे सहायता करें। इससे बच्चे की प्रगति में रुकावट आती है।

10. तकनीकी उपयोग में सीमाएँ (Limitations in Use of Technology) - हालांकि आज स्मार्ट तकनीक और डिजिटल उपकरण शिक्षा में मददगार बन रहे हैं, लेकिन हर विद्यालय और परिवार के पास इनकी पहुंच नहीं है। इंटरनेट कनेक्टिविटी, उच्च उपकरणों की लागत और प्रशिक्षण की कमी के कारण इनका व्यापक उपयोग नहीं हो पाता।

11. सहयोगी संस्थाओं की बाधाएँ (Barriers of Supporting Agencies) - गैर-सरकारी संगठन (NGOs), सामुदायिक संस्थाएँ और स्वास्थ्य सेवाएँ विशेष और समावेशी शिक्षा में काफी महत्वपूर्ण हैं। लेकिन इन संस्थाओं के बीच संपर्क की कमी, संसाधनों का पुनरावृत्ति या असमान वितरण, और निरंतर सहयोग की कमी के कारण बच्चों को आवश्यक लाभ नहीं मिल पाता।

12. ग्रामीण और शहरी क्षेत्र की असमानता (Rural-Urban Disparity) - शहरी क्षेत्रों में जहाँ विद्यालय, संसाधन और प्रशिक्षित शिक्षक अधिक गुणवत्ता के हैं, वहीं ग्रामीण इलाकों में हालात बहुत खराब हैं। वहाँ बच्चों को विद्यालय तक पहुँचने में मुश्किल होती है और विद्यालय पहुँचने पर भी उन्हें उचित सहायता नहीं मिलती।

13. मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक बाधाएँ (Mental Health and Emotional Challenges) - विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को अक्सर आत्मनिंदा, depression और आत्म-विश्वास की कमी जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यदि स्कूल में काउंसलर उपलब्ध नहीं है, तो उनकी भावनात्मक जरूरतें पूरी नहीं होतीं। यह स्थिति उनकी पढ़ाई और सामाजिक समावेश में बाधक बनती है।

विशेष और समावेशी शिक्षा की प्रक्रिया सरल नहीं है। संसाधन की कमी, योग्य शिक्षकों की अनुपस्थिति, सामाजिक भेदभाव, नीतिगत कठिनाईयाँ, पाठ्यक्रम की कठोरता, और तकनीकी अवरोध—इन सभी कारकों के सम्मिलित प्रभाव से गंभीर समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इन बाधाओं को समाप्त किए बिना हम "समान शिक्षा अवसर" (Equal Opportunity of Education) की धारणा को साकार नहीं कर सकते। इसलिए नीति-निर्माताओं, शिक्षकों, अभिभावकों, समुदाय और गैर-सरकारी संगठनों के बीच सहयोगात्मक वातावरण का निर्माण करना आवश्यक है, ताकि विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा में लाया जा सके और एक सच्चे समावेशी समाज की स्थापना की जा सके।

12.3.2 विविध शिक्षण आवश्यकताओं के लिए आवश्यक सहायता समावेशी शिक्षा का मुख्य प्रणाली समावेशी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है—“प्रत्येक बच्चे को उसकी क्षमताओं और आवश्यकताओं के अनुसार समान शिक्षण अवसर प्रदान करना”। हर बच्चा अपनी विशेषताओं, क्षमताओं और सीमाओं के साथ विशेष होता है। इसलिए, शिक्षा प्रणाली में इतना लचीलापन होना चाहिए कि यह सामान्य बच्चों के साथ-साथ विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की विविध शिक्षण आवश्यकताओं को भी पूरा कर सके। इसके लिए विभिन्न सहायता प्रणालियाँ और संसाधनों की आवश्यकता है। यहाँ हम उन महत्वपूर्ण सहायता प्रणालियों का वर्णन प्रस्तुत कर रहे हैं—

1. पाठ्यचर्या में लचीलापन (Curricular Flexibility) - सभी बच्चों को समान पाठ्यचर्या (Curriculum) प्रदान करना संभव नहीं है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को उनकी क्षमताओं और रुचियों के अनुरूप अनुकूलित पाठ्यचर्या (Adapted Curriculum) की जरूरत होती है जिसके लिए दृष्टिहीन बच्चों के लिए ब्रेल, ऑडियो पुस्तकें और स्पर्शनीय चार्ट तथा श्रवण-विकलांग बच्चों के लिए संकेत भाषा, उपशीर्षक और दृश्य-सहायक संसाधन और बौद्धिक विकलांग बच्चों के लिए साधारण, क्रियाकलाप-आधारित और क्रमबद्ध शैक्षिक सामग्री होनी चाहिये।

2. सहायक तकनीक (Assistive Technology) - आधुनिक समय में तकनीक, शिक्षा में समावेशिता को सुनिश्चित करने का सबसे प्रभावी माध्यम है। दृष्टिहीन लोगों के लिए: स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर, स्मार्ट छड़ी, ब्रेल नोट टेकर व श्रवण कठिनाई वाले व्यक्तियों के लिए: श्रवण यंत्र, कोक्लियर इम्प्लांट, स्पीच-टू-टेक्स्ट प्रोग्राम तथा गतिशीलता प्रभावित बच्चों के लिए: इलेक्ट्रॉनिक व्हीलचेयर, विशेष की-बोर्ड, व्यक्तिगत माउस, यह तकनीक न केवल शिक्षा को आसान बनाती है बल्कि आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास को भी बढ़ाती है।

3. विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षक (Specially Trained Teachers) - समावेशी शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण आधार है—प्रशिक्षित शिक्षक। शिक्षक को विभिन्न दिव्यांगताओं के अनुरूप शिक्षण तकनीकें, सहायक साधनों का उपयोग, और कक्षा संचालन की विशेष रणनीतियों का अध्ययन करना चाहिए।

"Resource Teacher" या "Itinerant Teacher" की नियुक्ति से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को खास ध्यान मिल सकता है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में समावेशी शिक्षा को पाठ्यक्रम का एक अनिवार्य हिस्सा बनाना चाहिए।

4. परामर्श और मनोवैज्ञानिक सहयोग (Counselling and Psychological Support)

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अक्सर आत्म-कलंक, मानसिक अवसाद, और आत्मविश्वास की कमी जैसी चुनौतियाँ प्रभावित करती हैं।

जिसके लिए विद्यालय में परामर्श सेवाएँ प्रदान करना आवश्यक है। साथ ही, माता-पिता को भी सलाह दी जानी चाहिए ताकि वे अपने बच्चों की स्थिति को समझ सकें और सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाएँ।

5. मूल्यांकन में लचीलापन (Flexible Assessment System) - पारंपरिक परीक्षाएँ (लिखित परीक्षा) सभी बच्चों की सच्ची क्षमता को नहीं दर्शा सकतीं इससे दृष्टिहीन बच्चों के लिए मौखिक परीक्षा या ब्रेल प्रश्नपत्र होने चाहिये व श्रवण- दिव्यांग बच्चों के लिए लिखित + दृश्य सामग्री, बौद्धिक दिव्यांग बच्चों के लिए प्रोजेक्ट- आधारित मूल्यांकन तथा उत्तर-पत्र लिखवाने के लिए स्क्राइब (लिखने वाला सहयोगी) की व्यवस्था होनी चाहिये

6. घर-आधारित सहयोग और समुदाय की भागीदारी - बच्चे का सम्पूर्ण विकास केवल स्कूल में नहीं हो सकता, घर में परिवार का समर्थन, रोजमर्रा के कौशल का अभ्यास और अच्छा माहौल जरूरी है, स्थानीय समुदाय और NGOs इस क्षेत्र में अहम भूमिका अदा करते हैं। वे संसाधन प्रदान करके और जागरूकता बनाकर बच्चों की मदद कर सकते हैं।

7. सुगम ढांचा (Accessible Framework) - समावेशी विद्यालय के लिए न केवल पाठ्यक्रम और शिक्षक जरूरी हैं, बल्कि भौतिक संरचना भी उपयुक्त होनी चाहिए जिसमें व्हीलचेयर के लिए ढलान, लिफ्ट और चौड़े प्रवेशद्वार होने चाहिये, दृष्टिहीनों के लिए स्पर्श पथ और ब्रेल संकेत तथा श्रवण बाधित व्यक्तियों के लिए ध्वनि नियंत्रित कक्षाएँ होनी चाहिये

8. बहुविषयक सहयोग (Multidisciplinary Support) - विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा केवल शिक्षक की जिम्मेदारी नहीं होती है। चिकित्सक (Doctors) बच्चों के स्वास्थ्य और सुधार में मदद करते हैं। स्पीच थेरेपिस्ट, फिजियोथेरेपिस्ट और ऑक्यूपेशनल थेरेपिस्ट विशेष शिक्षा प्रदान करते हैं। मनोवैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्ता और गैर सरकारी संगठन मिलकर समग्र विकास में सहायता करते हैं।

9. अभिभावक और शिक्षक के बीच संवाद (Parent-Teacher Communication) - अभिभावक और शिक्षक मिलकर बच्चे के लिए निजी शिक्षण योजना (IEP – Individualized Education Plan) तैयार कर सकते हैं, नियमित बातचीत और फीडबैक के माध्यम से बच्चे की उन्नति की निगरानी की जा सकती है और इससे घर और विद्यालय दोनों स्थानों पर समान शैक्षिक माहौल बनता है।

10. साक्षरता और संवेदनशीलता - समावेशी शिक्षा की सफलता तभी सम्भव है जब सामान्य बच्चे और समाज विशेष जरूरत वाले बच्चों को स्वीकारें और उनके साथ मिलकर सहयोग करें। तथा विद्यालय में संवेदनशीलता कार्यक्रम, नाटकों, कार्यशालाओं और खास दिनों का आयोजन करना जरूरी है।

विभिन्न शैक्षिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करने के लिए एक बहुस्तरीय सहायता ढांचे की आवश्यकता है—जिसमें अनुकूलित पाठ्यक्रम, सहायक तकनीक, प्रशिक्षित शिक्षक, परामर्श सेवाएं, लचीला मूल्यांकन, गृह और सामुदायिक सहयोग, सुगम अवसंरचना तथा बहुविषयक विशेषज्ञों की सहभागिता शामिल है। इन सभी के सम्मिलित प्रयास से ही सही मायने में समावेशी शिक्षा को लागू किया जा सकता है। इस तरह, यदि शैक्षिक प्रणाली इन सभी पहलुओं पर ध्यान दे, तो विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षा में बराबरी के अवसर प्राप्त होंगे, साथ ही वे आत्मनिर्भर और सामाजिक रूप से सक्रिय नागरिक बन पाने में सक्षम होंगे।

12.3.3 घर-आधारित शिक्षा के लिए सहायता और संसाधन-

समावेशी शिक्षा का उद्देश्य है कि हर बच्चा विद्यालय की मुख्यधारा में शामिल हो। लेकिन कुछ हालात में यह संभव नहीं हो पाता। कई बार गंभीर विकलांगता, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ, आवागमन की मुश्किलें, या विद्यालय में आवश्यक संसाधनों की कमी बच्चे को नियमित विद्यालय जाने से रोक देती हैं। ऐसे में घर-आधारित शिक्षा एक विकल्प के रूप में उभरती है। घर पर पढ़ाई से बच्चों को अपनी गति और सुविधा के अनुसार सीखने का मौका मिलता है। हालांकि इसके लिए उचित संसाधन, सहयोग और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

नीचे घर-आधारित शिक्षा के लिए आवश्यक सहायता तंत्र और संसाधनों का विस्तार से विवरण दिया गया है—

1. अनुकूलित शिक्षण सामग्री (Adapted Learning Materials) - घर-आधारित शिक्षा की सफलता इस पर निर्भर करती है कि बच्चों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार सामग्री प्रदान की जाए जिसमें दृष्टिहीन बच्चों के लिए: ब्रेल पुस्तकें, स्पर्शीय चार्ट, ऑडियो पुस्तकें, श्रवण-संबंधी समस्याओं वाले बच्चों के लिए: सांकेतिक भाषा संबंधी सामग्री, उपशीर्षक वाले वीडियो तथा बौद्धिक दिव्यांग बच्चों के लिए: चित्र कार्ड, सरल भाषा वाली किताबें, खेल पर आधारित सामग्री उपलब्ध करायी जाये।
2. सहायक तकनीक (Assistive Technology at Home) - तकनीकी उपकरण घरेलू शिक्षा को अधिक प्रभावी बना सकते हैं। जैसे-मोबाइल फोन और टैबलेट पर शिक्षा संबंधी एप्स, स्क्रीन-रीडर, स्पीच-टू-टेक्स्ट और स्क्रीन-ज़ूम, हियरिंग एड, ऑडियो-विज़ुअल शिक्षा के लिए कोक्लियर इम्प्लांट तथा व्हीलचेयर और विशेष फर्नीचर के साथ अध्ययन के लिए सुखद माहौल बना सकते हैं।

-
3. अभिभावकों का कर्तव्य (Parents' Responsibility as Educators)- घर पर शिक्षा में माता-पिता की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। जिसमें बच्चों के साथ नियमित रूप से अभ्यास करना चाहिए, शिक्षक या संसाधन केंद्र द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन करना अनिवार्य होना चाहिए तथा अभिभावकों को विशेष प्रशिक्षण और परामर्श मिलना चाहिए ताकि वे बच्चों की आवश्यकताओं को समझकर उन्हें उचित मार्गदर्शन प्रदान कर सकें।
 4. विशेष शिक्षकों की घरेलू प्रवचनाएँ (Home-talks by Special Teachers)- सरकारी योजनाओं के तहत प्रशिक्षित शिक्षक बच्चों को व्यक्तिगत रूप से घर पर पढ़ाई कराते हैं तथा माता-पिता को शिक्षा के तरीके सिखाते हैं। बच्चे की उन्नति का मूल्यांकन करते हैं और भविष्य की योजना बनाते हैं। और इस व्यवस्था से बच्चों को स्कूल नहीं जा पाने पर भी शिक्षा मिलती रहती है।
 5. व्यक्तिगत शिक्षा योजना (Individualized Education Program – IEP) - घर में पढ़ाई के लिए IEP बनाना जरूरी है तथा बच्चे की क्षमताओं, रुचियों और कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए लक्ष्य तय करना, छोटी-छोटी उपलब्धियों को दर्ज कर प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है और इससे शिक्षण योजनाबद्ध और प्रभावी बनता है।
 6. गृह में जीवन कौशल शिक्षा (Life Skills Education at Home) - घर पर शिक्षा का अर्थ केवल अध्ययन विषयों तक नहीं होता बल्कि आत्म-देखभाल (Self-care), जैसे वस्त्र धारण करना, भोजन करना, व्यक्तिगत सफाई और घरेलू गतिविधियों में शामिल होना, जैसे सामान सहेजना, आसान कामों में मदद करना तथा सामाजिक क्षमताएँ, जैसे मेहमानों से संवाद करना, परिवार और आस-पड़ोस के लोगों से बातचीत करना व इन जीवन क्षमताओं से बच्चा स्वतंत्रता प्राप्त करता है।
 7. समुदाय और एनजीओ का सहयोग - गैर-सरकारी संगठन (NGO) और स्थानीय समुदाय, घरेलू शिक्षा में अहम भूमिका निभा सकते हैं। जिसमें वे अध्ययन सामग्री प्रदान कर सकते हैं, माता-पिता के लिए शिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं तथा बच्चों के लिए सामाजिक सहभागिता और मनोरंजन के कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं।
 8. ऑनलाइन और डिजिटल शिक्षण साधन - कोविड-19 महामारी के परिणामस्वरूप ऑनलाइन शिक्षा का महत्व और बढ़ गया है तथा घर से पढ़ाई के लिए YouTube, शैक्षिक वेबसाइटों, और विशेष ऐप्स का सहारा लिया जा सकता है और दिव्यांग बच्चों हेतु निर्मित डिजिटल प्लेटफॉर्म (जैसे DIKSHA पोर्टल, e-Pathshala) फायदेमंद हो सकते हैं व इन प्लेटफॉर्म पर पहुंच (Accessibility) को सुनिश्चित करना आवश्यक है।
 9. सुगम गृह वातावरण- घर का माहौल भी अध्ययन के अनुकूल होना चाहिए प्रकाश, शांति और सुव्यवस्थित जगह हों, दृष्टिहीन बच्चों के लिए चीजों का निर्धारित स्थान और स्पर्श संकेत तथा गतिशीलता में कठिनाई झेल रहे बच्चों के लिए व्हीलचेयर-अनुकूल व्यवस्था होनी चाहिये।
-

10. मूल्यांकन तथा निरंतर पर्यवेक्षण (Assessment and Continuous Oversight) - घर-आधारित शिक्षा के लिए प्रगति का आकलन भी जरूरी है जिसमें अभिभावक बच्चे की सफलताओं को दर्ज करें, शिक्षक समय-समय पर आकर निरीक्षण करें और मूल्यांकन सिर्फ अंक या ग्रेड तक नहीं, बल्कि कौशल विकास और आत्मनिर्भरता पर केंद्रित होना चाहिए।

घर पर आधारित शिक्षा उन बच्चों के लिए एक संजीवनी है जो किसी कारणवश स्कूल नहीं जा पाते। यह शिक्षा तभी प्रभावी हो सकती है जब घर में उपयुक्त संसाधन, सहायक तकनीक, प्रशिक्षित शिक्षकों का सहयोग, अभिभावकों की सक्रिय भागीदारी और समुदाय का सहयोग मौजूद हो। यदि ये सभी तत्व एक साथ मिलकर कार्य करें, तो घर-आधारित शिक्षा न केवल बच्चों के अध्ययन में सहायक होगी, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर और समाज का सक्रिय हिस्सा भी बनाएगी।

12.3.4 सहयोग की आवश्यकता (Parents, Teachers, Community, NGOs)

समावेशी शिक्षा का मूल केवल शैक्षणिक संसाधनों और तकनीकी साधनों की उपलब्धता पर निर्भर नहीं करता, बल्कि यह विभिन्न हितधारकों के बीच निरंतर सहयोग और सहभागिता पर भी निर्भर करता है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के समग्र विकास के लिए परिवार, शिक्षक, समुदाय और गैर-सरकारी संगठनों की सक्रिय भागीदारी महत्वपूर्ण है। जब ये सभी पक्ष एक साझा दृष्टिकोण से एक साथ काम करते हैं, तब समावेशी शिक्षा का असली रूप प्रकट होता है।

अभिभावकों का योगदान (Role of Parents): अभिभावक बच्चों के पहले शिक्षक होते हैं और उनसे सबसे ज्यादा निकट होते हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए उनका महत्व और बढ़ जाता है। वे बच्चे की विशेष आवश्यकताओं, क्षमताओं और सीमाओं को सर्वोत्तम रूप से समझते हैं। यदि माता-पिता शिक्षकों के साथ निरंतर संवाद बनाए रखें और घर में सीखने का सहायक माहौल तैयार करें, तो शिक्षा की गुणवत्ता कई गुणा बढ़ जाती है। इसके अलावा, अभिभावकों का सकारात्मक दृष्टिकोण बच्चे में आत्मविश्वास और प्रेरणा को बढ़ावा देता है।

शिक्षकों का कार्य (Role of Teachers): समावेशी शिक्षा की सफलता मुख्य रूप से शिक्षकों की संवेदनशीलता और विशेषज्ञता पर निर्भर करती है। यदि शिक्षक विभिन्न प्रकार की विकलांगताओं को समझते हैं और उसके अनुसार शिक्षण विधियाँ अपनाते हैं, तो विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की सीखने की गति को बढ़ाया जा सकता है। संसाधन शिक्षकों और सामान्य शिक्षकों का आपसी सहयोग भी महत्वपूर्ण है, ताकि कक्षा में हर बच्चे को उपयुक्त अवसर मिल सके। शिक्षक न केवल शैक्षणिक ज्ञान प्रदान करते हैं, बल्कि बच्चों में आत्मनिर्भरता और सामाजिक स्वीकृति की भावना को भी विकसित करते हैं।

समुदाय की सहभागिता (Role of Community): समुदाय बच्चों के सामाजिक विकास का सबसे बड़ा साधन है। अगर समाज में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को स्वीकृति और समान अवसर मिले, तो वे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ सकते हैं। मोहल्ला, गाँव या शहरी इलाकों में यदि समुदाय सकारात्मक माहौल बनाए, खेल-कूद और सांस्कृतिक गतिविधियों में ऐसे बच्चों को शामिल करे, तो समावेश की प्रक्रिया और अधिक प्रभावी हो सकती है। इसके विपरीत, अगर समाज में दया, उपेक्षा या भेदभाव का माहौल हो, तो बच्चे के विकास में गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसलिए समुदाय का सहयोग समावेशी शिक्षा की मजबूती का मुख्य आधार है।

गैर-सरकारी संस्थाओं (NGOs) का महत्व (Role of NGOs) : समावेशी शिक्षा के सफल कार्यान्वयन में गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) की भूमिका बेहद महत्वपूर्ण है। वे शिक्षा प्रणाली में सिर्फ सहयोगी नहीं, बल्कि परिवर्तनकारी बल (Change Agent) के रूप में कार्य करती हैं। NGOs का कार्यक्षेत्र स्थानीय से लेकर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक फैला होता है, जहाँ वे विशेष जरूरत वाले बच्चों और समाज के बीच समान अवसर और स्वीकार्यता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

सरकारी योजनाओं और लाभार्थियों के मध्य संबंध स्थापित करने का कार्य: सरकार द्वारा तैयार की गई योजनाएँ अक्सर बच्चों तक पूरी तरह नहीं पहुँचतीं। NGOs इन योजनाओं को स्थानीय स्तर पर लागू करके असली लाभार्थियों तक पहुँचाने का कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए, विशेष शिक्षा से जुड़ी योजनाओं में उपकरण वितरण, छात्रवृत्ति और प्रशिक्षण कार्यक्रमों को NGOs कहीं बेहतर ढंग से संचालित कर पाते हैं।

सहायता सामग्री की स्थिति: NGOs ब्रेल किताबें, ऑडियो किताबें, स्क्रीन रीडर सॉफ्टवेयर, सांकेतिक भाषा की सामग्री, व्हीलचेयर, श्रवण यंत्र और ICT आधारित उपकरण जैसे संसाधन प्रदान करते हैं। इससे उन बच्चों को घर और विद्यालय दोनों में शिक्षा लेने में मदद मिलती है।

NGOs समावेशी शिक्षा में एक पुल का कार्य करते हैं। वे सरकारी योजनाओं और वास्तविक लाभार्थियों के बीच की खाई को पाटते हैं। ये संस्थाएँ बच्चों को सहायक उपकरण, अध्ययन सामग्री और डिजिटल संसाधन प्रदान करती हैं। इसके साथ ही वे शिक्षक प्रशिक्षण, अभिभावक परामर्श और जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन भी करती हैं। कई NGOs अनुसंधान गतिविधियों, पायलट प्रोजेक्ट्स और नवाचारी शिक्षण विधियों के माध्यम से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने में योगदान कर रहे हैं।

इस प्रकार देखा जाए तो समावेशी शिक्षा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अभिभावकों का सहयोग, शिक्षकों का संवेदनशील दृष्टिकोण, समुदाय की स्वीकृति और NGOs का समर्थन सभी एक-दूसरे को सुदृढ़ बनाते हैं। यदि इनमें से कोई भी तत्व गायब हो जाए तो शिक्षा का समावेशी पहलू अधूरा रह जाएगा। सहयोग की यह चार स्तंभ (अभिभावक-शिक्षक-समुदाय-NGOs) व्यवस्था विशेष

आवश्यकता वाले बच्चों के लिए एक मजबूत आधार तैयार करती है, जिससे वे शिक्षा हासिल कर स्वतंत्र और समाज के सक्रिय सदस्य बन पाते हैं।

12.4 सारांश (Summary)

विशेष और समावेशी शिक्षा का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि हर बच्चा, चाहे वह सामान्य हो या दिव्यांग (CWSN), समान अवसरों, उचित संसाधनों और सहायक वातावरण में शिक्षा प्राप्त कर सके। शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्ति का साधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, भावनात्मक और व्यावसायिक जीवन में सक्रिय भागीदारी का आधार भी है।

समावेशी शिक्षा की सफलता के लिए सहायता प्रणाली और संसाधनों का अत्यधिक महत्व है। इसमें प्रशिक्षित शिक्षक, विशेष शैक्षणिक उपकरण, सहायक तकनीक, परामर्शदाता, संसाधन कक्ष, और परिवार तथा समुदाय का समर्थन आवश्यक है। विभिन्न प्रकार की दिव्यांगताओं के लिए अलग-अलग सहायता और साधनों की आवश्यकता होती है, जैसे दृष्टिहीन बच्चों के लिए ब्रेल और स्क्रीन रीडर, श्रवणबाधित बच्चों के लिए सांकेतिक भाषा और हियरिंग एड, बौद्धिक दिव्यांगता वाले बच्चों के लिए सरल भाषा और व्यावहारिक प्रशिक्षण, तथा शारीरिक दिव्यांग बच्चों के लिए रैंप, लिफ्ट और अनुकूलन उपकरण।

हालाँकि, इस ढाँचे में कई समस्याएँ और चुनौतियाँ हैं, जैसे—विशेष शिक्षकों की कमी, शैक्षणिक संसाधनों की सीमित आपूर्ति, शिक्षक प्रशिक्षण का अभाव, समाज में शिक्षा की कमी और तकनीकी बाधाएँ। इन समस्याओं का समाधान केवल सरकारी नीतियों से नहीं, बल्कि अभिभावकों, शिक्षकों, समुदाय और गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) का संयुक्त सहयोग आवश्यक है।

घर-आधारित शिक्षा उन बच्चों के लिए एक विकल्प है जो नियमित विद्यालय नहीं जा पाते। इसमें विशेष शिक्षक, माता-पिता और समुदाय मिलकर बच्चे की शैक्षणिक और जीवन कौशल जरूरतों को पूरा करते हैं।

समावेशी शिक्षा की मजबूत नींव चार स्तंभों पर निर्भर करती है—अभिभावक, शिक्षक, समुदाय और NGOs। जब ये सभी मिलकर काम करते हैं, तब दिव्यांग बच्चों के लिए ऐसा माहौल बनता है, जिसमें वे शिक्षा हासिल कर आत्मनिर्भर और समाज के सक्रिय हिस्से बन सकते हैं।

12.5 शब्दकोश (Vocabulary)

- समावेशी शिक्षा (Inclusive Education): एक ऐसी शैक्षिक व्यवस्था है जिसमें सभी बच्चे, बिना किसी भिन्नता के, एक साथ अध्ययन करते हैं।
-

- सहायता तंत्र (Support Mechanism): बच्चों की शिक्षा और व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करने हेतु स्थापित व्यवस्थाएँ।
- संसाधन (Resources): शैक्षणिक सामग्री, उपकरण, और सेवाएँ जो विशेष जरूरत वाले बच्चों की शिक्षा में मददगार होती हैं।
- होम-बेस्ड एजुकेशन: बच्चों को घर पर शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने की व्यवस्था।

12.6 स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. समावेशी शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य क्या है?
2. विशेष शिक्षा में सहायता तंत्र की आवश्यकता क्यों है?
3. विद्यालय स्तर पर समावेशी शिक्षा को लागू करने में प्रमुख बाधाएँ कौन-सी हैं?
4. घर-आधारित शिक्षा के लिए किस-किस प्रकार की मदद की आवश्यकता होती है?

12.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. अग्निहोत्री, आर. के. (2019). विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षा. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग।
2. शर्मा, पी. एल. (2017). समावेशी शिक्षा: सिद्धांत और व्यवहार. अजय प्रकाशन, मेरठ।
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT). (2020). समावेशी शिक्षा पर परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: एनसीईआरटी।
4. UNESCO. (2009). Policy Guidelines on Inclusion in Education. Paris: UNESCO.
5. Government of India. (2016). The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016. New Delhi: Ministry of Social Justice & Empowerment.

12.15 निबन्धात्मक प्रश्न

- 1 विशेष और समावेशी शिक्षा में सहायता तंत्र और साधनों की आवश्यकता और महत्व पर विस्तृत चर्चा करें।
- 2 विभिन्न शैक्षिक जरूरतों वाले बच्चों के लिए आवश्यक समर्थन प्रणाली और संसाधनों की व्याख्या कीजिए।

-
- 3 घर-आधारित शिक्षा की विशेषताओं और इसकी महत्ता को उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट करें।
 - 4 विशेष और समावेशी शिक्षा में माता-पिता, शिक्षक, समुदाय तथा गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका पर विस्तृत चर्चा करें।
 - 5 समावेशी शिक्षा में सहायक प्रौद्योगिकी का महत्व स्पष्ट करें।

इकाई 13
विशेष और समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता के मुद्दे

प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा

13.3.1 विशेष शिक्षा

13.3.2 समावेशी शिक्षा

13.4 गुणवत्तापूर्ण शिक्षा

13.5 सकल नामांकन अनुपात

13.5.1 सकल नामांकन अनुपात का सूत्र

13.5.2 सकल नामांकन अनुपात का महत्व

13.6 शिक्षक शिक्षा एवं विशेष तथा समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता

13.7 शिक्षक शिक्षा एवं विशेष तथा समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता

13.8 विभिन्न रिपोर्टों में दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा का उल्लेख

13.9 निष्कर्ष

13.10 अभ्यास प्रश्न

13.11 सन्दर्भ सूची

13.1 प्रस्तावना

शिक्षा मानव समाज का मौलिक अधिकार है जो व्यक्ति को जीवनयापन योग्य एक कुशल समाज का निर्माण करता है। देश के प्रत्येक व्यक्ति का गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करना उन्हें योग्य मानव पूंजी के रूप में परिवर्तित करना अधिकार होता है। शिक्षा जो गुणवत्ता पूर्ण हो वह देश को विकसित करने में सहायता प्रदान करती है। जब बात विशेष आवश्यकता वाले बच्चे या दिव्यांग की हो तो शिक्षा में गुणवत्ता का स्तर और अलग रूप से मापा जाता है। समावेशी शिक्षा का उद्देश्य है कि कोई भी बच्चा समाज की मुख्य धारा से बाहर न रह जाए।

सरकार और विभिन्न संगठनों ने विद्यालय की संख्या सकल नामांकन और ओपन स्कूलिंग जैसी व्यवस्थाओं में सुधार किया लेकिन वास्तविक गुणवत्ता और सीखने के परिणाम अभी भी चुनौती पूर्ण है।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थी :

- विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को जान सकेंगे।
- सकल नामांकन अनुपात से परिचित हो सकेंगे।
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सकल नामांकन अनुपात में संबंध जान सकेंगे।
- शिक्षक शिक्षा एवं विशेष तथा समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता को समझ सकेंगे।
- विभिन्न रिपोर्ट में दिव्यांगविद्यार्थियों की शिक्षा के लिए किए गए प्रयासों को जान सकेंगे।

13.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा

शिक्षा हम सभी मानव का मूलभूत अधिकार है। जिसके लिए हमारी सरकार 6 से 14 वर्ष के सभी छात्र और छात्राओं को निशुल्क अनिवार्य शिक्षा देती है इसी क्रम में दिव्यांगछात्रों की शिक्षा के लिए विशेष एवं समावेशी शिक्षा सरकार द्वारा चलाया गया कदम है।

13.3.1 विशेष शिक्षा:

विशेष शिक्षा एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए व्यक्तिगत रूप से डिजाइन की गई शिक्षण कार्यक्रम, सहायता और सेवाएं शामिल की जाती है जिसमें छात्रों को उनके विशेष योग्यता के आधार पर सीखने में मदद मिलती है। इस पूरी प्रक्रिया में हम अपने दिव्यांग छात्र-छात्राओं के शारीरिक भावनात्मक व्यावहारिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हैं।

• कर्क के अनुसार:

“विशेष शिक्षा शब्द ऐसी शिक्षा को कहते हैं जिसे विकलांगता एवं प्रतिभाशाली बच्चों के लिए किया जाता है। लेकिन औसत बालकों के मामले में यह प्रयुक्त नहीं होता है।”

• विकलांग शिक्षा अधिनियम के अनुसार:

“विशिष्ट शिक्षा विशिष्ट रूप से डिजाइन किया गया अनुदेशन है जो विकलांग बच्चों की अतुलनीय आवश्यकताओं की पूर्ति करता है इसमें वर्ग कक्षा अनुदेशन ग्रह अनुदेशक एवं अस्पताल एवं स्थानीय अनुदेशन भी शामिल है।”

उपरोक्त परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें विशेष शिक्षा का अर्थ एवं स्वरूप के बारे में कुछ महत्वपूर्ण तत्व प्राप्त होते हैं।

-
- विशेष शिक्षाविशिष्ट बालक को जैसे दृष्टिबाधित श्रवण अक्षममानसिकमंद एवं अधिगम अक्षमता प्रतिभाशाली बालकों के लिए विशेष रूप से तैयार किया गया अनुदेशन है।

13.3.2 समावेशी शिक्षा:

समावेशी शिक्षा दो शब्दों का समायोजन है जहां समावेशन से हमारा अभिप्राय है सब कुछ शामिल करना या किसी को अलग न छोड़ेंगे और शिक्षा से अभिप्राय है सीखना और सीखना अर्थात् समावेशी शिक्षा एक ऐसी शिक्षा है जहां सभी का समावेशन हो या व शिक्षा व्यवस्था जिसमें किसी को शिक्षा से वंचित न रखने पड़े अर्थात् एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था जिसमें दिव्यांग जन्म और दिव्यांग रहित जान एक ही परिसर में एक ही माहौल के साथ शिक्षा ग्रहण कर सके और अपना संपूर्ण विकास कर सकें।

- विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार:

“यह सीखने, संस्कृतियों और समुदायों में भागीदारी बढ़ाने तथा शिक्षा के भीतर और शिक्षा से बहिष्करण को कम करने के माध्यम से सभी शिक्षार्थियों की जरूरतों की विविधता को संबोधित करने और प्रतिक्रिया देने की एक प्रक्रिया है”।

स्टेनबैक तथा स्टेनबैक के अनुसार:

“समावेशी विद्यालय से तात्पर्य ऐसे स्थान से है जहाँ प्रत्येक बालक को उसके साथियों तथा विद्यालय समुदाय के अन्य सदस्यों द्वारा स्वीकार किया जाता है व सहारा दिया जाता है जिससे कि वह अपनी शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।”

13.4 गुणवत्तापूर्ण शिक्षा

पूर्ण शिक्षा शिक्षा के लक्ष्य को पूर्ण करता है अर्थात् गुणवत्तापूर्ण शिक्षा व्यवस्था में सिर्फ पाठ्यक्रम के समापन ध्यान नहीं दिया जाता है। इस व्यवस्था में छात्रों के सर्वज्ञ विकास की बात की जाती है। जिसमें छात्रों में ज्ञान कौशल दृष्टिकोण और मूल्य आदि का विकास होता है इसके उपरान्त विद्यार्थी देश के लिए सुयोग्य मानव पूंजी के रूप में तैयार होते हैं इस प्रक्रिया में हम कह सकते हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था गुणवत्तापूर्ण है और हमारे छात्रों के व्यवहार में निम्न रूप से परिवर्तन का आकलन भी किया जा सकता है।

- गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में ज्ञान कौशल दृष्टिकोण और मुद्दों का विकास होता है।
- यह शिक्षा विद्यार्थियों को रचनात्मक सोच, समस्या समाधान की क्षमता, सामाजिक व्यवहार और जीवन कौशल प्रदान करती है।
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के उपरान्त शिक्षक छात्र अपेक्षित परिवर्तनों का आकालान करता है।

13.5 सकल नामांकन अनुपात

शिक्षा किसी भी समाज और राष्ट्र के विकास का मूल आधार है जो देश के विकास का परिचायक है। बच्चों के नामांकन और उनकी पहुंच का मूल्यांकन करने के लिए देश में विभिन्न सूचकांक बनाए जाते हैं उन्हें में से एक है सकल नामांकन अनुपात यह एक महत्वपूर्ण शैक्षिक सूचकांक है जिसके माध्यम से यह पता चलता है कि किसी विशेष आएं समूह के कितने बच्चे वास्तव में विद्यालय नामांकित हैं। अतः सरकार नामांकन अनुपात हमें यह बताता है कि विभिन्न स्तर पर नामांकित छात्रों की संख्या कितनी है जिसके आधार पर हमारी सरकार शिक्षा से जुड़े नियमों और सुधारों को लागू करती है जो एक तरफ से हमारी शिक्षा की गुणवत्ता का मापन भी है और साथ ही सुधार का एक रास्ता भी है।

13.5.1 सकल नामांकन अनुपात का सूत्र:

सकल नामांकन अनुपात (Gross Enrolment Ratio - GER) का सूत्र निम्नलिखित है:

व्याख्या:

- नामांकित छात्रों की कुल संख्या: यह उस विशेष शैक्षिक स्तर (जैसे प्राथमिक, माध्यमिक, या उच्चतर माध्यमिक) पर स्कूलों में नामांकित सभी छात्रों की संख्या को दर्शाता है, चाहे उनकी आयु कुछ भी हो।
- निर्धारित आयु समूह की कुल जनसंख्या: यह उस शैक्षिक स्तर के लिए उपयुक्त आयु समूह की जनसंख्या को दर्शाता है। उदाहरण के लिए, प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 1-5) के लिए आयु समूह सामान्यतः 6-11 वर्ष होता है।
- 100 से गुणा: यह अनुपात को प्रतिशत के रूप में व्यक्त करने के लिए किया जाता है।

13.5.2 सकल नामांकन अनुपात का महत्व:

- शिक्षा तक पहुंचे: यह सूचकांक हमें यह बतलाता है कि हमारे कितनी विद्यार्थी या छात्र छात्राएं शिक्षा तक पहुंच रहे हैं और यह आंकड़े के आधार पर हम भविष्य में इनकी संख्या में प्रगति के लिए कार्य भी कर सकते हैं।
- नीतिगत योजनाएं: सकल नामांकन अनुपात की सहायता से हमारी सरकार या शिक्षा विद नई-नई नीतियों का निर्धारण और योजनाओं का निरूपण करते हैं।

13.6 शिक्षक शिक्षा एवं विशेष तथा समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता

शिक्षा किसी भी समाज के विकास की आधारशिला है और उसकी गुणवत्ता काफी हद तक शिक्षकों की दक्षता पर निर्भर करती है। शिक्षक केवल ज्ञान प्रदान करने वाला व्यक्ति नहीं होता, बल्कि वह बच्चों के व्यक्तित्व, सोच और भविष्य के निर्माण में भी केंद्रीय भूमिका निभाता है। इसलिए शिक्षक शिक्षा (Teacher Education) अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यही वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से भावी शिक्षक आवश्यक ज्ञान, कौशल, दृष्टिकोण और संवेदनशीलता प्राप्त करते हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा का अर्थ है – शिक्षक को विषयगत ज्ञान के साथ-साथ बच्चों की विविध आवश्यकताओं को समझने, नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग करने और शिक्षा को अधिक सजीव एवं उपयोगी बनाने की क्षमता से सुसज्जित करना। यदि शिक्षक शिक्षा प्रभावी और गुणवत्ता आधारित होगी, तो विद्यालयों में शिक्षा की समग्र गुणवत्ता स्वतः बढ़ जाएगी।

विशेष एवं समावेशी शिक्षा (Special and Inclusive Education) के संदर्भ में शिक्षक शिक्षा की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। विशेष शिक्षा का उद्देश्य उन बच्चों को शिक्षा प्रदान करना है जिनमें किसी प्रकार की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी अक्षमता है। वहीं समावेशी शिक्षा इस विचार पर आधारित है कि सभी बच्चे, चाहे उनकी क्षमताएँ और आवश्यकताएँ कितनी भी भिन्न क्यों न हों, समान रूप से विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर सकें। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक समावेशी दृष्टिकोण अपनाएँ और प्रत्येक विद्यार्थी की विशिष्टता को समझकर उसे उपयुक्त शिक्षण अवसर प्रदान करें। यदि शिक्षक प्रशिक्षित नहीं होंगे या उनमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव होगा, तो समावेशी शिक्षा का उद्देश्य अधूरा रह जाएगा।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा विशेष एवं समावेशी शिक्षा को सफल बनाने की कुंजी है। शिक्षक को यह सिखाया जाना चाहिए कि वह कक्षा में विविध पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थियों के साथ किस प्रकार तालमेल बिठा सके। उदाहरण के लिए, यदि किसी बच्चे को दृष्टि संबंधी समस्या है, तो शिक्षक को ब्रेल, ऑडियो बुक्स या अन्य सहायक तकनीकों का प्रयोग करना आना चाहिए। यदि कोई बच्चा श्रवण बाधित है, तो शिक्षक को सांकेतिक भाषा या दृश्य आधारित शिक्षण सामग्री का उपयोग करना आना चाहिए। इसी प्रकार, यदि कोई बच्चा सीखने में धीमा है, तो शिक्षक को धैर्यपूर्वक सरल भाषा, पुनरावृत्ति और रचनात्मक तरीकों से उसे पढ़ाना चाहिए। इस प्रकार के कौशल केवल तभी विकसित हो सकते हैं जब शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में विशेष एवं समावेशी शिक्षा को पर्याप्त महत्व दिया जाए।

गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए शिक्षक शिक्षा में कई पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है। सबसे पहले, प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को समयानुकूल और व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए, जिसमें न केवल विषय ज्ञान बल्कि बच्चों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं, जीवन कौशल, तकनीकी दक्षता और समावेशी दृष्टिकोण पर भी बल दिया जाए। दूसरे, प्रशिक्षण संस्थानों में योग्य एवं अनुभवी प्रशिक्षक होने चाहिए जो

भावी शिक्षकों को प्रेरित कर सकें। तीसरे, प्रशिक्षण प्रक्रिया केवल सैद्धांतिक न होकर व्यवहारिक और अनुभवात्मक होनी चाहिए ताकि शिक्षक कक्षा की वास्तविक परिस्थितियों में बच्चों के साथ काम करने की क्षमता विकसित कर सकें। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों को निरंतर पेशेवर विकास (Continuous Professional Development) के अवसर दिए जाने चाहिए, जिससे वे समय-समय पर नए ज्ञान और तकनीक को अपनाकर अपनी शिक्षा शैली को और प्रभावी बना सकें।

विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता तब ही संभव है जब शिक्षक संवेदनशील, प्रशिक्षित और सकारात्मक दृष्टिकोण से युक्त हों। यह केवल सरकारी नीतियों या विद्यालयी ढाँचों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों में वास्तविक सुधार करना आवश्यक है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा न केवल विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए अवसर उत्पन्न करेगी, बल्कि सामान्य बच्चों को भी विविधता को स्वीकार करने, सहयोग करने और मानवीय संवेदनाओं को विकसित करने की शिक्षा देगी। इस प्रकार, शिक्षक शिक्षा और विशेष तथा समावेशी शिक्षा की गुणवत्ता एक-दूसरे की पूरक हैं। यदि शिक्षक शिक्षा कमजोर होगी तो समावेशी शिक्षा केवल कागजों पर ही सीमित रह जाएगी, लेकिन यदि शिक्षक शिक्षा गुणवत्तापूर्ण होगी, तो प्रत्येक बच्चा – चाहे वह किसी भी परिस्थिति से क्यों न आता हो – समान अधिकार और अवसर के साथ शिक्षा प्राप्त कर सकेगा। यही किसी भी लोकतांत्रिक और प्रगतिशील समाज का मूल आधार है।

13.7 शिक्षक शिक्षा एवं विशेष तथा समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता

शिक्षा किसी भी समाज के विकास की आधारशिला है और उसकी गुणवत्ता काफी हद तक शिक्षकों की दक्षता पर निर्भर करती है। शिक्षक केवल ज्ञान प्रदान करने वाला व्यक्ति नहीं होता, बल्कि वह बच्चों के व्यक्तित्व, सोच और भविष्य के निर्माण में भी केंद्रीय भूमिका निभाता है। इसलिए शिक्षक शिक्षा (Teacher Education) अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यही वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से भावी शिक्षक आवश्यक ज्ञान, कौशल, दृष्टिकोण और संवेदनशीलता प्राप्त करते हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा का अर्थ है— शिक्षक को विषयगत ज्ञान के साथ-साथ बच्चों की विविध आवश्यकताओं को समझने, नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग करने और शिक्षा को अधिक सजीव एवं उपयोगी बनाने की क्षमता से सुसज्जित करना। यदि शिक्षक शिक्षा प्रभावी और गुणवत्ता आधारित होगी, तो विद्यालयों में शिक्षा की समग्र गुणवत्ता स्वतः बढ़ जाएगी।

विशेष एवं समावेशी शिक्षा (Special and Inclusive Education) के संदर्भ में शिक्षक शिक्षा की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। विशेष शिक्षा का उद्देश्य उन बच्चों को शिक्षा प्रदान करना है जिनमें किसी प्रकार की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी अक्षमता है। वहीं समावेशी शिक्षा इस विचार पर आधारित है कि सभी बच्चे, चाहे उनकी क्षमताएँ और आवश्यकताएँ

कितनी भी भिन्न क्यों न हों, समान रूप से विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर सकें। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक समावेशी दृष्टिकोण अपनाएँ और प्रत्येक विद्यार्थी की विशिष्टता को समझकर उसे उपयुक्त शिक्षण अवसर प्रदान करें। यदि शिक्षक प्रशिक्षित नहीं होंगे या उनमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव होगा, तो समावेशी शिक्षा का उद्देश्य अधूरा रह जाएगा।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा विशेष एवं समावेशी शिक्षा को सफल बनाने की कुंजी है। शिक्षक को यह सिखाया जाना चाहिए कि वह कक्षा में विविध पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थियों के साथ किस प्रकार तालमेल बिठा सके। उदाहरण के लिए, यदि किसी बच्चे को दृष्टि संबंधी समस्या है, तो शिक्षक को ब्रेल, ऑडियो बुक्स या अन्य सहायक तकनीकों का प्रयोग करना आना चाहिए। यदि कोई बच्चा श्रवण बाधित है, तो शिक्षक को सांकेतिक भाषा या दृश्य आधारित शिक्षण सामग्री का उपयोग करना आना चाहिए। इसी प्रकार, यदि कोई बच्चा सीखने में धीमा है, तो शिक्षक को धैर्यपूर्वक सरल भाषा, पुनरावृत्ति और रचनात्मक तरीकों से उसे पढ़ाना चाहिए। इस प्रकार के कौशल केवल तभी विकसित हो सकते हैं जब शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में विशेष एवं समावेशी शिक्षा को पर्याप्त महत्व दिया जाए।

गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए शिक्षक शिक्षा में कई पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है। सबसे पहले, प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को समयानुकूल और व्यवहारिक बनाया जाना चाहिए, जिसमें न केवल विषय ज्ञान बल्कि बच्चों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं, जीवन कौशल, तकनीकी दक्षता और समावेशी दृष्टिकोण पर भी बल दिया जाए। दूसरे, प्रशिक्षण संस्थानों में योग्य एवं अनुभवी प्रशिक्षक होने चाहिए जो भावी शिक्षकों को प्रेरित कर सकें। तीसरे, प्रशिक्षण प्रक्रिया केवल सैद्धांतिक न होकर व्यवहारिक और अनुभवात्मक होनी चाहिए ताकि शिक्षक कक्षा की वास्तविक परिस्थितियों में बच्चों के साथ काम करने की क्षमता विकसित कर सकें। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों को निरंतर पेशेवर विकास (Continuous Professional Development) के अवसर दिए जाने चाहिए, जिससे वे समय-समय पर नए ज्ञान और तकनीक को अपनाकर अपनी शिक्षा शैली को और प्रभावी बना सकें।

विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता तब ही संभव है जब शिक्षक संवेदनशील, प्रशिक्षित और सकारात्मक दृष्टिकोण से युक्त हों। यह केवल सरकारी नीतियों या विद्यालयी ढाँचों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों में वास्तविक सुधार करना आवश्यक है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा न केवल विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए अवसर उत्पन्न करेगी, बल्कि सामान्य बच्चों को भी विविधता को स्वीकार करने, सहयोग करने और मानवीय संवेदनाओं को विकसित करने की शिक्षा देगी। इस प्रकार, शिक्षक शिक्षा और विशेष तथा समावेशी शिक्षा की गुणवत्ता एक-दूसरे की पूरक हैं। यदि शिक्षक शिक्षा कमजोर होगी तो समावेशी शिक्षा केवल कागजों पर ही सीमित रह जाएगी, लेकिन यदि शिक्षक शिक्षा गुणवत्तापूर्ण होगी, तो प्रत्येक बच्चा – चाहे वह किसी भी परिस्थिति से क्यों न

आता हो – समान अधिकार और अवसर के साथ शिक्षा प्राप्त कर सकेगा। यही किसी भी लोकतांत्रिक और प्रगतिशील समाज का मूल आधार है।

13.8 विभिन्न रिपोर्टों में दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा का उल्लेख

13.8.1 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र का घोषणा पत्र:

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 9 दिसम्बर 1975 को विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों की सुरक्षा और संवर्धन हेतु एक विशेष घोषणा पत्र जारी किया। यह घोषणा मानव अधिकारों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जाता है, क्योंकि इसका उद्देश्य विकलांग व्यक्तियों को समाज में समान दर्जा और अवसर प्रदान करना था। इस घोषणा में यह स्पष्ट किया गया कि विकलांगता किसी भी व्यक्ति को मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रताओं से वंचित नहीं कर सकती।

घोषणा पत्र के प्रमुख बिंदु:

घोषणा पत्र के प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं-

समान अधिकारों की मान्यता:

विकलांग व्यक्ति भी समाज के सामान्य नागरिकों के समान ही सभी बुनियादी अधिकारों के हकदार हैं। उनकी विकलांगता की प्रकृति, उसका प्रकार या उसकी गंभीरता चाहे कितनी भी हो, इससे उनके अधिकारों की पात्रता कम नहीं होती।

सम्मानजनक जीवन और सामाजिक सुरक्षा:

विकलांग व्यक्तियों को न केवल आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है बल्कि उन्हें सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर भी मिलना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि उनकी क्षमताओं के अनुरूप उन्हें रोजगार के अवसर प्राप्त हों और वे आत्मनिर्भर जीवन जी सकें।

सामाजिक, पारिवारिक और सांस्कृतिक सहभागिता:

विकलांग व्यक्तियों को अपने परिवारों के साथ रहने, सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने और सांस्कृतिक व मनोरंजनात्मक कार्यों का हिस्सा बनने का पूरा अधिकार है। इस प्रकार उन्हें समाज से अलग-थलग न करके, मुख्यधारा में जोड़े जाने की आवश्यकता है।

13.8.2 अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उठाए गए कदम:

घोषणा पत्र जारी करने के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ ने अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए कई ठोस कदम उठाए :

•पहला कदम (1983-1992):

इस दशक को विकलांग व्यक्तियों के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का दशक घोषित किया गया। इसका उद्देश्य विकलांग व्यक्तियों की समस्याओं पर वैश्विक स्तर पर ध्यान आकर्षित करना और उनके अधिकारों को सुनिश्चित करना था।

• दूसरा कदम (1993–2002):

इस अवधि को एशिया-प्रशांत दशक घोषित किया गया। इसके तहत विशेष रूप से एशियाई देशों में विकलांग व्यक्तियों के विकास, पुनर्वास और उनके सामाजिक समावेशन पर बल दिया गया।

• तीसरा कदम (2003–2012):

एशिया-प्रशांत दशक को पुनः बढ़ाकर 2012 तक कर दिया गया। इस अवधि में विकलांग व्यक्तियों के सशक्तिकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया।

13.8.3 विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन (UNCRPD):

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षित करने के उद्देश्य से एक महत्वपूर्ण संधि (Convention on the Rights of Persons with Disabilities - CRPD) को तैयार किया गया। इसे संक्षेप में यू.एन.सी.आर.पी.डी. (UNCRPD) कहा जाता है। यह दस्तावेज़ विकलांग व्यक्तियों के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनके मौलिक अधिकारों की रक्षा और संवर्धन का आधार है।

संधि की स्वीकृति और हस्ताक्षर:

- संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इस संधि को 13 दिसम्बर 2006 को पारित किया।
- इसके हस्ताक्षर 30 मार्च 2007 से प्रारंभ हुए, जिस दिन भारत सहित 82 देशों ने इस पर हस्ताक्षर किए।
- मार्च 2013 तक कुल 155 देशों ने इस पर हस्ताक्षर किए थे।
- यह संधि 3 मई 2008 को अंतरराष्ट्रीय कानून के रूप में लागू हुई।
- इस संधि में कुल 50 अनुच्छेद (Articles) शामिल हैं, जिनमें विकलांग व्यक्तियों से जुड़े विभिन्न अधिकारों और कर्तव्यों का उल्लेख है।

संधि के कुछ प्रमुख अनुच्छेद:

1. अनु. 6– विकलांग महिलाओं के अधिकार:

इसमें कहा गया है कि सरकारें विकलांग महिलाओं के विकास और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष कदम उठाएँ। चूँकि महिलाएँ दोहरी चुनौतियों (लैंगिक भेदभाव + विकलांगता) का सामना करती हैं, इसलिए उनकी सुरक्षा व सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

2. अनु. 7– विकलांग बच्चों के अधिकार:

यह अनुच्छेद विकलांग बच्चों की स्वतंत्रता, समान अवसर और सम्मानजनक जीवन के अधिकार को सुनिश्चित करता है। प्रत्येक बच्चे को उसकी क्षमताओं के अनुसार उन्नति का अवसर मिलना चाहिए।

3. अनु. 9 – सुगम्यता (Accessibility):

विकलांग व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए आधुनिक तकनीक, उपकरण और अनुकूल माहौल उपलब्ध कराना आवश्यक है। इसमें परिवहन, भवन, सूचना और संचार सुविधाएँ भी शामिल हैं।

4.अनु. 10 – जीवन का अधिकार:

इसमें स्पष्ट किया गया है कि विकलांग व्यक्तियों को भी सामान्य व्यक्तियों की तरह सम्मानपूर्ण और सुरक्षित जीवन जीने का अधिकार है।

5.अनु. 24 – शिक्षा का अधिकार:

प्रत्येक विकलांग बच्चे को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलना चाहिए। सरकारें ऐसी व्यवस्था करें जिससे वे अपनी व्यक्तिगत क्षमता, रचनात्मकता और प्रतिभाओं को विकसित कर सकें।

6.अनु. 27 – काम और रोजगार का अधिकार:

विकलांग व्यक्तियों को समान अवसरों के आधार पर हर प्रकार का काम करने और उपयुक्त वातावरण में रोजगार पाने का अधिकार है। सरकार और समाज को उन्हें आवश्यक प्रशिक्षण और कार्यस्थल पर अनुकूल सुविधाएँ उपलब्ध करानी चाहिए।

संधि की मुख्य विशेषताएँ:

- यह संधि विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को केवल परिभाषित नहीं करती, बल्कि उनके संरक्षण और संवर्धन के लिए राज्यों की जिम्मेदारियाँ भी तय करती है।
- इसमें यह भी निर्देश है कि राज्य विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के क्रियान्वयन और निगरानी हेतु प्रभावी संस्थागत तंत्र विकसित करें।
- इस संधि की एक खास बात यह है कि इसमें विकलांग व्यक्तियों को एक अलग या सीमित श्रेणी में नहीं रखा गया, बल्कि उनकी व्यक्तिगत जरूरतों और विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए समावेशी सुविधाओं की व्यवस्था करने पर बल दिया गया।
- यह संधि इस बात को भी सुनिश्चित करती है कि जिस देश ने इस पर हस्ताक्षर किए हैं, वह अपने संविधान और कानूनों को इसके अनुरूप संशोधित और लागू करें।

13.8.4 राष्ट्रीय नीतियाँ और कानून:

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों और हितों की रक्षा हेतु जो कदम उठाए गए हैं, उनका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। भारत सरकार ने भी इन अंतरराष्ट्रीय संधियों और घोषणाओं के अनुरूप विकलांग व्यक्तियों के लिए कई नीतियाँ और कानून बनाए। इन प्रावधानों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि विकलांग व्यक्ति समाज में सम्मानपूर्वक जीवन जी सकें और उन्हें शिक्षा, रोजगार तथा सामाजिक न्याय से वंचित न होना पड़े।

संवैधानिक प्रावधान:

भारतीय संविधान ने समानता और भेदभाव-निवारण के सिद्धांतों को विशेष महत्व दिया है। इसमें कुछ अनुच्छेद विकलांग व्यक्तियों और अन्य वंचित वर्गों के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक हैं:

1. अनुच्छेद 14 – कानून के समक्ष समानता:

इसमें कहा गया है कि सभी नागरिक कानून की दृष्टि में समान हैं। किसी भी नागरिक को धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या किसी अन्य आधार पर भेदभाव का सामना नहीं करना पड़ेगा।

2. अनुच्छेद 15 – भेदभाव का निषेध:

यह प्रावधान राज्य को यह निर्देश देता है कि वह किसी भी नागरिक के साथ उपर्युक्त आधारों पर भेदभाव नहीं करेगा। इसका अर्थ यह है कि विकलांग व्यक्ति भी शिक्षा, रोजगार और अवसरों में किसी प्रकार के भेदभाव से सुरक्षित रहेंगे।

3. अनुच्छेद 41 – कार्य करने का अधिकार:

इसमें कहा गया है कि राज्य प्रत्येक नागरिक को काम करने और जीविकोपार्जन के अवसर उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा। इसमें विकलांग व्यक्तियों को भी उनकी क्षमता और योग्यता के अनुसार रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना शामिल है।

4. अनुच्छेद 45 – बाल्यावस्था की देखभाल और शिक्षा:

इसमें उल्लेख है कि राज्य 6 वर्ष तक की आयु वाले बच्चों को प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल और शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा। इसका लाभ विकलांग बच्चों को भी मिलना चाहिए।

शिक्षा संबंधी संवैधानिक संशोधन:

• 86वाँ संशोधन (2002):

इस संशोधन के अंतर्गत संविधान में अनुच्छेद 21(A) जोड़ा गया, जिसके अनुसार 6 से 14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया।

• शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (Right to Education Act):

यह कानून 1 अप्रैल 2010 से लागू हुआ। इसके अनुसार हर बच्चे को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है और राज्य को यह सुनिश्चित करना होगा कि कोई भी बच्चा शिक्षा से वंचित न हो। साथ ही, इस शिक्षा के लिए बच्चों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाएगा।

13.8.5 विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति:

विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति 10 जनवरी, 2006 को पारित हुई। इस नीति का मुख्य उद्देश्य विकलांग व्यक्तियों को समान अवसर प्रदान करना, उनके अधिकारों की रक्षा करना तथा समाज में उनकी पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना था। इस नीति का निर्माण ऐसा वातावरण तैयार करने के लिए किया गया,

जिसमें विकलांग व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य एवं सामाजिक जीवन में समान रूप से भाग ले सकें।

इस नीति की प्रमुख बातें:

- विकलांगता की रोकथाम: विकलांगता की रोकथाम के लिए कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया गया।
- पुनर्वास कार्यवाही: नीति के अनुसार पुनर्वास कार्यवाही तीन मुख्य रूपों में होगी –
 - i. शारीरिक पुनर्वास
 - ii. शैक्षिक पुनर्वास
 - iii. आर्थिक पुनर्वास
- विकलांग महिलाओं की सुरक्षा: नीति में उल्लेख किया गया कि विकलांग महिलाओं को अपने बच्चों की देखभाल में कठिनाइयाँ आती हैं, अतः सरकार उन्हें विशेष आर्थिक सहायता प्रदान करेगी।
- विकलांग बच्चों के अधिकार: सरकार इन बच्चों की देखभाल, सुरक्षा और शिक्षा सुनिश्चित करेगी ताकि वे समाज में समान अवसर एवं पूर्ण भागीदारी के साथ जीवन व्यतीत कर सकें।
- सार्वजनिक स्थानों पर सुविधा: विकलांग व्यक्तियों के लिए सार्वजनिक स्थलों पर अवरोध-मुक्त वातावरण तैयार किया जाएगा।
- प्रमाण पत्र की सुविधा: विकलांग व्यक्तियों को बिना किसी कठिनाई के विकलांगता प्रमाण पत्र उपलब्ध कराया जाएगा।
- गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका: विकलांगता के क्षेत्र में कार्यरत गैर-सरकारी संगठनों को प्रोत्साहित किया जाएगा।
- नियमित आँकड़ा संकलन: विकलांग व्यक्तियों से संबंधित आँकड़ों को नियमित रूप से संकलित किया जाएगा।
- कानूनी अधिनियमों का पालन: नीति में यह भी कहा गया कि विकलांग व्यक्तियों से जुड़े अधिनियम जैसे—
 - आर.सी.आई. अधिनियम, 1992
 - पी.डब्ल्यू.डी. अधिनियम, 1995
 - एन.टी. अधिनियम, 1999

का समय-समय पर संशोधन किया जाना चाहिए।

- भविष्य की पहल: इसी क्रम में “विकलांग व्यक्तियों के अधिकार बिल, 2012” को भी ड्राफ्ट किया गया।

13.8.6 शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009: एक विस्तृत और गहन विश्लेषण:

आपके द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर, यहाँ शिक्षा के अधिकार (RTE) अधिनियम, 2009 के प्रमुख पहलुओं का विस्तृत विवरण दिया गया है। यह अधिनियम न केवल एक कानून है, बल्कि भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक ऐतिहासिक बदलाव का प्रतीक है।

अधिनियम का पूरा नाम और उद्देश्य इस अधिनियम का पूरा नाम "बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009" है। इसे 4 अगस्त, 2009 को भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया और 1 अप्रैल, 2010 से इसे पूरे भारत में लागू कर दिया गया। इस अधिनियम के लागू होने से, भारत उन 135 देशों में शामिल हो गया जहाँ शिक्षा को एक मौलिक अधिकार का दर्जा प्राप्त है। इसका मुख्य लक्ष्य 6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना है। यह सुनिश्चित करता है कि कोई भी बच्चा, चाहे वह किसी भी सामाजिक या आर्थिक पृष्ठभूमि से हो, शिक्षा के अधिकार से वंचित न रहे। यह प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21A के तहत भी एक मौलिक अधिकार के रूप में दर्ज है, जो इसे और भी महत्वपूर्ण बनाता है।

अधिनियम की संरचना और प्रमुख अध्याय:

RTE अधिनियम में कुल सात अध्याय हैं, जिनमें से हर एक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं को संबोधित करता है।

- अध्याय 1: प्रारंभिक (परिचय) यह अध्याय अधिनियम के लिए आधारशिला रखता है। इसमें महत्वपूर्ण परिभाषाएँ और अधिनियम का दायरा समझाया गया है। सबसे महत्वपूर्ण बात, इसका खंड 2(d) "अलाभकारी समूह के बच्चे" (child belonging to a disadvantaged group) की अवधारणा को परिभाषित करता है। यह खंड सरकार को अधिकार देता है कि वह अधिसूचना जारी करके किसी भी ऐसे समूह को इसमें शामिल कर सकती है जो किसी भी अन्य कारण से शिक्षा के मामले में अलाभकारी है। यह प्रावधान विकलांग बच्चों के लिए बेहद महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उन्हें अधिनियम के तहत लाने का कानूनी मार्ग प्रदान करता है।
- अध्याय 2: निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार यह अध्याय प्रत्येक बच्चे के लिए शिक्षा को एक कानूनी अधिकार बनाता है। यह स्पष्ट करता है कि सरकार और स्थानीय अधिकारियों की यह जिम्मेदारी है कि वे बच्चों को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएँ, जिसमें स्कूल शुल्क, वर्दी, और पाठ्यपुस्तकों का खर्च शामिल है।
- अध्याय 3: सरकार, स्थानीय प्राधिकरण और माता-पिता के कर्तव्य यह अध्याय शिक्षा की जिम्मेदारी को साझा करता है। यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा केवल सरकार की नहीं, बल्कि स्थानीय प्रशासन (ग्राम पंचायतें, नगरपालिकाएँ) और माता-पिता की भी जिम्मेदारी है। माता-पिता का कर्तव्य है कि वे अपने बच्चों को स्कूल भेजें और स्थानीय निकायों को यह सुनिश्चित करना है कि उनके क्षेत्र में सभी बच्चों के लिए स्कूल उपलब्ध हों।

-
- अध्याय 4: विद्यालयों और शिक्षकों की जिम्मेदारियाँ यह अध्याय शिक्षा की गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित करता है। इसमें विद्यालयों के लिए कुछ मानक निर्धारित किए गए हैं, जैसे पर्याप्त कक्षाएँ, शिक्षक-छात्र अनुपात, पुस्तकालय और खेल का मैदान। यह शिक्षकों की योग्यता और उनकी जिम्मेदारियों को भी परिभाषित करता है, ताकि शिक्षा का स्तर ऊँचा बना रहे।
 - अध्याय 5: पाठ्यक्रम और प्राथमिक शिक्षा का समापन यह अध्याय एक ऐसे पाठ्यक्रम की बात करता है जो बच्चे के सर्वांगीण विकास पर केंद्रित हो। यह केवल किताबी ज्ञान पर निर्भर नहीं है, बल्कि बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास को भी बढ़ावा देता है। इस अध्याय का एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह भी है कि किसी भी बच्चे को प्राथमिक शिक्षा पूरी होने तक किसी भी कक्षा में रोका नहीं जाएगा (no detention policy)।
 - अध्याय 6: बच्चों के अधिकारों का संरक्षण यह अध्याय सुनिश्चित करता है कि बच्चों के अधिकारों का उल्लंघन न हो। इसमें राष्ट्रीय और राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग (NCPCR और SCPCR) को RTE अधिनियम के कार्यान्वयन की निगरानी करने और बच्चों की शिकायतों को सुनने का अधिकार दिया गया है।

विकलांग बच्चों का समावेशन:

जैसा कि उपलब्ध जानकारी में बताया गया है, RTE अधिनियम में विकलांग बच्चों को सीधे तौर पर एक अलग श्रेणी के रूप में नहीं जोड़ा गया था। हालाँकि, खंड 2(d) एक रास्ता प्रदान करता है। इस खंड के अनुसार, सरकार अधिसूचना जारी कर सकती है और विकलांग बच्चों को "अलाभकारी समूह" में शामिल कर सकती है। इस प्रावधान का उपयोग करके, सरकार ने यह सुनिश्चित किया है कि विकलांग बच्चों को भी शिक्षा का समान अधिकार मिले और वे मुख्यधारा की शिक्षा प्रणाली का हिस्सा बन सकें। यह अधिनियम समावेशी शिक्षा की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सकल नामांक अनुपात (Gross Enrolment Ratio – GER) के बीच गहरा संबंध है क्योंकि किसी भी समाज या राष्ट्र की प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि कितने बच्चे विद्यालयों में नामांकित हैं और उन्हें कैसी शिक्षा प्राप्त हो रही है। सकल नामांक अनुपात यह बताता है कि किसी स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने योग्य आयु-वर्ग के कितने बच्चे वास्तव में विद्यालय में नामांकित हैं, जबकि शिक्षा की गुणवत्ता यह सुनिश्चित करती है कि नामांकन के बाद वे विद्यार्थी विद्यालय में टिके रहें, नियमित रूप से पढ़ाई करें और अच्छे अधिगम परिणाम प्राप्त करें। यदि शिक्षा की गुणवत्ता कमजोर है, विद्यालयों में अधोसंरचना की कमी है, शिक्षक प्रशिक्षित नहीं हैं या शिक्षण पद्धति नीरस है, तो छात्र केवल नामांकन करवा कर विद्यालय छोड़ देते हैं, जिससे GER घटने लगता है। इसके विपरीत, जब शिक्षा आकर्षक, रचनात्मक और जीवनोपयोगी होती है, तब विद्यार्थी न केवल विद्यालय आते हैं बल्कि उसमें रुचि लेकर पढ़ते भी हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा में आधुनिक संसाधनों का प्रयोग, प्रशिक्षित और

संवेदनशील शिक्षकों की भूमिका, गतिविधि-आधारित अधिगम, समावेशी दृष्टिकोण और विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं का ध्यान शामिल होता है। ऐसी शिक्षा से बच्चों में सीखने का आत्मविश्वास पैदा होता है, उनकी सोचने-समझने की क्षमता विकसित होती है और वे विद्यालय से जुड़ाव महसूस करते हैं। परिणामस्वरूप, ड्रॉपआउट दर कम होती है और सकल नामांक अनुपात बढ़ता है। अभिभावक भी तभी अपने बच्चों को नियमित रूप से विद्यालय भेजने के लिए प्रेरित होते हैं जब उन्हें यह विश्वास होता है कि वहाँ उनके बच्चे को केवल प्रमाणपत्र नहीं, बल्कि वास्तविक ज्ञान और कौशल मिल रहा है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा केवल शहरी या संपन्न वर्ग तक सीमित न रहकर ग्रामीण, पिछड़े, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों, विशेषकर बालिकाओं और विकलांग विद्यार्थियों तक पहुँचे, तभी GER में व्यापक वृद्धि हो सकती है। समावेशी और समान अवसर आधारित शिक्षा समाज में न्याय और समानता की भावना को सुदृढ़ करती है और शिक्षा प्रणाली को अधिक विश्वसनीय बनाती है। यदि केवल विद्यालय खोलने या नामांकन बढ़ाने पर ध्यान दिया जाए और गुणवत्ता की अनदेखी हो, तो आंकड़ों में तो वृद्धि दिखाई देगी लेकिन वास्तविक अधिगम नहीं होगा और विद्यार्थी भविष्य में शिक्षा से विमुख हो जाएंगे। इसलिए शिक्षा नीति और योजनाओं में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सकल नामांक अनुपात दोनों को समान महत्व देना चाहिए। एक ओर नामांकन बढ़ाने से शिक्षा की पहुँच का विस्तार होता है, वहीं दूसरी ओर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उस पहुँच को स्थायित्व और सार्थकता प्रदान करती है। उदाहरण के लिए, मध्याह्न भोजन योजना (Mid-Day Meal) या निःशुल्क पाठ्यपुस्तक जैसी योजनाएँ बच्चों को विद्यालय आकर्षित तो करती हैं, लेकिन यदि विद्यालय में शिक्षक अनुपस्थित हों या शिक्षा नीरस हो, तो बच्चे अधिक दिन तक नहीं टिक पाते। इसके विपरीत, यदि यही योजनाएँ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ जुड़ी हों, तो बच्चों का नामांकन भी बढ़ेगा और उनकी उपलब्धियाँ भी। इस प्रकार, GER और शिक्षा की गुणवत्ता एक-दूसरे के पूरक हैं और दोनों के बिना शिक्षा प्रणाली अधूरी है। किसी भी राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा व्यापक रूप से सुलभ हो और उसमें उच्च गुणवत्ता सुनिश्चित की जाए। जब प्रत्येक बच्चा विद्यालय में नामांकित होगा और उसे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलेगी, तभी वह आत्मनिर्भर नागरिक बन सकेगा, राष्ट्र की उत्पादक शक्ति को बढ़ा सकेगा और समाज में सकारात्मक बदलाव ला सकेगा। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि शिक्षा की गुणवत्ता और सकल नामांक अनुपात का रिश्ता गाड़ी के दो पहियों की तरह है – यदि एक कमजोर होगा तो दूसरी की गति भी धीमी हो जाएगी, और यदि दोनों समान रूप से सशक्त होंगे तो राष्ट्र तेजी से विकास की ओर अग्रसर होगा।

13.9 सारांश

विशेष एवं समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी बच्चों, विशेषकर दिव्यांग बच्चों, को समान शैक्षिक अवसर प्रदान करना है। विशेष शिक्षा विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए व्यक्तिगत शिक्षण

कार्यक्रमों पर केंद्रित है, जबकि समावेशी शिक्षा सभी बच्चों को एक ही माहौल में शिक्षा देने पर जोर देती है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा विद्यार्थियों में ज्ञान, कौशल, रचनात्मकता और जीवन मूल्यों का विकास करती है, जिसके लिए प्रशिक्षित और संवेदनशील शिक्षक आवश्यक हैं। शिक्षक शिक्षा विशेष और समावेशी शिक्षा की सफलता की कुंजी है, जो विविध आवश्यकताओं को समझने और सहायक तकनीकों (जैसे ब्रेल, सांकेतिक भाषा) का उपयोग सुनिश्चित करती है। सकल नामांकन अनुपात (GER) शिक्षा की पहुंच और गुणवत्ता का महत्वपूर्ण सूचकांक है, जो नीतिगत सुधारों का आधार बनता है। UNCRPD (2006), शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) और राष्ट्रीय नीतियों ने दिव्यांग बच्चों की शिक्षा को बढ़ावा दिया, किंतु कार्यान्वयन में कमी और संसाधनों की कमी चुनौतियां हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और GER एक-दूसरे के पूरक हैं, जो समाज में समानता और प्रगति को सशक्त करते हैं। यह न केवल अधिकार, बल्कि सामाजिक दायित्व भी है।

13.10 अभ्यास प्रश्न

विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षा की परिभाषाओं तथा उनके महत्व को स्पष्ट कीजिए?

- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से आप क्या समझते हैं? विशेषकर विशेष आवश्यकता वाले बच्चों और सामान्य बच्चों के संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता को उदाहरण सहित समझाइए?
- सकल नामांकन अनुपात (GER) की परिभाषा दीजिए। इसके मापन के लिए प्रयुक्त सूत्र तथा शिक्षा व्यवस्था में इसके महत्व को विस्तार से समझाइए?
- शिक्षक शिक्षा (Teacher Education) का विशेष और समावेशी शिक्षा में क्या महत्व है?
- समावेशी शिक्षा के उद्देश्यों और उसकी चुनौतियों पर प्रकाश डालते हुए बताइए कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में इसे प्रभावी रूप से लागू करने के लिए किन कदमों की आवश्यकता है?
- विभिन्न अंतरराष्ट्रीय घोषणाओं और संधियों (जैसे – संयुक्त राष्ट्र का विकलांग अधिकार घोषणा पत्र, UNCRPD) ने विकलांग विद्यार्थियों की शिक्षा में क्या योगदान दिया है? विस्तार से वर्णन कीजिए।
- भारतीय संविधान और शिक्षा संबंधी कानूनों (जैसे अनुच्छेद 14, 15, 21A, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009) में विकलांग और सामान्य बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण एवं समान शिक्षा सुनिश्चित करने हेतु किए गए प्रावधानों की व्याख्या कीजिए।

-
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षा को सफल बनाने के लिए किन-किन सुधारों की आवश्यकता है? प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, व्यावहारिक शिक्षण, सतत व्यावसायिक विकास और तकनीकी दक्षता के संदर्भ में उत्तर दीजिए।
 - राष्ट्रीय नीतियों और रिपोर्टों में दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा को लेकर उठाए गए कदमों का विवेचन कीजिए। आपके विचार में इन कदमों की क्या सीमाएँ हैं और इन्हें और प्रभावी कैसे बनाया जा सकता है?
 - गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सकल नामांकन अनुपात (GER) के बीच संबंध को स्पष्ट कीजिए। उदाहरण सहित बताइए कि शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होने से GER पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है।
-

13.11 सन्दर्भ सूचि:

- पाठक, पी. डी., एवं गोयल, गुरुराज. (2010). भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ (संशोधित एवं विस्तारित संस्करण). अग्रवाल प्रकाशन।
- सिंह, यू. के., एवं सुदर्शन, के. एन. (2010). शिक्षक शिक्षा (पुनर्मुद्रण). डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. (मूल कार्य 1996 प्रकाशित)।
- उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय. (2014). समावेशी शिक्षा (MAED 206) (प्रथम संस्करण). उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी. (पुनर्मुद्रण 2019)।
- शर्मा, माधुलिका. (2009). दूरस्थ शिक्षा: संकल्पना एवं सिद्धांत. कनिष्का प्रकाशक एवं वितरक।
- दश, नीना. (2024). विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा. नई दिल्ली, भारत: अटलांटिक प्रकाशक और वितरक (प्रा.) लिमिटेड.
- बास्के, सुनील कुमार, रे, देवानंद, और रॉय, अनंत. (2024). राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी शिक्षा. लुंड, स्वीडन: रेडशाइन पब्लिकेशन.

इकाई-14

विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 शैक्षिक बहिष्कार का अर्थ

14.4 शैक्षिक बहिष्कार के कारण

14.5 शैक्षिक बहिष्कार का परिणाम

14.6 शैक्षिक बहिष्कार रोकने के उपाय

14.7 समावेशी प्रथाओं की गुणवत्ता का मूल्यांकन

14.8 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में भविष्य का गुणवत्ता आश्वासन: विशेष एवं समावेशी संस्थानों का ऑडिट और मान्यता (अक्रेडिटेशन)

14.9 निष्कर्ष

14.10 अभ्यास प्रश्न

14.11 सन्दर्भ सूची

14.1 प्रस्तावना

शिक्षा केवल ज्ञान का अर्जन नहीं है बल्कि यह व्यक्ति के सामाजिक, मानसिक और व्यावसायिक विकास का आधार भी है। क्योंकि शिक्षा की सहायता से व्यक्ति का संपूर्ण विकास होता है। जिस व्यक्ति अपने सभी विशेषताओं से अवगत होकर उनका उपयोग करदेश और समाज को विकसित करता है। शिक्षा के इसी महत्व की वजह से संविधान के अनुच्छेद 21ए में शिक्षा को मौलिक अधिकार घोषित किया गया है साथ ही 2009 में लागू शिक्षा का अधिकार अधिनियम ने यह सुनिश्चित किया कि 6 से 14 वर्ष तक की शिक्षा सभी बच्चों को निशुल्क और अनिवार्य रूप से मिले। समावेशी शिक्षा आज के शैक्षिक प्रणाली का अत्यंत महत्वपूर्ण आयाम है जिसकी सहायता से प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व क्षमताओं और आत्मनिर्भरता का विकास हो रहा है शिक्षा में गुणवत्ता का होना आवश्यक है क्योंकि शिक्षा को अपने लक्ष्य प्राप्त करने के लिए गुणवत्ता पूर्ण होना अति आवश्यक है। इस इकाई के अंतर्गत सामान्यतः शिक्षा के गुणवत्ता और और इस गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए विभिन्न सरकार द्वारा किए गए पहलू और प्रयासों का अध्ययन किया जाएगा।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थियों यह समझ पायेंगे कि –

- विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन का महत्व क्या है?
- बहिष्करण (Exclusion) को रोकने के उपाय क्या-क्या हो सकते हैं।
- समावेशन का आकलन किन सूचकांकों (Inclusion Index) के आधार पर किया जा सकता है।
- विशेष विद्यालयों तथा गृह-आधारित शिक्षा की गुणवत्ता का मूल्यांकन किस प्रकार किया जाता है।
- भविष्य में विशेष एवं समावेशी शिक्षा संस्थानों में ऑडिट और मान्यता (Accreditation)

की आवश्यकता क्यों पड़ती है।

14.3 शैक्षिक बहिष्कार का अर्थ

बहिष्कार शब्द की उत्पत्ति संस्कृत विषय से मानी जाती है जिसका अर्थ है बाहर करना या दूर कर देना। जब बहिष्कार शब्द के साथ शिक्षा को जोड़ दिया जाता है तो शैक्षिक बहिष्कार शब्द की उत्पत्ति होती है जिसका अर्थ शिक्षा से वंचित कर देना। शैक्षिक बहिष्कार एक प्रक्रिया है जिसमें छात्रों को शैक्षिक प्रक्रिया से वंचित कर उन्हें उनकी विकास की प्रक्रिया से दूर कर दिया जाता है।

14.4 शैक्षिक बहिष्कार के कारण

शैक्षिक बहिष्कार के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं-

- गरीबी और आर्थिक पिछड़ापन:

परिवार की आए उसकी प्राथमिकताओं का निर्धारण करती है। जब परिवार की आई कम हो या आर्थिक रूप से पिछड़ी हो तो व्यक्ति का ध्यान शिक्षा की तरफ नहीं जाता है। अतः शैक्षिक बहिष्कार के मुख्य कर्म में से गरीबी और आर्थिक पिछड़ापन भी है।

- सामाजिक भेदभाव:

हम मानव सामाजिक प्राणी है समझ में अपनी विभिन्न आवश्यकताओं को संतुष्ट करते हैं किंतु प्रयास समाज में आय जाति धर्म आदि के आधार पर भेदभाव पाए जाते हैं। यह भेदभाव भी शैक्षिक बहिष्कार का एक कारण है जो दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

- विशेष आवश्यकताओं की अनदेखी:

विशेष आवश्यकता या दिव्यांग छात्रों की ज़रूरतें भिन्न-भिन्न होती हैं। उनकी आवश्यकताओं की जानकारी के लिए विद्यालय में प्रशिक्षित शिक्षकों और घर पर आधारभूत प्रशिक्षित माहौल और माता-पिता की आवश्यकता होती है। जिनकी कमी भी बहिष्कार का कारण है।

- भौगोलिक दूरी:

हमारा देश भारत भौगोलिक स्थिति में एक धनी देश है। हमारे देश में प्रायः कहीं पर्वत, पठार, नदियाँ, सागर आदि हमारे देश को प्राकृतिक रूप से धनी बनाती हैं। किंतु कभी-कभी यह भौगोलिक स्थिति छात्रों तक स्कूल की पहुँच या स्कूल तक छात्रों की पहुँच को बाधित करती है। अतः कुछ परिस्थितियों में भौगोलिक दूरी भी शैक्षिक बहिष्कार को बल देती है।

- परिवार और सामाजिक दबाव:

परिवार और समाज हम मानव के लिए अति आवश्यक हैं, यह हमारे विकास के लिए आधार बनती है। किंतु कुछ परिस्थितियों में परिवार और समाज के दबाव से छात्रों में शैक्षिक बहिष्कार की मात्रा बढ़ती है। उदाहरण के लिए बाल विवाह, घरेलू जिम्मेदारियाँ आदि।

14.5 शैक्षिक बहिष्कार का परिणाम

14.5 शैक्षिक बहिष्कार का परिणाम:

शैक्षिक बहिष्कार के परिणाम को हम सिर्फ व्यक्तिगत रूप में हुई नुकसान को न देखकर उसके समुचित समाज और राष्ट्र के प्रभाव के रूप में देखते हैं। शैक्षिक बहिष्कार के परिणाम को मुख्यतः तीन बिंदुओं में देखा जाता है।

- व्यक्तिगत स्तर पर:

शिक्षा व्यक्ति को वह आधार देती है, जिसकी सहायता से व्यक्ति अपने उज्ज्वल भविष्य की नींव रखता है। शिक्षा की सहायता से व्यक्ति अपनी आधारभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने योग्य बनता है। किंतु शैक्षिक बहिष्कार के कारण व्यक्ति आवश्यकता अनुसार शिक्षा नहीं प्राप्त कर सकता है। जिससे वह एक उपयुक्त आय को अर्जित करने में असमर्थ रहता है।

- सामाजिक स्तर पर:

हम सभी इस बात से अवगत हैं कि शिक्षित समाज अपने सामाजिक लक्ष्य को पूर्ण करने में समर्थ होता है। जब समाज में अशिक्षित व्यक्तियों की संख्या ज्यादा होती है तो समाज में कई तरह की अव्यवस्थाएँ फैलते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि शैक्षिक बहिष्कार का प्रभाव सामाजिक स्तर पर भी देखा जा सकता है और यदि शैक्षिक बहिष्कार को नहीं रोका गया तो समाज पर नकारात्मक प्रभाव को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

- राष्ट्रीय स्तर पर:

मानव एक ऐसा समूह है जो देश में व्याप्त संसाधनों का उपयोग कर देश को विकास के पथ पर अग्रसर करता है देश के लिए एक कुशल मानव पूंजी का होना अति आवश्यक होता है जो देश को सफलता के पथ पर अग्रसर करती है। किंतु शैक्षिक बहिष्कार के कारण देश में मानव संसाधन की गुणवत्ता घाटी जा रही है जिससे देश का विकास धीमा हो जाता है।

14.6 शैक्षिक बहिष्कार रोकने के उपाय:

शैक्षिक बहिष्कार रोकने के उपाय निम्नलिखित हैं-

- सभी बच्चों के लिए निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा।
 - विद्यालयों में सुगम्य अवसंरचना और संसाधनों की उपलब्धता।
 - माता-पिता और समुदाय में सक्रिय भागीदारी।
 - विशेष शिक्षकों का प्रशिक्षण और संसाधनों की उपलब्धता।
 - समाज में जागरूकता।
 - सरकार द्वारा दी गई सुविधाओं का विभिन्न माध्यमों से प्रचार।
 - शिक्षा के महत्व को नाटकों, कविता, संगीत आदि के माध्यम से जनसमूह तक पहुंचाना।
 - विशेष आवश्यकता वाले छात्रों को समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करना।
 - शिक्षा के उपरान्त मिले लाभ को जनकल्याण तक पहुंचाना।
 - समाज में आए मूलभूत परिवर्तन को भी समाज के आगे प्रस्तुत करना।
 - समाज के लिए विभिन्न रोल मॉडल तैयार करना।
-

14.7 समावेशी प्रथाओं की गुणवत्ता का मूल्यांकन

समावेशी शिक्षा एक नवीन शिक्षा पद्धति का उदाहरण है जिसमें दिव्यांग और दिव्यांग रहित छात्र एक साथ एक ही वातावरण में अपनी विशेषताओं के आधार पर, अपना विकास करते हैं। समावेशी व्यवस्था की गुणवत्ता का मूल्यांकन हम निम्न बिंदुओं के आधार पर कर सकते हैं।

• पहुंच:

शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जो सामान्यतः सभी विद्यार्थियों की पहुंच में आसानी से आ सके। क्योंकि जब विद्यालय किसी दुर्गम स्थान पर होता है तो वहां पर विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों की पहुंच ना हो पाने की वजह से छात्र शिक्षा को बाधित कर देते हैं।

• पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धति:

पाठ्यक्रम पूरी शिक्षा व्यवस्था की वह कड़ी है जो छात्र और शिक्षकों को जोड़ती है और छात्रों के व्यवहार में वंचित परिवर्तन के लिए एक मैदान तैयार करती है। शिक्षण पद्धति एक शिक्षक की वह ताकत है जो शिक्षक और छात्र के मध्य संबंध स्थापित करने तथा अपने छात्रों में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षक द्वारा प्रयोग की जाती है। पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धति भी समावेशी शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता के मापन का आधार है।

- मूल्यांकन पद्धति:

मूल्यांकन की प्रक्रिया पूरे शिक्षा व्यवस्था की वह प्रक्रिया है जिसकी सहायता से शिक्षक और छात्र दोनों ही अपना मूल्यांकन करते हैं। शिक्षक की यह देखा है कि वह जिस उद्देश्य के साथ पाठ्यक्रम का समापन किया है क्या वह पूर्ण हुआ है या नहीं। साथ ही विद्यार्थी अपने उज्ज्वल भविष्य की एक आरेख मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा तैयार करता है। अतः समावेशी शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता का आधार में मूल्यांकन की भागीदारी होती है।

- अभिभावकों की भागीदारी:

अभिभावक छात्र के जीवन में एक जड़ का कार्य करते हैं। हमारी जड़ जितनी मजबूत होगी वृक्ष की ऊंचाई उसी के ऊपर निर्भर होती है अर्थात् अभिभावकों की भागीदारी छात्रों के जीवन में अतुल्य होती है। जब हम गुणवत्ता का मूल्यांकन करते हैं तो यह भी देखते हैं कि अभिभावक और छात्रों के बीच या बच्चों के बीच कैसा संबंध है वह किस तरीके से एक दूसरे के साथ वार्तालाप करते हैं और उनका भविष्य के लिए राह दिखाते हैं।

- सामाजिक दृष्टिकोण:

व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है वह अपने द्वारा अर्जित ज्ञान का प्रदर्शन समाज में करता है और समाज के ऊपर विभिन्न कई आवश्यकताओं के लिए निर्भर करता है अतः किसी शिक्षा व्यवस्था के मूल्यांकन करते समय हमें समाज की स्थिति या उसके सामाजिक दृष्टिकोण को देखना आवश्यक होता है।

14.8 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में भविष्य का गुणवत्ता आश्वासन: विशेष एवं समावेशी संस्थानों का ऑडिट और मान्यता (अक्रेडिटेशन)

भविष्य में विशेष और समावेशी शिक्षा की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि उसकी गुणवत्ता को किस प्रकार से स्थायी रूप से सुनिश्चित किया जाता है। इसके लिए ऑडिट (Audit) और मान्यता (Accreditation) की प्रक्रिया आवश्यक है।

ऑडिट का अर्थ है— संस्थानों की कार्यप्रणाली का व्यवस्थित मूल्यांकन। इसमें यह देखा जाता है कि विद्यालय या संस्था में समावेशन के लिए कितने संसाधन उपलब्ध हैं, शिक्षक कितने प्रशिक्षित हैं, बच्चों के सीखने के परिणाम क्या हैं और क्या शिक्षा नीति के मानकों का पालन हो रहा है।

मान्यता (Accreditation) उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसमें किसी संस्था को एक मानक स्तर की पुष्टि दी जाती है। यह प्रमाणित करता है कि संस्था निर्धारित गुणवत्ता मानकों पर खरी उतर रही है। विशेष और समावेशी शिक्षा संस्थानों के लिए मान्यता प्राप्त करना आवश्यक है ताकि वे न केवल अपनी कार्यप्रणाली में पारदर्शिता लाएँ, बल्कि निरंतर गुणवत्ता सुधार की दिशा में कार्य करें।

भविष्य में, डिजिटल उपकरणों और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसी तकनीकों का उपयोग करके गुणवत्ता का और भी गहन मूल्यांकन संभव होगा। इसके साथ ही, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बने इनक्लूजन इंडेक्स (Inclusion Index) जैसे मानकों को अपनाना भी जरूरी है।

इस दिशा में सरकार, गैर-सरकारी संगठन और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियाँ मिलकर कार्य कर सकती हैं ताकि हर संस्था की नियमित निगरानी हो और गुणवत्ता में गिरावट न आए।

इस प्रकार, ऑडिट और मान्यता की प्रक्रिया समावेशी शिक्षा को केवल औपचारिकता नहीं बल्कि गुणवत्ता और समान अवसर की गारंटी बनाने का कार्य करती है।

14.9 निष्कर्ष:

शिक्षा व्यक्ति और समाज के विकास की सबसे महत्वपूर्ण नींव है। विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित करना आवश्यक है ताकि कोई भी बच्चा शैक्षिक प्रक्रिया से वंचित न रह जाए। शैक्षिक बहिष्कार के कारण व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं, जिन्हें रोकने के लिए सरकार, समाज, अभिभावक और शिक्षकों को मिलकर प्रयास करने की आवश्यकता है। समावेशी शिक्षा केवल दिव्यांग और सामान्य छात्रों को साथ लाने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा वातावरण तैयार करती है जिसमें सभी विद्यार्थियों को समान अवसर मिलते हैं। भविष्य में ऑडिट और मान्यता (Accreditation) की प्रक्रिया, आधुनिक तकनीकों का प्रयोग और अंतरराष्ट्रीय मानकों को अपनाना इस शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता को और मजबूत बनाएगा। इस प्रकार, समावेशी और विशेष शिक्षा गुणवत्ता, समान अवसर और आत्मनिर्भर समाज की स्थापना का आधार है।

14.10 अभ्यास प्रश्न:

लघु उत्तरीय प्रश्न:

- शिक्षा को मौलिक अधिकार क्यों कहा गया है?
- शैक्षिक बहिष्कार से आप क्या समझते हैं?
- शैक्षिक बहिष्कार के दो कारण लिखिए।

- समावेशी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य क्या है?

- ऑडिट और मान्यता (Accreditation) में क्या अंतर है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न:

- शैक्षिक बहिष्कार के कारणों और परिणामों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

- समावेशी शिक्षा की गुणवत्ता का मूल्यांकन किन-किन बिंदुओं के आधार पर किया जाता है? स्पष्ट कीजिए।

- विशेष एवं समावेशी शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए सरकार और समाज को किन-किन उपायों को अपनाना चाहिए?

- शैक्षिक बहिष्कार रोकने के उपायों को उदाहरण सहित समझाइए।

- भविष्य में विशेष एवं समावेशी शिक्षा संस्थानों में ऑडिट और मान्यता (Accreditation) की आवश्यकता क्यों होगी? विस्तार से लिखिए।

14.11 सन्दर्भ सूचि

- पाठक, पी. डी., एवं गोयल, गुरुराज. (2010). भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ (संशोधित एवं विस्तारित संस्करण). अग्रवाल प्रकाशन।

- सिंह, यू. के., एवं सुदर्शन, के. एन. (2010). शिक्षक शिक्षा (पुनर्मुद्रण). डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. (मूल कार्य 1996 प्रकाशित)।

- उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय. (2014). समावेशी शिक्षा (MAED 206) (प्रथम संस्करण). उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी. (पुनर्मुद्रण 2019)।

- शर्मा, माधुलिका. (2009). दूरस्थ शिक्षा: संकल्पना एवं सिद्धांत. कनिष्का प्रकाशक एवं वितरक।

- दश, नीना. (2024). विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा. नई दिल्ली, भारत: अटलांटिक प्रकाशक और वितरक (प्रा.) लिमिटेड.

- बास्के, सुनील कुमार, रे, देवानंद, और रॉय, अनंत. (2024). राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के परिप्रेक्ष्य में समावेशी शिक्षा. लुंड, स्वीडन: रेडशाइन पब्लिकेशन.

इकाई 15

विशेष एवं समावेशी शिक्षा में वर्तमान रुझान और भावी सम्भावनाये Currents Trends and Future Perspectives in Special and inclusive Education

- 15.1 प्रस्तावना
 - 15.2 उद्देश्य
 - 15.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में वर्तमान रुझान और भावी सम्भावनाये
 - 15.4 समावेशी कक्षाएँ-सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों का सहयोग
 - 15.4.1 सहयोग के प्रमुख पहलू
 - 15.4.2 सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों की प्रमुख भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ
 - 15.4.3 सहयोग के लिए सह-शिक्षण मॉडल
 - 15.4.4 प्रभावी सहयोग के लिए रणनीतियाँ
 - 15.4.5 सहयोग की सामान्य चुनौतियाँ और समाधान
 - 15.5 प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल शिक्षा को समावेशी और विशेष स्कूली शिक्षा की सफलता के साथ जोड़ना
 - 15.5.1 प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल क्यों महत्वपूर्ण हैं
 - 15.5.2 पूर्वस्कूली शिक्षा की भूमिका
 - 15.5.3 समावेशन को मजबूत करने में पूर्वस्कूली शिक्षा की भूमिका
 - 15.5.4 बाद की स्कूली शिक्षा के लिए प्रारंभिक हस्तक्षेप के लाभ
 - 15.5.5 सुचारू संक्रमण के लिए सर्वोत्तम अभ्यास
 - 15.5.6 प्रारंभिक बाल्यावस्था कार्यक्रमों का स्कूल की सफलता पर दीर्घकालिक प्रभाव
 - 15.6 तकनीकी को एकीकृत करना और दोहरा अपवादात्मक (2E) बच्चों को मान्यता देना
 - 15.6.1 दोहरा अपवादात्मक बच्चे
 - 15.6.2 2e बच्चों की विशेषताएँ
 - 15.6.3 2e बच्चों की शिक्षा में चुनौतियाँ
-

-
- 15.6.4 2e छात्रों के लिए प्रौद्योगिकी
 - 15.6.5 2e बच्चों की प्रतिभा को समृद्ध करना
 - 15.6.6 2e बच्चों को सहायता देने के लिए प्रभावी रणनीतियाँ
 - 15.6.7 2e शिक्षार्थियों के लिए प्रौद्योगिकी कार्यान्वयन के सर्वोत्तम अभ्यास
 - 15.7 सारांश
 - 15.8 शब्दावली
 - 15.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
 - 15.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
 - 15.11 निबन्धात्मक प्रश्न
-

15.1 प्रस्तावना

विशेष शिक्षा की यात्रा संक्रमण के विभिन्न चरणों से होकर गुजरी है विशेष शिक्षा आंदोलन को तीन मुख्य चरणों के माध्यम से देखा जा सकता है जिन्हें बहिष्कार और अलगाव, पहुंच और समावेशन, जवाबदेही और सशक्तिकरण के रूप में पहचाना जा सकता है। ऐतिहासिक रूप से 1970 के पहले तक विकलांगता को प्रकृति की विसंगति माना जाता था और विकलांग व्यक्तियों को अलगाव और बहिष्कार के लिए मजबूर किया जाता था। माता-पिता और अभिभावकों ने इस दृष्टिकोण को बदलने का प्रयास किया 80 के दशक में नागरिक अधिकार युग के दौरान विकलांग लोगों के लिए पहुंच और समावेशन के अधिकार सामने आए इस का प्रतिफल ये हुआ की 90 के दशक से विकलांग व्यक्ति अधिक सशक्त रूप से सामने आये और वे मुख्यधारा में बिना विकलांगता वाले लोगों के अधीनस्थ होने के बजाय समाज में अपना स्थान स्वयं से परिभाषित करने लगे। इसके अतिरिक्त स्कूल में सभी छात्रों को समान शैक्षिक अवसर देने के लिए जवाबदेह बनाने की प्रक्रिया विकसित की गई है वर्तमान में विशेष एवं समावेशी शिक्षा में सहायक तकनीक और व्यक्तिगत शिक्षण का उपयोग, अधिक लचीले वातावरण बनाने के लिए यूनिवर्सल डिजाइन फॉर लर्निंग (UDL) को अपनाना, प्रारंभिक हस्तक्षेप और अभिभावकों की भागीदारी पर अधिक ध्यान, और अधिक समावेशी संस्कृति को बढ़ावा देने वाले सामाजिक दृष्टिकोणों का विकास शामिल है।

15.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- विशेष एवं समावेशी शिक्षा में वर्तमान रुझान और भावी सम्भावनायें को परिभाषित कर सकेंगे।
 - समावेशी कक्षाओं में सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों के सहयोग को जान पाएंगे।
-

-
- प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल शिक्षा को समझ सकेंगे
 - समावेशी और विशेष स्कूली शिक्षा के साथ प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल शिक्षा को जोड़ पायेंगे
 - दोहरा अपवादात्मक बच्चों (2E) की शिक्षा में एकीकृत तकनीकी का प्रयोग कर सकेंगे
-

15.3 विशेष एवं समावेशी शिक्षा में वर्तमान रुझान और भावी सम्भावनायें (Currents Trends and Future Perspectives in Special and inclusive Education)

विशेष एवं समावेशी शिक्षा में वर्तमान रुझान प्रौद्योगिकी की उन्नति, व्यक्तिगत शिक्षण और सामाजिक-भावनात्मक विकास पर केंद्रित हैं। भविष्य के परिप्रेक्ष्य में अधिक प्रभावी और सशक्त शैक्षिक वातावरण बनाने के लिए अधिक समानता और पहुँच, उन्नत शिक्षक प्रशिक्षण और हाइब्रिड शिक्षण मॉडल शामिल हैं। पिछले कुछ वर्षों में विशेष शिक्षा में उल्लेखनीय विकास हुआ है, पारंपरिक तरीकों से आगे बढ़कर, शिक्षार्थियों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने वाली नवीन रणनीतियों को अपनाया गया है। जैसे-जैसे हम एक नए युग में प्रवेश कर रहे हैं, विशेष शिक्षा के क्षेत्र को आकार देने वाले निम्लिखित नवीनतम रुझानों पर दृष्टि रखना अत्यंत आवश्यक है।

1. समावेशी प्रौद्योगिकी(Inclusive Technology): विशेष शिक्षा में सबसे प्रमुख रुझानों में से एक समावेशी तकनीकों का एकीकरण है। सहायक उपकरणों से लेकर विशिष्ट सॉफ्टवेयर तक, तकनीक विविध क्षमताओं वाले छात्रों के सीखने के अनुभव को बदल रही है। संवर्धित वास्तविकता (एआर) और आभासी वास्तविकता (वीआर) का उपयोग विभिन्न शिक्षण शैलियों के अनुरूप, आकर्षक और मनोरंजक शिक्षण वातावरण बनाने के लिए किया जा रहा है। जो यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक छात्र को एक अनुकूलित शैक्षिक अनुभव प्राप्त हो, जिससे अधिक समावेशी और सहायक शिक्षण वातावरण को बढ़ावा मिले।

2. सार्वभौमिक शिक्षण प्रारूप (Universal Design for Learning (UDL): सार्वभौमिक शिक्षण डिजाइन (यूडीएल) की अवधारणा एक ऐसे ढाँचे के रूप में तेजी से लोकप्रिय हो रही है जो लचीले शिक्षण वातावरण के निर्माण पर जोर देता है। यूडीएल का उद्देश्य छात्रों को जानकारी प्राप्त करने, विषय-वस्तु से जुड़ने और अपनी समझ प्रदर्शित करने के लिए विविध माध्यम प्रदान करना है। शुरुआत से ही शिक्षार्थियों की विविध आवश्यकताओं को स्वीकार करके और उनका समाधान करके, शिक्षक ऐसे पाठ तैयार कर सकते हैं जो सभी की आवश्यकता को पूर्ण करते हों। यूडीएल तीन प्रमुख सिद्धांतों पर केंद्रित है प्रतिनिधित्व के विविध माध्यम, क्रिया और अभिव्यक्ति के विविध माध्यम, और जुड़ाव के विविध माध्यम। यह दृष्टिकोण शिक्षकों को विशेष आवश्यकता वाले छात्रों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने और एक समावेशी और सहायक शिक्षण वातावरण को बढ़ावा देने में सक्षम बनाता है।

3. सामाजिक-भावनात्मक शिक्षा (एसईएल) (Social-Emotional Learning (SEL): समग्र विकास में सामाजिक और भावनात्मक कौशल के महत्व को समझते हुए, विशेष शिक्षा अपने पाठ्यक्रम में सामाजिक-भावनात्मक शिक्षा (एसईएल) को तेजी से शामिल कर रही है। विशेष शिक्षा में, एसईएल विविध आवश्यकताओं वाले छात्रों के भावनात्मक कल्याण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक सकारात्मक और समावेशी सामाजिक वातावरण को बढ़ावा देकर, शिक्षक शिक्षार्थियों के समग्र विकास में योगदान दे सकते हैं और उनके जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं।

4. सहयोगात्मक शिक्षण मॉडल(Collaborative Teaching Models): सहयोगात्मक शिक्षण मॉडल सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा के शिक्षकों को एक साथ लाते हैं ताकि एक अधिक व्यापक और समावेशी शिक्षण अनुभव प्रदान किया जा सके। यह दृष्टिकोण टीम वर्क को बढ़ावा देता है जिससे शिक्षकों को छात्रों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपनी विशेषज्ञता और संसाधनों का उपयोग करने का अवसर मिलता है। सहयोग को बढ़ावा देकर स्कूल विशिष्ट आवश्यकताओं वाले शिक्षार्थियों के लिए एक अधिक सहायक वातावरण बना सकते हैं। समावेशी कक्षाएँ न केवल विशेष आवश्यकता वाले छात्रों को बल्कि उन छात्रों को भी लाभान्वित करती हैं जो विकलांग नहीं हैं। सामान्य और विशेष शिक्षा के शिक्षकों के बीच विचारों और शिक्षण विधियों का आदान-प्रदान सभी छात्रों के लिए एक समृद्ध शैक्षिक अनुभव में योगदान देता है, जिससे वे एक अधिक समावेशी समाज के लिए तैयार होते हैं।

5. संक्रमण योजना(Transition Planning): संक्रमण योजना विशेष शिक्षा का एक महत्वपूर्ण पहलू बन गई है जो छात्रों को कक्षा से परे जीवन के लिए तैयार करने पर केंद्रित है। इसमें विविध क्षमताओं वाले व्यक्तियों के लिए स्कूल से रोजगार, उच्च शिक्षा, या स्वतंत्र जीवन में संक्रमण को आसान बनाने के लिए रणनीतियाँ विकसित करना शामिल है। शिक्षक, अभिभावकों और सहायक पेशेवरों के साथ मिलकर, प्रत्येक छात्र की विशिष्ट आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए व्यक्तिगत संक्रमण योजनाएँ बनाते हैं। यह सक्रिय दृष्टिकोण सुनिश्चित करता है कि छात्र वयस्कता की चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए आवश्यक कौशल और संसाधनों से लैस हों।

6. सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षण(Culturally Responsive Teaching): विशेष शिक्षा के क्षेत्र में, सांस्कृतिक विविधता को स्वीकार करना और उसका सम्मान करना प्रमुखता प्राप्त कर रहा है। सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षण में छात्रों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को पहचानना और उसका मूल्यांकन करना तथा इस जागरूकता को शिक्षण पद्धतियों में शामिल करना शामिल है। विविधता को अपनाकर, शिक्षक एक अधिक समावेशी शिक्षण वातावरण का निर्माण कर सकते हैं जहाँ विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के छात्र महसूस करते हैं कि उन्हें देखा और समझा जा रहा है। यह दृष्टिकोण न केवल

समग्र शैक्षिक अनुभव को बेहतर बनाता है, बल्कि विशेष शिक्षा में बाधाओं को दूर करने और समानता को बढ़ावा देने में भी योगदान देता है

15.4 समावेशी कक्षाओं-में सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों का सहयोग (Inclusive classrooms-collaboration of general and special education teachers)

एक समावेशी कक्षा में सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों के बीच सहयोग, व्यक्तिगत शिक्षण के लिए विशेषज्ञता, पाठ्यक्रम अनुकूलन और लक्षित सहायता प्रदान करके, विविध छात्र आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह साझेदारी एक सकारात्मक शिक्षण वातावरण को बढ़ावा देती है जहाँ सभी छात्र स्वयं को महत्वपूर्ण महसूस करते हैं और यह विशेष आवश्यकता वाले छात्रों के लिए सामान्य पाठ्यक्रम तक पहुँच सुनिश्चित करती है। प्रमुख पहलुओं में पाठों की सह-योजना, सह-शिक्षण, मूल्यांकन की जिम्मेदारियों को साझा करना और एक सहायक एवं समावेशी विद्यालय संस्कृति का निर्माण शामिल है।

15.4.1 सहयोग के प्रमुख पहलू

- सह-योजना: शिक्षक नियमित रूप से पाठों की योजना बनाने, रणनीतियों पर चर्चा करने और आवश्यक समायोजन करने हेतु छात्रों की प्रगति की समीक्षा करने के लिए मिलते हैं।
- निर्देशात्मक अनुकूलन: टीम कक्षा में सभी शिक्षार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पाठों में अंतर करने और आकलन को अनुकूलित करने के लिए काम करती है।
- पाठ्यक्रम विकास: दोनों शिक्षक पाठ्यक्रम के डिजाइन और कार्यान्वयन में योगदान करते हैं यह सुनिश्चित करते हुए कि यह सभी छात्रों के लिए सुलभ और आकर्षक हो।
- कक्षा प्रबंधन: वे सुचारू परिवर्तन और एक उत्पादक शिक्षण प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए दिनचर्या बनाने और कक्षा के प्रबंधन पर सहयोग करते हैं।

15.4.2 सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षकों की प्रमुख भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ

प्रमुख भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ	सामान्य शिक्षा शिक्षक	विशेष शिक्षा शिक्षक
पाठ्यक्रम वितरण	विषय-वस्तु क्षेत्रों में अपनी विशेषज्ञता का उपयोग करते हुए, सभी छात्रों तक सामान्य शिक्षा पाठ्यक्रम के प्राथमिक वितरण के लिए जिम्मेदार।	पाठ्यक्रम अनुकूलन: छात्रों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और लक्ष्यों के अनुरूप सामान्य शिक्षा पाठ्यक्रम और सामग्री को अनुकूलित और संशोधित

		करता है।
कक्षा प्रबंधन	संपूर्ण कक्षा के लिए समग्र कक्षा वातावरण, पाठ प्रवाह और अनुशासन का प्रबंधन करता है।	संपूर्ण कक्षा के लिए समग्र कक्षा वातावरण, पाठ प्रवाह और अनुशासन का प्रबंधन करता है।
मानक-आधारित निर्देश	सभी छात्रों को समान मूल सामग्री पढ़ाकर सभी छात्रों के लिए उच्च अपेक्षाएँ बनाए रखता	छात्र पक्षसमर्थन: छात्र पक्षसमर्थक के रूप में कार्य करता है, सेवाओं का समन्वय करता है और परिवारों, प्रशासकों और अन्य विशेषज्ञों के साथ संवाद स्थापित करता है।
संपूर्ण-समूह निर्देश	सभी शिक्षार्थियों को शामिल करने के लिए विभिन्न प्रारूपों का उपयोग करके संपूर्ण-समूह पाठों की रूपरेखा तैयार करता है और उन्हें लागू करता है।	निगरानी और मूल्यांकन: IEP लक्ष्यों की ओर छात्रों की प्रगति की निगरानी करता है, और निर्देशात्मक निर्णयों और रिपोर्टों को सूचित करने के लिए डेटा का उपयोग करता है।

15.4.3 सहयोग के लिए सह-शिक्षण मॉडल (Co-teaching models for collaboration):

सामान्य और विशेष शिक्षा शिक्षक कई संरचित मॉडलों का उपयोग करके सहयोग कर सकते हैं। सबसे प्रभावी तरीका छात्रों की ज़रूरतों, विषयवस्तु और शिक्षकों की विशेषज्ञता के आधार पर अलग-अलग होता है।

- एक पढ़ाएँ, एक देखें/ One Teach, One Observe: एक शिक्षक पाठ का नेतृत्व करता है जबकि दूसरा व्यवहार, जुड़ाव या शैक्षणिक प्रगति पर डेटा एकत्र करने के लिए किसी विशिष्ट छात्र या समूह का व्यवस्थित रूप से अवलोकन करता है।
- एक पढ़ाएँ, एक सहायता करें/ One Teach, One Assist: एक शिक्षक निर्देश देने का नेतृत्व करता है जबकि दूसरा अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता वाले व्यक्तिगत छात्रों को सहायता प्रदान करता है।
- स्टेशन शिक्षण/ Station Teaching: दोनों शिक्षक कक्षा के भीतर अलग-अलग शिक्षण स्टेशनों का नेतृत्व करते हैं। कक्षा को छोटे-छोटे समूहों में विभाजित किया जाता है जो अलग-अलग शिक्षण

"स्टेशनों" या गतिविधियों के माध्यम से घूमते हैं जिनमें से प्रत्येक पाठ के एक विशिष्ट पहलू पर ध्यान केंद्रित होता है।

- समानांतर शिक्षण/ Parallel Teaching: कक्षा को दो समूहों में विभाजित किया जाता है, और प्रत्येक शिक्षक एक ही समय में एक ही पाठ पढ़ाता है। इससे छात्र-शिक्षक अनुपात कम होता है और अधिक भागीदारी को बढ़ावा मिलता है।
- वैकल्पिक शिक्षण/ Alternative Teaching: एक शिक्षक छात्रों के एक छोटे समूह के साथ किसी विशिष्ट कौशल पर काम करता है जैसे किसी अवधारणा को पूर्व-शिक्षण देना या संवर्धन प्रदान करना, जबकि दूसरा बड़े समूह को पढ़ाता है।
- टीम शिक्षण/ Team Teaching: दोनों शिक्षक पूरी कक्षा को सुचारू रूप से शिक्षण प्रदान करते हैं और जिम्मेदारी समान रूप से साझा करते हैं। यह सबसे सहयोगात्मक मॉडल है और इसके लिए मजबूत संवाद और विश्वास की आवश्यकता होती है।

15.4.4 प्रभावी सहयोग के लिए रणनीतियाँ: सह-शिक्षण की सफलता के लिए, कुछ प्रमुख प्रथाओं को लागू किया जाना चाहिए:

- एक मजबूत आधार स्थापित करें: दोनों शिक्षकों को समान भागीदार के रूप में एक-दूसरे पर भरोसा और सम्मान करना चाहिए और अपने शिक्षण दर्शन और अपेक्षाओं पर खुलकर चर्चा करनी चाहिए।
- संयुक्त नियोजन समय निर्धारित करें: दोनों शिक्षकों के लिए एक साथ पाठों की योजना बनाने हेतु नियमित, समर्पित समय, सुसंगत और विभेदित शिक्षण विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण है।
- स्पष्ट भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ सुनिश्चित करें: शिक्षकों को भ्रम से बचने और एक संतुलित साझेदारी सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक पाठ के लिए अपनी-अपनी भूमिकाएँ परिभाषित करनी चाहिए।
- खुलकर और लगातार संवाद करें: छात्रों की प्रगति, चिंताओं और शिक्षण रणनीतियों के बारे में लगातार, खुला संवाद एक मजबूत सहयोग के लिए महत्वपूर्ण है।
- व्यक्तिगत शक्तियों का लाभ उठाएँ: टीम को प्रत्येक शिक्षक के अद्वितीय कौशल का लाभ उठाना चाहिए, जैसे कि सामान्य शिक्षा शिक्षक का विषय-वस्तु ज्ञान और विशेष शिक्षा शिक्षक की विशिष्ट हस्तक्षेपों में विशेषज्ञता।
- सुसंगत कक्षा प्रबंधन प्रदान करें: सह-शिक्षकों को सुसंगत दिनचर्या और व्यवहार संबंधी अपेक्षाओं पर सहमत होना चाहिए और उन्हें लागू करना चाहिए ताकि छात्रों को एक स्पष्ट, एकीकृत संदेश प्राप्त हो।

15.4.5 सहयोग की सामान्य चुनौतियाँ और समाधान

- अपर्याप्त नियोजन समय स्कूल के दिनों में समर्पित, सुरक्षित नियोजन समय की वकालत करें। साप्ताहिक बैठकों के पूरक के रूप में संक्षिप्त, अनौपचारिक जाँच-पड़ताल का समय निर्धारित करें।

-
- अस्पष्ट भूमिकाएँ और ज़िम्मेदारियाँ प्रारंभिक नियोजन सत्रों के दौरान स्पष्ट प्रोटोकॉल स्थापित करें। साझा स्वामित्व की भावना को बढ़ावा देने के लिए भूमिकाओं, अपेक्षाओं और कक्षा की दिनचर्या को परिभाषित करें।
 - भिन्न शिक्षण दर्शन शिक्षण दृष्टिकोणों, अनुभवों और छात्रों की ज़रूरतों के बारे में मान्यताओं पर खुलकर चर्चा करके एक-दूसरे के दृष्टिकोणों की गहरी समझ विकसित करें।
 - भारी कार्यभार असाइनमेंट बनाने और ग्रेडिंग करने, डेटा एकत्र करने और परिवारों के साथ संवाद करने जैसे कार्यों को विभाजित करके कार्यभार साझा करें।
 - संचार बाधाएँ समर्थन और लचीले निर्देश के उपयोग को सामान्य बनाएँ। समावेशी भाषा का प्रयोग करें और छात्रों के साथ नियमित रूप से जाँच-पड़ताल करें ताकि समायोजन अलग-थलग करने के बजाय नियमित लगे।
-

15.5 प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल शिक्षा को समावेशी और विशेष स्कूली शिक्षा की सफलता के साथ जोड़ना (connecting early intervention and pre-school education with successful of inclusive and special schooling)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) को प्राथमिकता देते हुए इसे एक नए 5+3+3+4 शैक्षणिक ढाँचे में एकीकृत करती है, जो आधारभूत स्तर पर 3-8 वर्ष की आयु के बच्चों को कवर करता है। इसके प्रमुख तत्वों में खेल-आधारित और गतिविधि-आधारित पाठ्यक्रम, समग्र बाल विकास पर ध्यान, सीखने के लिए एक राष्ट्रीय ढाँचा, आँगनवाड़ियों के लिए बेहतर बुनियादी ढाँचा और सभी बच्चों में बुनियादी साक्षरता, संख्यात्मकता और सामाजिक-भावनात्मक कौशल को बढ़ावा देने के लिए प्रशिक्षित शिक्षक शामिल हैं। प्रारंभिक हस्तक्षेप और पूर्व-विद्यालय शिक्षा, विकास को बढ़ावा देकर और प्रारंभिक अवस्था में ही देरी को दूर करके समावेशी और विशेष स्कूली शिक्षा में बच्चों की सफलता के लिए आवश्यक आधारभूत कौशलों का निर्माण करती है। प्रारंभिक हस्तक्षेप विशेषज्ञों, शिक्षकों और परिवारों के बीच प्रभावी सहयोग बच्चे की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

विशेष आवश्यकताएँ प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा में कई प्रकार की भिन्नताओं को समाहित करती हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के सामने आने वाली बाधाएँ सीमाओं और अक्षमताओं का कारण बन सकती हैं या नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि शिक्षक उनकी आवश्यकताओं के प्रति किस प्रकार दृष्टिकोण रखते हैं। विशेष आवश्यकताओं की तीन व्यापक श्रेणियाँ हैं।

शारीरिक और संवेदी अक्षमता : इसमें शारीरिक विकलांगता, दृष्टिबाधिता, बहरापन या श्रवणबाधिता और मिर्गी शामिल हैं।

तंत्रिका-विकासात्मक अक्षमता : सीखने की अक्षमता, एडीएचडी, ऑटिज़्म और डाउन सिंड्रोम इस श्रेणी में आते हैं।

सामाजिक-भावनात्मक/व्यवहारिक अक्षमता : इसमें आघात, खराब जीवन स्थितियों या उपेक्षा/दुर्व्यवहार के कारण होने वाली व्यवहारिक और भावनात्मक चुनौतियाँ शामिल हैं।

- प्रारंभिक हस्तक्षेप (Early Intervention) - प्रारंभिक हस्तक्षेप में शिशुओं और छोटे बच्चों (आमतौर पर जन्म से 5 वर्ष की आयु तक) को विशेष सहायता और सेवाएं प्रदान करना शामिल है जिनमें विकासात्मक देरी, विकलांगता या अन्य महत्वपूर्ण चुनौतियाँ हैं या होने का खतरा है।
- प्री-स्कूली शिक्षा (Pre-school) - प्री-स्कूल (या प्रीस्कूल, प्री-प्राइमरी स्कूल, प्ले स्कूल, या नर्सरी स्कूल) एक शैक्षिक संस्थान है जो आमतौर पर 3 से 6 वर्ष की आयु के बच्चों को औपचारिक प्राथमिक स्कूली शिक्षा शुरू करने से पहले प्रारंभिक बचपन की शिक्षा प्रदान करता है।
- स्कूली शिक्षा (School education) – स्कूली शिक्षा बच्चों के लिए ज्ञान प्राप्त करने, आलोचनात्मक सोच जैसे कौशल विकसित करने और प्राथमिक, मध्य और उच्च विद्यालयों जैसे शैक्षणिक संस्थानों में जीवन कौशल सीखने की एक औपचारिक प्रणाली है।
- समावेशी शिक्षा (Inclusive education)- समावेशी शिक्षा का अर्थ है सभी बच्चों का एक ही कक्षा में एक ही स्कूल में होना। इसका अर्थ है उन समूहों के लिए वास्तविक शिक्षण अवसर जिन्हें पारंपरिक रूप से बहिष्कृत किया गया है – न केवल विकलांग बच्चे, बल्कि अल्पसंख्यक भाषाएँ बोलने वाले बच्चे भी।

15.5.1 प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल क्यों महत्वपूर्ण हैं (Why Early Intervention and Pre-school Matter)

- मस्तिष्क विकास: कहा जाता है कि मनुष्य के मस्तिष्क का 90% विकास पांच वर्ष की आयु तक हो जाता है। जीवन के इन वर्षों में मस्तिष्क के तंत्रिका मार्ग सबसे अधिक अनुकूलनीय होते हैं, जिससे सीखने, व्यवहार और समग्र स्वास्थ्य की मजबूत नींव स्थापित करने के लिए प्रारंभिक हस्तक्षेप महत्वपूर्ण हो जाता है।
- विलंबों का समाधान: प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्री-स्कूल शिक्षा, विकासात्मक विलंब या विकलांगता वाले बच्चों की पहचान और सहायता के लिए पेशेवर सेवाएँ प्रदान करती हैं, जिससे जीवन में आगे चलकर बेहतर कार्यात्मक परिणाम प्राप्त होते हैं।
- सामाजिक-भावनात्मक विकास: प्रारंभिक बचपन सहानुभूति, सकारात्मक आत्म-पहचान और समुदाय की भावना विकसित करने का एक महत्वपूर्ण समय है, जो सभी समावेशी और विशेष शिक्षा दोनों ही वातावरणों में सफल सामाजिक एकीकरण के लिए आवश्यक है।

• **पारिवारिक सहायता:** ये कार्यक्रम परिवारों को भी सहायता प्रदान करते हैं, उन्हें अपने बच्चे की जरूरतों को समझने, उपयुक्त सेवाओं की वकालत करने और महत्वपूर्ण सहायता प्रणालियों तक पहुँचने में मदद करते हैं।

15.5.2 पूर्वस्कूली शिक्षा की भूमिका (Role of preschool education)

• **समावेशी वातावरण:** उच्च-गुणवत्ता वाले समावेशी पूर्वस्कूल, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को उनके सामान्य रूप से विकसित हो रहे साथियों के साथ एकीकृत करते हैं। यह दृष्टिकोण स्वीकृति, सामाजिक कौशल को बढ़ावा देता है और सभी बच्चों के लिए सीखने के व्यापक अवसर प्रदान करता है।

• **सुदृढ़ अधिगम:** प्रारंभिक हस्तक्षेप से आने वाले बच्चों के लिए, पूर्वस्कूली उनके अर्जित कौशल को सुदृढ़ करता है। एक संरचित, आनंदमय वातावरण में सामाजिक-भावनात्मक, भाषाई और संज्ञानात्मक विकास को बढ़ावा देने के लिए खेल-आधारित, विकासात्मक रूप से उपयुक्त पाठ्यक्रम का उपयोग किया जाता है।

• **व्यवहारिक और सामाजिक कौशल:** पूर्वस्कूली बच्चों को महत्वपूर्ण सामाजिक और भावनात्मक विनियमन कौशल, जैसे सहयोग, साझा करना और साथियों के साथ बातचीत करना, सीखने में मदद करता है। व्यवहार संबंधी चुनौतियों वाले बच्चों के लिए, सकारात्मक व्यवहार समर्थन रणनीतियों को लागू किया जा सकता है।

• **प्राथमिक विद्यालय में सुचारू संक्रमण:** पूर्वस्कूली शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य प्राथमिक विद्यालय में सुचारू संक्रमण सुनिश्चित करना है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए यह प्रक्रिया विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

15.5.3 समावेशन को मज़बूत करने में पूर्वस्कूली शिक्षा की भूमिका (The role of preschool education in strengthening inclusion):

पूर्वस्कूली शिक्षा, प्रारंभिक हस्तक्षेप को एक संरचित, समावेशी वातावरण प्रदान करके विस्तारित करती है जहाँ सभी (विकलांग और गैर-विकलांग) बच्चे एक साथ सीखते हैं।

• **समावेशी मानसिकता को बढ़ावा देता है:** समावेशी पूर्वस्कूली शिक्षा, कम उम्र से ही मतभेदों को सामान्य बनाती है, जिससे सहानुभूति और स्वीकृति की एक कक्षा संस्कृति का निर्माण होता है जो प्राथमिक विद्यालय तक जारी रह सकती है।

• **कौशल सामान्यीकरण को बढ़ावा देता है:** पूर्वस्कूली शिक्षा, बच्चों को चिकित्सा में सीखे गए कौशल का अभ्यास करने और उन्हें एक स्वाभाविक, सहकर्मी-नेतृत्व वाले वातावरण में सामान्यीकृत करने के

अवसर प्रदान करती है। समावेशी कक्षाएँ सामाजिक संपर्क के अधिक अवसर प्रदान करती हैं, जो सामाजिक और भाषा कौशल को बेहतर बनाने का एक प्रमुख कारक है।

- स्कूल की तैयारी: समावेशी पूर्वस्कूली शिक्षा, बच्चों को औपचारिक स्कूली शिक्षा की संरचना और दिनचर्या के अनुकूल होने में मदद करती है, जैसे निर्देशों का पालन करना और समूह गतिविधियों में भाग लेना।
- सभी शिक्षार्थियों का समर्थन करता है: समावेशी पूर्वस्कूली शिक्षा अक्सर समावेशी शिक्षण रणनीतियों का उपयोग करती है, जैसे कि यूनिवर्सल डिज़ाइन फ़ॉर लर्निंग (UDL), जो जानकारी को विविध और सुलभ तरीकों से प्रस्तुत करके सभी बच्चों को लाभान्वित करती है।

15.5.4 बाद की स्कूली शिक्षा के लिए प्रारंभिक हस्तक्षेप के लाभ (Benefits of early intervention for later schooling):

प्रारंभिक हस्तक्षेप, आमतौर पर जन्म से तीन वर्ष की आयु तक, मस्तिष्क की सबसे अनुकूलनीय अवधि के दौरान लक्षित सहायता प्रदान करता है, जो बाद की शिक्षा के परिणामों को प्रभावित करता है।

- उन्नत विकास: ईआई सेवाएँ विकलांगताओं के प्रभाव को कम कर सकती हैं और बच्चे के संज्ञानात्मक, भाषाई, मोटर और सामाजिक-भावनात्मक कौशल में महत्वपूर्ण सुधार ला सकती हैं।
- गहन सहायता की आवश्यकता में कमी: समस्याओं का शीघ्र समाधान करके, बच्चों को जीवन में आगे चलकर व्यापक और महंगी विशेष शिक्षा सेवाओं की आवश्यकता कम होती है।
- बेहतर शैक्षणिक तत्परता: भाषा, संचार और सामाजिक संपर्क जैसे कौशलों पर केंद्रित कार्यक्रम बच्चों को कक्षा के वातावरण की माँगों के लिए तैयार करते हैं और उनकी शैक्षणिक तत्परता में सुधार करते हैं।
- सशक्त परिवार: ईआई परिवारों को वे संसाधन, प्रशिक्षण और सहायता प्रदान करता है जिनकी उन्हें अपने बच्चे का प्राथमिक समर्थक बनने के लिए आवश्यकता होती है, जो शैक्षिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

15.5.5 सुचारू संक्रमण के लिए सर्वोत्तम अभ्यास (Best practices for a smooth transition):

प्रारंभिक हस्तक्षेप, प्रीस्कूल और बाद की स्कूली शिक्षा के बीच निरंतरता बच्चे के निरंतर विकास के लिए आवश्यक है। एक सफल संक्रमण योजना में शामिल हैं:

- सहयोगी संचार: प्रारंभिक हस्तक्षेप प्रदाताओं, प्रीस्कूल और किंडरगार्टन शिक्षकों, और परिवारों को खुलकर संवाद करना चाहिए और बच्चे की खूबियों, ज़रूरतों और सफल रणनीतियों के बारे में जानकारी का आदान-प्रदान करना चाहिए।

-
- व्यक्तिगत योजना: विशेष आवश्यकता वाले छात्रों के लिए, संक्रमण योजना एक व्यक्तिगत परिवार सेवा योजना (IFSP) के विकास से शुरू होती है, और बाद में एक व्यक्तिगत शिक्षा कार्यक्रम (IEP) में परिवर्तित हो जाती है। ये दस्तावेज़ सुनिश्चित करते हैं कि लक्ष्य बच्चे की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप हों।
 - माता-पिता की भागीदारी: संक्रमण योजना एक परिवार-केंद्रित प्रक्रिया होनी चाहिए, जिसमें माता-पिता घर-आधारित से स्कूल-आधारित सेवा मॉडल में बदलाव को समझने में पूरी तरह से शामिल हों।
 - सहयोगात्मक योजना बैठकें: माता-पिता, प्रीस्कूल शिक्षकों और किंडरगार्टन कर्मचारियों को शामिल करने वाली ये बैठकें, बच्चे को सर्वोत्तम सहायता कैसे प्रदान की जाए, इस बारे में एक साझा समझ सुनिश्चित करती हैं। नए वातावरण में बच्चे की सफलता को सुगम बनाने के लिए समायोजन और संशोधनों पर चर्चा की जाती है।
 - सभी हितधारकों के लिए प्रशिक्षण: शिक्षकों के लिए विकलांगता समावेशन और अनुकूली शिक्षण रणनीतियों पर निरंतर प्रशिक्षण आवश्यक है। इससे शिक्षक क्षमता का निर्माण होता है और यह सुनिश्चित होता है कि कक्षा में विविध शिक्षण आवश्यकताओं को प्रभावी ढंग से पूरा किया जा सके।

15.5.6 प्रारंभिक बाल्यावस्था कार्यक्रमों का स्कूल की सफलता पर प्रभाव (Impact on school success):

शोध से पता चलता है कि उच्च-गुणवत्ता वाले प्रारंभिक बाल्यावस्था कार्यक्रमों का शैक्षणिक और सामाजिक परिणामों पर स्थायी प्रभाव पड़ता है, खासकर जब बच्चे उच्च-गुणवत्ता वाले और सहायक स्कूली वातावरण में प्रवेश करते हैं। निरंतर समर्थन के बिना, प्रारंभिक हस्तक्षेपों के लाभ समय के साथ कम हो सकते हैं। इसलिए, प्रारंभिक हस्तक्षेप और प्रीस्कूल अलग-अलग लाभ नहीं हैं, बल्कि निरंतर समर्थन के पहले चरण हैं जो समावेशी या विशेष शिक्षा में बच्चे के सफल एकीकरण के लिए महत्वपूर्ण हैं।

15.6 तकनीकी को एकीकृत करना और दोहरा अपवादात्मक बच्चे (2E) बच्चों को मान्यता देना (Integrating Technology and acknowledging Twice Exceptional (2E) Children)

1970 के दशक की शुरुआत में हुए अध्ययनों से संकेत मिला कि विशेष आबादी के छात्र भी प्रतिभाशाली हो सकते हैं। 1981 में, जॉन्स हॉपकिन्स विश्वविद्यालय में आयोजित एक संगोष्ठी में इस मुद्दे पर विचार करने के लिए अधिगम अक्षमता और प्रतिभा दोनों क्षेत्रों के विशेषज्ञों को बुलाया गया था। उस समय, प्रतिभाशाली और प्रतिभावान छात्रों के साथ-साथ अधिगम अक्षमता वाले छात्रों की ज़रूरतों को

पूरा करने में रुचि कई स्तरों पर स्पष्ट थी; लेकिन जिन छात्रों ने दोनों असाधारणताओं, यानी द्वि-असाधारण (2e) छात्रों के लक्षण प्रदर्शित किए थे, उन पर बहुत कम ध्यान दिया गया था। जॉन्स हॉपकिन्स सभा में प्रतिभागियों ने निष्कर्ष निकाला कि 2e छात्र वास्तव में मौजूद हैं, लेकिन अक्सर प्रतिभा या अधिगम अक्षमता (LDs) के लिए मूल्यांकन किए जाने पर उन्हें अनदेखा कर दिया जाता है। संगोष्ठी ने 2e छात्रों को विशेष विशेषताओं और जरूरतों वाली आबादी के रूप में पहचानने के मानदंड स्थापित करने की दिशा में बहुत काम किया (फॉक्स, ब्रॉडी, और टोबिन, 1983)।

दोहरा अपवादात्मक बच्चे (2e) बच्चों की सहायता के लिए प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने में उनकी प्रतिभा का लाभ उठाने और उनकी सीखने की चुनौतियों का समाधान करने के लिए इसका उपयोग करना शामिल है, जैसे डिस्लेक्सिया के लिए टेक्स्ट-टू-स्पीच का उपयोग या एडीएचडी कार्यकारी कार्यों के लिए सहायक उपकरण। प्रभावी प्रौद्योगिकी उपयोग के लिए 2e छात्रों की विशिष्ट शक्तियों और कमजोरियों को पहचानना, शक्ति-आधारित दृष्टिकोण अपनाना और एक समावेशी वातावरण को बढ़ावा देना आवश्यक है जो स्व-निर्देशित शिक्षण और लचीले शिक्षण समूहों को उनके शैक्षिक अनुभव को वैयक्तिकृत करने की अनुमति देता है।

15.6.1 दोहरा अपवादात्मक बच्चे

दोहरा अपवादात्मक बच्चे वे होते हैं जो एक साथ कुछ क्षेत्रों में प्रतिभाशाली होते हैं और साथ ही सीखने की अक्षमता, जैसे एडीएचडी, डिस्लेक्सिया, या ऑटिज्म स्पेक्ट्रम विकार, से भी ग्रस्त होते हैं। यह संयोजन शक्तियों और चुनौतियों का एक अनूठा स्वरूप बनाता है, जिसके कारण अक्सर 2e बच्चों को स्कूल में गलत समझा जाता है, उनकी पहचान कम होती है और उन्हें कम सुविधाएँ मिलती हैं। 2e बच्चों का समर्थन करने के लिए एक शक्ति-आधारित दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो उनकी अक्षमताओं को दूर करने और उनकी असाधारण क्षमताओं को विकसित करने के लिए विशेष निर्देश, समायोजन और रणनीतियाँ प्रदान करता है।

15.6.2 2e बच्चों की विशेषताएँ/ Characteristics of 2e children

चूँकि उनकी प्रतिभा उनकी अक्षमता को छिपा सकती है (और इसके विपरीत), 2e बच्चे अक्सर असंगत शैक्षणिक प्रदर्शन प्रदर्शित करते हैं। वे कुछ क्षेत्रों में उन्नत क्षमताएँ दिखा सकते हैं जबकि अन्य क्षेत्रों में सामान्य लगने वाले कार्यों में भी उन्हें कठिनाई हो सकती है।

सामान्य क्षमताएँ/ Common strengths:

- प्रबल रचनात्मकता और कल्पनाशीलता
- उन्नत शब्दावली और परिष्कृत हास्य-बोध

- उत्कृष्ट आलोचनात्मक सोच और समस्या-समाधान कौशल
- तीव्र जिज्ञासा और विविध रुचियाँ
- विशिष्ट विषयों का गहन ज्ञान जो उनका ध्यान आकर्षित करता है

सामान्य चुनौतियाँ/ Common challenges:

- कार्यकारी कार्यों में कठिनाइयाँ/ Executive function difficulties: संगठन, समय प्रबंधन और योजना बनाने में समस्याएँ।
- भावनात्मक तीव्रता/ Emotional intensity: आलोचना और हताशा के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता, जिससे आत्म-सम्मान कम होता है।
- खराब सामाजिक कौशल/ Poor social skills: सामाजिक जागरूकता और साथियों के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई, जिससे अलगाव या चिंता हो सकती है।
- खराब आउटपुट/Poor output: वे जो मौखिक रूप से व्यक्त कर सकते हैं और जो वे लिखित रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं, उसके बीच एक महत्वपूर्ण अंतर।
- अतुल्यकालिक विकास/Asynchronous development: उनका बौद्धिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास बहुत अलग-अलग दरों पर हो सकता है।

सामान्य सह-अस्तित्व वाली स्थितियाँ/ Common co-existing conditions:

- ध्यान-अभाव/अतिसक्रियता विकार (ADHD)
- ऑटिज्म स्पेक्ट्रम विकार (ASD)
- डिस्लेक्सिया या डिस्ग्राफ़िया जैसी सीखने की अक्षमताएँ
- संवेदी प्रसंस्करण विकार

जटिल आवश्यकताएँ: सामाजिक-भावनात्मक या अन्य क्षेत्रों में देरी या चुनौतियों के साथ-साथ त्वरित बौद्धिक विकास के साथ असमान विकास प्रोफ़ाइल प्रदर्शित करना।

छिपाना: प्रतिभा या विकलांगता एक-दूसरे को छिपा सकती है, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे को अनदेखा किया जा सकता है क्योंकि उसकी योग्यताएँ या कठिनाइयाँ तुरंत स्पष्ट नहीं होती हैं।

15.6.3 2e बच्चों की शिक्षा में चुनौतियाँ

- गलत व्याख्या: क्रोध, ध्यान न देना, या प्रतिरोध जैसे व्यवहारों को किसी अंतर्निहित आवश्यकता के संकेत के बजाय अवज्ञा या प्रेरणा की कमी के रूप में देखा जा सकता है।

- कमियों पर ध्यान: पारंपरिक शैक्षिक मॉडल बच्चों की खूबियों को निखारने के बजाय उनकी कठिनाइयों को "ठीक" करने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।
- कठोर संरचनाएँ: मानकीकृत शिक्षण विधियाँ अक्सर 2e बच्चों के विशिष्ट अतुल्यकालिक विकास को समायोजित करने में विफल रहती हैं।

प्रौद्योगिकी(Technology)

सहायक प्रौद्योगिकी उपकरण कोई भी वस्तु, उपकरण या उत्पाद प्रणाली है, चाहे वह व्यावसायिक रूप से तैयार, संशोधित या अनुकूलित रूप में प्राप्त की गई हो, जिसका उपयोग किसी विकलांग बच्चे की कार्यात्मक क्षमताओं को बढ़ाने, बनाए रखने या सुधारने के लिए किया जाता है (विकलांग व्यक्तियों के लिए प्रौद्योगिकी-संबंधी सहायता अधिनियम 1988 और IDEA 2004)।

2e के छात्र अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हैं - न केवल उन कार्यों की पूर्ति के लिए जो वे नहीं कर सकते, बल्कि उन कार्यों पर अपना ध्यान केन्द्रित करने के लिए जो वे कर सकते हैं तथा रुचि के क्षेत्रों का और अधिक अन्वेषण करने के लिए। इसके अलावा, तकनीकी सहायताएँ, जैसे टेक्स्ट-टू-स्पीच या संगठनात्मक ऐप्स, 2e छात्रों को अपनी ज़रूरतों के अनुसार अपनी सोच को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने में सक्षम बनाती हैं और बदले में, उनके सीखने और स्कूल के अनुभव को अधिकतम करती हैं" (प्रौद्योगिकी का उपयोग करके 2e छात्रों की खूबियों को उजागर करना)।

15.6.4 2e छात्रों के लिए प्रौद्योगिकी (Technology for 2e Students):

तकनीक कठिनाई वाले क्षेत्रों के लिए सहायक और प्रतिपूरक उपकरण प्रदान कर सकती है जो 2e छात्रों के "असाधारण" पहलू को संबोधित करते हैं।

□ पढ़ने में कठिनाई (जैसे, डिस्लेक्सिया)(Reading difficulties (dyslexia))

- टेक्स्ट-टू-स्पीच सॉफ्टवेयर (Text-to-speech software) डिजिटल टेक्स्ट को जोर से पढ़ता है, जिससे छात्रों को डिकोडिंग या दृश्य प्रसंस्करण संबंधी समस्याओं में मदद मिलती है।
- ऑडियोबुक और स्क्रीन रीडर (Audiobooks and screen readers) छात्रों को सुनने के माध्यम से सामग्री का उपभोग करने की अनुमति देते हैं, जो मजबूत श्रवण प्रसंस्करण कौशल वाले लोगों के लिए फायदेमंद हो सकता है।
- कस्टमाइज़ करने योग्य रीडिंग सॉफ्टवेयर (Customizable reading software), जैसे कि कुर्जवील 3000, फोकस और पठनीयता में सुधार के लिए समायोज्य टेक्स्ट आकार, फॉन्ट (ओपनडिस्लेक्सिक सहित) और रंग फ़िल्टर प्रदान करता है।

□ लेखन में कठिनाई (जैसे, डिस्ग्राफिया) (Writing difficulties (dysgraphia))

- स्पीच-टू-टेक्स्ट सॉफ्टवेयर (वॉइस रिकग्निशन) Speech-to-text software (voice recognition) बोले गए शब्दों को टेक्स्ट में परिवर्तित करता है, जिससे छात्रों को लिखने की शारीरिक क्रिया से बचने में मदद मिलती है।

- शब्द पूर्वानुमान सॉफ्टवेयर (Word prediction software) छात्र के टाइप करते समय शब्दों का सुझाव देता है, उनकी लेखन प्रक्रिया को तेज करता है और वर्तनी में सहायता करता है।

- Digital note-taking apps -OneNote जैसे डिजिटल नोट लेने वाले ऐप्स जानकारी को व्यवस्थित कर सकते हैं और हस्तलिखित नोट्स के संज्ञानात्मक भार को कम कर सकते हैं।

□ गणित की कठिनाइयाँ (जैसे, डिस्कैलकुलिया) (Math difficulties (dyscalculia))

- बोलने वाले कैलकुलेटर और इलेक्ट्रॉनिक गणित वर्कशीट (Talking calculators and electronic math worksheets) गणना में सहायता कर सकते हैं, इसलिए डिस्कैलकुलिया से ग्रस्त एक प्रतिभाशाली 2e छात्र जटिल समस्या-समाधान पर ध्यान केंद्रित कर सकता है।

- ब्रेन कैप (Virtual manipulatives) जैसे सॉफ्टवेयर के माध्यम से वर्चुअल मैनिपुलेटिव्स छात्रों को अमूर्त गणितीय अवधारणाओं को देखने में मदद कर सकते हैं।

□ कार्यकारी कार्यप्रणाली और संगठनात्मक चुनौतियाँ (जैसे, एडीएचडी) (Executive functioning and organizational challenges (ADHD))

- रिमाइंडर और अलार्म उपकरणों (Reminder and alarm devices) छात्रों को कार्य पर बने रहने में मदद करने के लिए दृश्य, श्रवण या स्पर्श संबंधी संकेत प्रदान करने के लिए रिमाइंडर और अलार्म उपकरणों को प्रोग्राम किया जा सकता है।

- डिजिटल प्लानर और कार्य प्रबंधन ऐप (Digital planners and task management apps) छात्रों को जटिल परियोजनाओं को पूरा करने और समय सीमा का प्रबंधन करने में सहायता करते हैं।

- शोर-रद्द करने वाले हेडफोन (Noise-canceling headphones) संवेदी संवेदनशीलता या ध्यान संबंधी समस्याओं वाले छात्रों को कक्षा में ध्यान भंग करने वाली आवाजों को रोकने में मदद करते हैं।

15.6.5 2e बच्चों की प्रतिभा को समृद्ध करना (Enriching giftedness):

चुनौतियों का समाधान करने के अलावा, तकनीक 2e छात्र के मजबूत क्षेत्रों में सीखने को समृद्ध और तेज भी कर सकती है, व्यक्तिगत और उत्तेजक अनुभव प्रदान कर सकती है।

- अनुकूलित शिक्षण वातावरण (Customized learning environments): Google क्लासरूम जैसे शिक्षण प्रबंधन प्रणालियों (LMS) का उपयोग विभेदित शिक्षण के लिए किया जा सकता है, जिससे शिक्षक प्रतिभाशाली छात्रों को उन्नत सामग्री प्रदान कर सकते हैं।

- उन्नत सामग्री तक पहुँच (Access to advanced content) ऑनलाइन पाठ्यक्रम (जैसे MIT ओपनकोर्सवेयर के पाठ्यक्रम) और ऑनलाइन डेटाबेस या शोध लेखों तक पहुँच छात्रों को अपनी रुचियों को अधिक गहन और चुनौतीपूर्ण स्तर पर आगे बढ़ाने में सक्षम बना सकती है।
- परियोजना-आधारित शिक्षण (Project-based learning): प्रौद्योगिकी परियोजना-आधारित शिक्षण के लिए समृद्ध और रचनात्मक परिणाम प्रदान करती है। प्रतिभाशाली छात्र iMovie जैसे सॉफ्टवेयर का उपयोग करके पॉडकास्ट, वीडियो बना सकते हैं या डिजिटल कहानियाँ प्रकाशित कर सकते हैं।
- विशेषज्ञ मार्गदर्शन (Expert mentorship): इंटरनेट ई-मार्गदर्शन के अवसर प्रदान करता है, जो छात्रों को उनकी रुचि के विशिष्ट क्षेत्र के विशेषज्ञों से जोड़ता है जो उनके लिए आदर्श बन सकते हैं।

15.6.6 2e बच्चों को सहायता देने के लिए प्रभावी रणनीतियाँ (Effective Strategies for supporting 2e children)

- शक्तियों और चुनौतियों का आकलन: किसी बच्चे के संज्ञानात्मक और भावनात्मक स्वरूप को समझने के लिए विशेषज्ञों द्वारा गहन मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। आकलन में माता-पिता, शिक्षकों और विशेषज्ञों को शामिल करते हुए सहयोगात्मक मूल्यांकन का प्रयोग किया जाता है यह दृष्टिकोण सुनिश्चित करता है कि व्यक्तिगत शिक्षण योजनाएँ विशिष्ट चुनौतियों का समाधान करते हुए शक्तियों पर आधारित हों।
- शिक्षण दृष्टिकोणों को अनुकूलित करना: पारंपरिक शिक्षण विधियाँ 2e छात्रों के लिए पर्याप्त रूप से उपयोगी नहीं हो सकती हैं। विभेदित निर्देश, परियोजना-आधारित शिक्षण और संवर्धन गतिविधियों को शामिल करने वाला एक लचीला पाठ्यक्रम इन बच्चों को फलने-फूलने में सक्षम बनाता है।
- सामाजिक और भावनात्मक विकास को बढ़ावा देना: कई 2e बच्चे चिंता, भावनात्मक विनियमन संबंधी समस्याओं या सामाजिक संपर्कों में कठिनाई का अनुभव करते हैं। सामाजिक-भावनात्मक शिक्षण (SEL) रणनीतियों, जैसे कार्यकारी कार्य प्रशिक्षण को लागू करने से आत्मविश्वास और लचीलापन बढ़ सकता है। बच्चों को अपनी ज़रूरतों की वकालत करना सिखाना उनकी दीर्घकालिक सफलता के लिए ज़रूरी है।
- एक सहायक घर और कक्षा का माहौल बनाना: एक संरचित लेकिन अनुकूलनीय माहौल जो असाधारण क्षमताओं और चुनौतियों दोनों को स्वीकार करता हो बेहद ज़रूरी है। माता-पिता और शिक्षकों के बीच घनिष्ठ सहयोग यह सुनिश्चित करता है कि 2e बच्चों को व्यक्तिगत शिक्षा योजनाओं (IEPs) के माध्यम से उचित सुविधाएँ मिलें। परीक्षा का समय बढ़ाना, शांत जगहों तक पहुँच और वैकल्पिक मूल्यांकन विधियाँ जैसे समायोजन बच्चे के सीखने के अनुभव को काफ़ी बेहतर बना सकते हैं।

-
- शिक्षक प्रशिक्षण और सहयोग को बढ़ावा देना: माता-पिता, शिक्षकों और विशेषज्ञों के बीच एक मजबूत साझेदारी 2e छात्रों के लिए बेहतर परिणाम लाती है। ये साझेदारी दोहरी असाधारणता को पहचानने, क्षमता-आधारित शिक्षण को लागू करने और समावेशी कक्षा वातावरण को बढ़ावा देने पर जोर देते हैं।
 - विकास की मानसिकता को प्रोत्साहित करना: 2e बच्चों को चुनौतियों को स्वीकार करना और प्रयास को सीखने के एक हिस्से के रूप में देखना सिखाना, विकास की मानसिकता को बढ़ावा देता है। केवल जन्मजात क्षमता के बजाय दृढ़ता और समस्या-समाधान कौशल की प्रशंसा करने से लचीलापन विकसित करने में मदद मिलती है।
 - माता-पिता से अंतर्दृष्टि: 2e बच्चे का पालन-पोषण अनोखी चुनौतियाँ प्रस्तुत करता है, लेकिन सही सहायता नेटवर्क ढूँढ़ने से बहुत फ़र्क पड़ सकता है। कई माता-पिता ट्वाइस-एक्सेप्शनलिटी के बारे में जानकर सुकून पाते हैं और यह महसूस करते हैं कि वे अपनी इस यात्रा में अकेले नहीं हैं। अन्य अभिभावकों के साथ जुड़ना, सहायता समूहों में शामिल होना और विशेषज्ञ मार्गदर्शन प्राप्त करना बहुमूल्य अंतर्दृष्टि और प्रोत्साहन प्रदान कर सकता है।
 - भविष्य के लिए वकालत और जागरूकता: शिक्षा और उससे आगे के क्षेत्रों में प्रणालीगत परिवर्तनों को बढ़ावा देने के लिए ट्वाइस-एक्सेप्शनलिटी के बारे में जागरूकता बढ़ाना महत्वपूर्ण है। शिक्षकों के लिए व्यावसायिक विकास के अवसरों में वृद्धि, विशेष शिक्षा नीतियों में संशोधन और समावेशी शिक्षण वातावरण का निर्माण यह सुनिश्चित कर सकता है कि 2e बच्चों को उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए आवश्यक सहायता प्राप्त हो। विशेषज्ञ रणनीतियों को अपने अनुभवों के साथ जोड़कर, माता-पिता और शिक्षक दोनों ही सफलता के लिए एक रूपरेखा तैयार कर सकते हैं। इन बच्चों की अद्वितीय क्षमताओं को पहचानना और उनका पोषण करना तथा उनकी चुनौतियों का समाधान करना उन्हें स्कूल में और उसके बाद भी अपनी पूरी क्षमता तक पहुंचने में सक्षम बनाता है।

15.6.7 2e शिक्षार्थियों के लिए प्रौद्योगिकी कार्यान्वयन के सर्वोत्तम अभ्यास (Best practices for implementation):

यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रौद्योगिकी 2e शिक्षार्थियों का प्रभावी ढंग से समर्थन करे, शिक्षकों और अभिभावकों को कुछ प्रमुख रणनीतियों का पालन करना चाहिए।

- शक्ति-आधारित दृष्टिकोण अपनाएँ (Adopt a strengths-based approach): प्रौद्योगिकी का प्राथमिक लक्ष्य छात्रों की प्रतिभाओं और प्रतिभाओं को बढ़ाना होना चाहिए न कि केवल उनकी कमजोरियों को दूर करना।

- विकास की मानसिकता को बढ़ावा दें (Foster a growth mindset): तकनीक 2e छात्रों को क्रमिक उपलब्धियों का जश्न मनाकर और जन्मजात क्षमता के बजाय दृढ़ता पर ध्यान केंद्रित करके लचीलापन विकसित करने में मदद कर सकती है।
- छात्रों की भागीदारी को प्रोत्साहित करें (Encourage student involvement) छात्रों को उनकी तकनीक के चयन में शामिल करने से उन्हें सशक्त बनाया जाता है और यह सुनिश्चित होता है कि उपकरण उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को पूरा करते हैं।
- प्रशिक्षण को प्राथमिकता दें (Prioritize training): शिक्षकों, छात्रों और अभिभावकों को सहायक तकनीकों का प्रभावी ढंग से उपयोग करके अधिकतम लाभ प्राप्त करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- एक लचीला और व्यक्तिगत दृष्टिकोण अपनाएँ (Use a flexible and individualized approach): सभी तकनीकें हर स्थिति में मददगार नहीं होंगी। समायोजन एक व्यक्तिगत शिक्षा योजना (IEP) का हिस्सा होना चाहिए यह स्वीकार करते हुए कि निम्न- और उच्च-तकनीकी दोनों प्रकार के समाधान आवश्यक हो सकते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. आधारभूत स्तर पर _____ आयु के बच्चे सम्मिलित होते हैं
2. तांत्रिक विकासात्मक क्षमता के अंतर्गत श्रेणीबद्ध है _____
3. समावेशी कक्षा में विशेष शिक्षक के क्या कार्य हैं?
4. लिखने की अक्षमता वाले बच्चों के लिए सुझाए गए तकनीकी उपकरणों पर प्रकाश डालें

15.7 सारांश

विशेष एवं समावेशी शिक्षा के वर्तमान रुझानों में सहायक तकनीक और व्यक्तिगत शिक्षण प्लेटफॉर्म का बढ़ता उपयोग, अधिक लचीले वातावरण बनाने के लिए यूनिवर्सल डिज़ाइन फ़ॉर लर्निंग (UDL) को अपनाना, प्रारंभिक हस्तक्षेप और अभिभावकों की भागीदारी पर अधिक ध्यान, और अधिक समावेशी संस्कृति को बढ़ावा देने वाले सामाजिक दृष्टिकोणों का विकास शामिल है। भविष्य के दृष्टिकोणों में अनुकूलित अनुभवों के लिए AI और VR/AR का और अधिक एकीकरण, समावेशी प्रथाओं में शिक्षक प्रशिक्षण का विस्तार, समान पहुँच सुनिश्चित करने के लिए भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जैसे मजबूत नीतिगत ढाँचे, और सभी शिक्षार्थियों को मौजूदा ढाँचों में ढालने की कोशिश करने के बजाय उनका समर्थन करने वाली प्रणालियों की ओर निरंतर बदलाव देखा जा रहा है। प्रारंभिक हस्तक्षेप (ईआई) और पूर्वस्कूली शिक्षा बच्चे के समग्र विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं और समावेशी एवं विशेष स्कूली शिक्षा में उनकी सफलता को सीधे प्रभावित करते हैं। यह प्रारंभिक सहायता मस्तिष्क

विकास के एक महत्वपूर्ण दौर में विकासात्मक विलंब को दूर करके शैक्षणिक और सामाजिक परिणामों में उल्लेखनीय सुधार ला सकती है। कक्षा में तकनीक का समावेशन दोहरा अपवादात्मक बच्चों (2e) जो प्रतिभाशाली होने के साथ-साथ दिव्यांग भी हैं को मान्यता देने और उनका समर्थन करने का एक प्रभावी तरीका है। तकनीक 2e बच्चों की चुनौतियों का समाधान कर सकती है और साथ ही उनकी प्रतिभा को समृद्ध करके उनमें आम तौर पर पाए जाने वाले अतुल्यकालिक विकास पर काबू पाने में मदद कर सकती है। हम देखते हैं कि वर्तमान शिक्षा में जो नए रुझान दिखाई देती है और जो भावी संभावनाएं हैं उन्होंने विशेष शिक्षा और समावेशी शिक्षा तक बच्चों की पहुंच बढ़ाई है

15.8 शब्दावली:

- प्रारंभिक हस्तक्षेप- प्रारंभिक हस्तक्षेप में शिशुओं और छोटे बच्चों (आमतौर पर जन्म से 5 वर्ष की आयु तक) को विशेष सहायता और सेवाएं प्रदान करना शामिल है, जिनमें विकासात्मक देरी, विकलांगता या अन्य महत्वपूर्ण चुनौतियां हैं या होने का खतरा है।
- दोहरा अपवादात्मक बच्चे- दोहरा अपवादात्मक बच्चे वे होते हैं जो एक साथ कुछ क्षेत्रों में प्रतिभाशाली होते हैं और साथ ही सीखने की अक्षमता, जैसे एडीएचडी, डिस्लेक्सिया, या ऑटिज्म स्पेक्ट्रम विकार, से भी ग्रस्त होते हैं।
- समावेशी शिक्षा- समावेशी शिक्षा का अर्थ है सभी बच्चों का एक ही कक्षा में, एक ही स्कूल में होना। इसका अर्थ है उन समूहों के लिए वास्तविक शिक्षण अवसर जिन्हें पारंपरिक रूप से बहिष्कृत किया गया है
- सार्वभौमिक शिक्षण प्रारूप (UDL) -सार्वभौमिक शिक्षण प्रारूप (यूडीएल) की अवधारणा एक ऐसे ढाँचे के रूप में तेजी से लोकप्रिय हो रही है जो लचीले शिक्षण वातावरण के निर्माण पर जोर देता है।

15.9- स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर:

- 1- 3-8 वर्ष की आयु
- 2- सीखने की अक्षमता, एडीएचडी, ऑटिज्म और डाउन सिंड्रोम
- 3- पाठ्यक्रम अनुकूलन, व्यक्तिगत सहायता, छात्र पक्षसमर्थन, निगरानी और मूल्यांकन
- 4- स्पीच-टू-टेक्स्ट सॉफ्टवेयर (वॉइस रिकग्निशन) Speech-to-text software (voice recognition), शब्द पूर्वानुमान सॉफ्टवेयर (Word prediction software), Digital note-taking apps -OneNote जैसे डिजिटल नोट लेने वाले ऐप्स जानकारी को व्यवस्थित कर सकते हैं और हस्तलिखित नोट्स के संज्ञानात्मक भार को कम कर सकते हैं।

15.12संदर्भ ग्रंथ

- <https://www.21kschool.com/in/blog/inclusive-education-in-india/>
- <https://www.unicef.org/education/inclusive-education>
- <https://spot.ac/blog/supporting-twice-exceptional-children-a-guide-for-parents-and-educators>
- <https://sgtuniversity.ac.in/education/blogs/role-of-collaboration-between-general-and-special-education-teachers>
- <https://www.davidsongifted.org/gifted-blog/2e-students-who-they-are-and-what-they-need>
- <https://sitesed.cde.state.co.us/mod/book/view.php?id=12222&chapterid=10412>
- <https://spot.ac/blog/supporting-twice-exceptional-children-a-guide-for-parents-and-educators>
- <https://spot.ac/blog/supporting-twice-exceptional-children-a-guide-for-parents-and-educators>
- <https://www.unicef.org/education/inclusive-education>
- <https://www.heischools.com/blog/defining-special-needs-inclusion-in-early-childhood-education>
- <https://sgtuniversity.ac.in/education/blogs/exploring-emerging-trends-in-special-education>
- <https://www.google.com/imgres?imgurl=https%3A%2F%2Fwww.shutterstock.com%2Fimage-vector%2Fkids-different-nationalities-painting-drawing-260nw-1490546810.jpg&tbnid=D0KewS2bBRq4AM&vet>

15.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. सहयोग शिक्षण के लिए प्रयुक्त होने वाले सह शिक्षण मॉडल की व्याख्या कीजिए ।
2. प्रारंभिक हस्तक्षेप से आप क्या समझते हैं? समावेशी शिक्षा में इसकी क्या भूमिका है?
3. दोहरा अपवादात्मक बच्चों से आप क्या समझते हैं? इन बच्चों के जीवन में सहायक तकनीकी की क्या भूमिका है?

4. समावेशी शिक्षा में वर्तमान के रुझान और भावी सम्भावनाओं पर चर्चा कीजिए I